दो खुदाई ख़िदमतगार

लेखक—महादेव देशाई

भूमिका लेखक—महात्मा गांधी

इस पुस्तक मे दो पठान-वीरो खान अब्दुलगफ्फारखा तथा उनके बडे भाई डा० खानसाहब के जीवन का सक्षिप्त इतिहास है।

खान अब्दुलगफ्फारखा ने अपने जीवन मे महात्मा गाधी की नीति का किस यत्न से अनुसरण किया है। इस बात पर पुस्तक काफी प्रकाश डालती है। खानसाहब प्रत्येक प्रश्न को धर्म की निगाह से देखते है। उन्हीके शब्दो में विस्तार से पुस्तक के एक विशेष प्रकरण में इस विषय की चर्चा की गई है। किन्तु धार्मिक स्वतन्त्रता के विषय मे उनकी स्पष्टवादिता आजकल की परिस्थिति में एक मवत्त्व 'की चीज है।

पुस्तक मे कई ऐसी घटनाओ का उल्लेख है जिनका जनता को आज तक पता न था। उदाहरणार्थ, हाजी तुरग-जई के साथ उनका जो सम्बन्ध बताया जाता है उसमे क्या सचाई थी, इसका प्रामाणिक उत्तर इसी पुस्तक में मिलता है।

नवयुग-साहित्य माला—५

संसार के महान् साहित्यिक

[नोबेल-पुरस्कार-विजेता साहित्यिक महारथियों और उनकी रचनाओं का परिचय]

—:+:—

लेखक—

ठाकुर राजबहादुर सिंह

[सुल्तानपुर—अवध]

प्रकाशक—

नवयुग-साहित्य-मन्दिर,

पोस्ट बक्स ७८,

दिल्ली

—:○:—

संसार के महान् साहित्यिक

जिनके प्रोत्साहन से मैं

साहित्य-क्षेत्र में अवतीर्ण हुआ था

उन्हीं को

समर्पित

—राजबहादुर

आधार-ग्रन्थ

1. The Nobel Prize Winners in Literature,
   By A R Marble

2. The Story of Nobel Prize Winners.
   By A K Seyne

3 The Encyclopedia Britanica

२—अंग्रेज़ी, हिंदी, गुजराती तथा बॅगला की अनेक मासिक पत्रिकाएँ ।

प्रकाशक का निवेदन

हमने अपनी पुस्तकमाला के पहले पुष्प—'पिता और पुत्र' द्वारा घोषित किया था कि हमारा विचार समस्त संसार की सर्वोत्कृष्ट साहित्यिक कृतियो को हिन्दी-जगत् के सम्मुख उपस्थित करने का है, किन्तु इसके लिये पाठको की पर्याप्त सहानुभूति और उनका क्रियात्मक सहयोग अनिवार्य है। हमनें अब तक जिन चार पुस्तको का प्रकाशन किया है वे साहित्य की उच्चतम श्रेणी मे रखी जानेके योग्य होते हुए भी हिन्दी-ससार द्वारा उतनी द्रुत गति से नही अपनायी गयी है जितनी कि हमें आशा थी—इसीलिये हमने पहले ससार के महानतम साहित्यिको की रचनाएँ न पेश करके उनके जीवन और उनकी रचनाओ का सक्षिप्त परिचय देकर हिन्दी के साहित्य-क्षेत्र को इस ओर कुछ झुकाकर तब उनकी बडी-बडी रचनाओ का अनुवाद पाठको की सेवा मे उपस्थित करने का निश्चय किया है, क्योकि हमारे विचार से किसी महान् कला-कृति को पाठको के हाथ मे रखने के पूर्व यदि उसका अल्प परिचय देदिया जाय, तो उससे पाठको का कार्य अधिक हल्का हो जाता है और उनके मन में आनेवाली वस्तु के प्रति उत्सुकता और अनुराग उत्पन्न होजाता है।

आशा है, हमारी यह योजना पाठको के लिये रुचिकर सिद्ध होगी और वे ससार के माने हुए साहित्याचार्यो के जीवन और ग्रन्थो का परिचय प्राप्तकर वे अपने को विश्व-साहित्य के विद्यार्थी के रूप में अधिक शीघ्रतापूर्वक प्रस्तुत कर पायेगे।

—प्रकाशक

दो शब्द

मानव-समाज की विचार-धारा की दिशा बदल देने मे यदि सबसे अधिक हाथ किसी वस्तु का है तो वह है साहित्य । यह सच है कि राजनीतिक अवस्थाओ के परिवर्तन का प्रभाव भी मानव-समाज पर पडता है, पर वह प्रभाव मुख्यतया उसके वाह्य मन स्तर तक ही रहता है । घोर से घोर राजनीतिक उत्पीडन भी मानव समाज के आन्तरिक सास्कृतिक स्तर तक अपनी छाया नही डाल सकता । यही कारण है कि भारत, चीन, मिस्र आदि ससार के प्राचीनतम देश असख्य विकट राजनीतिक झकोरो के चपेट खाते हुए भी अब तक अपनी आन्तरिक सस्कृति कायम रखे हुए है । इन देशो के जन-समुदाय के जीवन-पथ की दिशा वदलने मे राजनीतिक उथल-पुथल ने सफलता क्यो नही प्राप्त की ? उनके जीवन का मौलिक विधान परिवर्तित क्यो नही हो गया ? इन प्रश्नो का उत्तर सोचते समय हमारा मन मुख्यतया उनके साहित्य की ओर केन्द्रीभत हो उठता है, क्योकि सस्कृति के निर्माण और स्थिरीकरण मे सब से बडा हाथ साहित्य का होता है ।

साहित्य-द्वारा मानव-समाज का सर्वोत्तम रूप से कल्याण करने की बात सोचकर ही अलफ्रेड नोवेल ने अपने गाढे पसीने की कमाई साहित्य-सेवियो की सेवा के लिये जमा करादी थी और एक ऐसे स्थिर कोश का निर्माण कर दिया था जिसके घटनें की सम्भावना नही है । कहने की आवश्यकता नही कि इस अनन्त लोकोपकार से ससार तिहाई शताब्दी से जो लाभ उठ रहा है उसकी जोड का

और कोई साहित्यिक आयोजन अबतक ससार मे नही हुआ है। प्रतिवर्ष पुरस्कार देने मे उम्मेदवार के देश, जाति, धर्म और भाषा आदि पर विचार न करके केवल उसकी रचना का गुण और आदर्श देखकर ही निर्णय किया जाता है। किन्तु कुछ भी हो, हमे यह स्वीकार करना पडेगा कि मानव मस्तिष्कमे सकीर्णता के भाव किसी-न-किसी मात्रा मे आ ही जाते है। यही कारण है कि आरम्भ मे यह पुरस्कार अधिकाश रूप मे पश्चिमी यूरोप के ऐसे लेखको को प्रदान किये गये जिनकी रचनाओ मे प्रकारान्तर से 'मिशनरीपन' पाया जाता था। इस 'मिशनरीपन' को ही उन दिनो आदर्श माना जाता था। इसीलिये बादमे जब यह पुरस्कार ऐसे व्यक्तियो को दिया जाने लगा जिनमे 'मिशनरीपन' कम साहित्यिकता अधिक थी, तो थोडे दिनो तक बहुत चिल्ल-पो और मची और पुरस्कार प्रदान करनेवाली समिति को नोवेल के वसीयतनामे मे आये हुए 'आदर्शपूर्ण साहित्य' की व्याख्या करनी पडी। तब से धीरे-धीरे इस पुरस्कार की दिशा कुछ-कुछ परिवर्तित हो चली और 'आदर्श' का अर्थ सकीर्ण मिशनरीपन से कुछ विस्तृत समझा जाने लगा। फल-स्वरूप अन्य देशो के उपेक्षित साहित्यिको को भी इससे लाभ उठाने का अवसर मिला। अमेरिका को तो यह पुरस्कार मिला ही नही था। १९३० ई० मे समिति ने पुरस्कार प्रसिद्ध अमेरिकन औपन्यासिक सिंकलेयर लुई को देकर अपनी उस सकीर्णता की बेडी तोड़ दी। इस प्रकार ज्यो-ज्यो समय बीतता जा रहा है, और नोवेल-पुरस्कार की साहित्यिक समिति के निर्णय-कर्त्ताओ के व्यक्तियो मे परिवर्तन होता जारहा है तथा आधुनिक ढग के युवक साहित्यिक उसमे प्रविष्ट हो रहे है त्यो-त्यो उसका

क्षेत्र अधिक व्यापक होता जा रहा है । अभी तक रूस जैसे उच्चतम कोटिके साहित्यिक देश को यह पुरस्कार मिला ही नही, यद्यपि १९३३ ई० मे बुनिन महोदय को पुरस्कार देकर पुरस्कार समिति ने अपना कलक धो दिया है, पर साहित्यिक जगत् इस बात से भली भाति अवगत है कि बुनिन महोदय रूस के प्रतिनिधि-लेखक नही माने जा सकते । इसका कारण यह है कि एक तो रूस कथा-साहित्य-प्रधान देश है, और बुनिन महोदय केवल कवि है, कथाकार नही । दूसरे उन्हे पुरस्कार भी तभी मिला है जब रूस के बोलशेविक आन्दोलन के समय रूस से भागकर फ्रास आजानें के बाद वे फ्रास के नागरिक बन गये और फ्रास मे ही रहने लगे । पुश्किन से लेकर गोर्की तक रूसने अनेक ऐसे साहित्यिक पैदा किये है, जिनकी गणना अपने समय मे ससार के उच्चतम लेखको मे की जा सकती है, फिर भी इतने दिनो तक रूस की ओर उपेक्षा-भाव ही बना रहा । इसी प्रकार अमेरिका भी अबतक पुरस्कारदात्री समिति की ओर से उपेक्षा का ही पात्र बना रहा है और अब बहुत आन्दोलन के बाद पहले-पहल अमेरिकन साहित्यिक सिंकलेयर लुई को पुरस्कार प्रदान किया गया । जो हो, लक्षण शुभ है । परिवर्तन वाञ्छनीय है । धीरे-धीरे समितिका दृष्टिकोण बदलता जा रहा है और यह वास्तव में एक अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक महामण्डल के रूप मे परिवर्तित होता जा रहा है । यदि यही गति रही तो आगामी पच्चीस वर्षो मे शायद समिति वही रूप ग्रहण कर लेगी जिसके लिये आज सभी सत्साहित्यिक आतुर हो रहे है और नोबेल-महोदय का यह आदर्श कार्य ससार मे और भी व्यापक रूप में प्रकट हो जायगा ।

ऊपर जिन त्रुटियो का वर्णन किया गया है उनके होते हुए भी इसमे निस्सन्देह नही कि इस प्रकार का और कोई भी पुरस्कार ससार-भर मे प्रचलित नही है और अभीतक यह पहली ही सस्था है जो साहित्यिको को इतनी वडी आर्थिक सहायता देने के निमित्त चल रही है। यह बात भी निर्विवाद है कि इस पारितोपिक द्वारा पुरस्कृत साहित्यिक यदि अपने समकालीन साहित्यिको मे सर्वश्रेष्ठ नही, तो सर्वश्रेष्ठो मे अवश्य माने गये है। ऐसी दशा मे उनके जीवन तथा उनकी रचनाओ का परिचय प्राप्त करना विश्व-साहित्य के विद्यार्थियो के लिये अनिवार्य है। यही समझकर मैंने इनके सम्बन्ध मे पुस्तक लिखने का साहस किया है। जहातक मेरा ज्ञान है इस सम्बन्ध मे 'माधुरी' मे वर्षों पहले एक सक्षिप्त लेखमाला प्रकाशित होजाने के अतिरिक्त हिन्दी मे कोई पुस्तक प्रकाशित नही हुई। यह पुस्तक लिखने में मैंने प्रधानत एनी रसेल मार्बिल की 'नोबेल प्राइज विनर्स इन लिटरेचर', श्री सेन की 'स्टोरी आफ नोबेल प्राइज विनर्स' 'दि सर्वे आफ वर्ल्ड लिटरेचर' (पत्रिका) 'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' 'रिव्यू आफ रिव्यूज' एव 'माडर्न रिव्यू' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ आदि से पर्याप्त सहायता ली है अतः मै इन ग्रथो के रचयिताओ तथा पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादको का आभार मानता हूँ। केवल अग्रेजी ग्रथो से ही सहायता ले सकने और फ्रेंच, जर्मन, स्वीडिश, स्पेनिश और इटैलियन आदि यूरोप की अन्य भाषाओ का ज्ञान न रखने के कारण मुझे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडा है। कुछ कथानक-पात्रो के नामोच्चारण मेरे विचार से, उन देशो के प्रकृत उच्चारण के अनुसार नही लिखे जासके जहा की वे घटनाएँ है।

यदि मैं उपर्युक्त भाषाओ के मौलिक ग्रथ पढकर उनपर से यह पुस्तक लिख सकता तो यह सकलन कही अधिक सुन्दर और प्रामाणिक होता, किन्तु हिन्दी-लेखको मे कदाचित् एक भी ऐसा नही है जो उपर्युक्त सभी भाषाओ का सम्यक् रूपेण ज्ञान रखता हो, अत इसके लिये प्रतीक्षा करना कि कोई इन भाषाओ का पण्डित ही ऐसी पुस्तक लिखे, वहुत विलम्ब का कारण होता और हिन्दी-जगत् ससार के साहित्यिको का इस रूप में शीघ्र परिचय न प्राप्त कर सकता।

पुस्तक कैसी हुई है और इसके लिखने मे कितना परिश्रम उठाना पडा तथा साधन उपलब्ध करने के लिये कितना कष्ट उठाना पडा, यह सव वतलाना मेरा काम नही। इसका सारा श्रेय प्रकाशको को है।

आशा है हिन्दी के पाठक इस पुस्तक द्वारा ससार के प्रमुख साहित्यिको और उनकी रचनाओ का परिचय पाकर अपने दृष्टि-कोण को अधिक विस्तृत वनायेंगे और हिन्दी मे भी वह दिन लाने का प्रयत्न करेंगे जव हमारे देश के धनी-मानी, सेठ साहूकार और राजे-महाराजो में से कोई ऐसे पुरस्कार की योजना करेगा जिसके लिये वाईस करोड जन-समाज के द्वारा समझी और बोली जानेवाली हिन्दी गौरव से अपना मस्तक ऊँचा कर सके।

श्री वेंकटेश्वर प्रेस, वम्बई,
गगा दशहरा, १९९२ वि०

—राजबहादुर सिंह

PREFACE

The informative process is the bulwork for rectitude and rectitude is the structural basis for erudition. One of the main functions of the educative process is to widen the informative horizon and the literature serves this purpose.

While much has been said about Hindi as the most suitable *media* for inter-racial communication, a kind of *Lingua Indica* for India, hardly anything is done philologically to raise and maintain the standard of the language which should enable it to interpret the idealogies of the other civilised languages of the world To take the intention for the deed is a common foible of the Indian leaders.

A book like the present volume is, therefore, welcome at this juncture It enables one to have a more than speaking acquaintance with the literatis of the world Those that have neither the time nor the wherewithal to peruse individual works of each of the Nobel prize winning masters

can enjoy short, trenchant extracts of every one of them in one volume.

It is customary to focus a lime-light of approbation on any subject-matter dealt in a book form. I do not consider it either right or just to the reader to screen off the shortcomings of the Nobel Prize Society. But instead of unnecessary prolongation of the dark side, in the limited space at hand, I postulate the following comments and leave it to the readers to form their own impressions. Like all human institutions, the Nobel Prize Society is a conservative one, and like all human achievements, whoever can make enough noise to attract its attention and retain it, receives this coveted award.

No sponsor of radical thoughts has ever received the Nobel Prize. It is not surprising when it is known that the professors of Swedish University and the librarians with the King at their head constitute the Nobel Prize Committee, none of whom noted for any literary achievements. Many of the awards have been given to the authors for their works in the remote past and it is only recently

that America has begun to receive the Nobel Prize, although scores of American authors, unsurpassed by any, in any line of thought in the world have been in existence for years.

This peculiarity of the Nobel Prize Society proves the usual red tape found in the most of the institutes and drives one to conclude that it requires sufficient and presistent noise, to make its way to the attention of the prize giver.

I personally know of a couple of aspirants who, after presistently besieging the members of the Nobel Prize Society and after spending a considerable sum of money in dinners, parties and advertisement, ultimately received this much coveted prize. One writer has actually commented on the particular attitude of the Nobel Prize Society by stating that the Nobel Prize is a tombstone rather than a stepping stone for the literatis—considering the fact that Nobel was inventor of Dynamite it is quite in the fitness of things that his prize should be a tombstone. Yet with all its drawbacks, Nobel Prize

Society was founded with an ideal and is the richest award in the world for the lucky. Whenever any writer receives this award, all his works are translated into every civilised language of the world, and the news press, magazines and all periodicals rush against time to give due publicity to the lucky man. In this way, discounting all its usual human drawbacks, the Society is still doing an immense service to the followers of Saraswati, who are seldom in the good books of Lakshmi.

For the Hindi reading public, this volume is a rare treat as it enables him to understand that, inspite of geographical and racial barriers, there is an under-current of unity and uniformity in all human beings.

When I was called upon to write a preface to the present volume, I considered it to be a translation or at most a compilation. But when I actually read it, I was pleasurably surprised to find the original contribution of the author scattered through the pages.

The author, whose versatile genius is well-known to the Hindi world, has remoulded the ideations of the foreign savants into Hindi matrices of thoughts, a feat, difficult of achievement, considering the varieties of subjects handled. The Hindi readers can take a trip into the realms of imaginative reality unhampered by geographical barriers with the best literary savants of the world as their guide. From the snowy peaks of Scandinavia where Aurora Borialis in the back ground illuminates the peasant life with its soft chromatic effulgence to the temperate zone of Sardinia fisheries, through the psychological complexes of Henry Bergson, where all the tangles of knotty living phenomenon of life are laid threadbare, the reader soars upwards through the metaphysical clouds and mystic miasma to the very brink of Tagorian eternity.

Those that have more leaden feat can be anchored more securely to the earth with Kipling's materialism and human averages of Sinclair Lewis, or perchance in the quest of Norm, one can rush through

the busy cone of life with Bernard Shaw and if the going is too arduous, rest a while with Anatole France and assuage one's thirst of knowledge and become more human.

SUKUMAR CHATTERJI,
Member of the International
Journalistic Association,
Washington, U. S. A.
Associate Member of the
Authors' Club,
California. U. S. A
Sub-Editor, " The Fatherland "
California. U S. A.
AND
National Lecturer for
Fiat Lux Society,
California, U. S. A

भूमिका

इन्द्रिय-ग्राह्य वस्तु और विषयो का निर्वाचन सम्यक् बोध का सहारा होता है। सम्यक् बोध ही प्रज्ञा की भित्ति है और यही शिक्षा-प्रणाली का चरम ध्येय है। इस प्रकार जगत् का विस्तार शिक्षा-प्रणाली का उद्देश्य है और साहित्य इस उद्देश्य की सम्यक् रूप से पूर्ति करता है।

हिन्दी राष्ट्रभाषा होनी चाहिए, इस विषय पर बहुत कुछ कहा जा चुका है, परन्तु हिन्दी को भाषा-विज्ञान के अनुसार उच्च कोटि तक पहुँचाने का कोई ऐसा यत्न नही किया गया है जिससे ससार की उन्नत भाषाओ मे व्यक्त किये हुए विचारो को हिन्दी भाषा पर्याप्त रूप से अपना सके। भारतीय नेताओ में शाब्दिक आलोचनाओ को कार्य-कुशलता समझने का रोग-सा हो-गया है और इसीलिये किसी भी कार्य के विषय में वागाडम्बर को वे कर्म-समाधान का रूप समझकर उसे कार्यरूप मे परिणत न करके सन्तोष कर लेते है।

इस पुस्तक का प्रकाशन समयोचित है। घर-बैठे हिन्दी-पाठक ससार के साहित्यिको से परिचय प्राप्त कर सकते है। ऐसे पाठको के लिये, जिनके पास न इतना समय ही है न साधन ही कि वे नोबेल-पुरस्कार-प्राप्त लेखको की वैयक्तिक कृतिया एक-एक करके पढ सके, इस पुस्तक में प्रत्येक लेखक के जीवन की सक्षिप्त कथा और उनकी कृतियो का साराश उपयुक्त एव सक्षिप्त रूप में दिया गया है।

रूढि के अनुसार पुस्तक की भूमिका में आलोच्य विषय के ऊपर उज्ज्वल रश्मि-क्षेपण उचित समझा जाता है। परन्तु मैं इसे पाठको के प्रति अन्याय किया जाना समझता हूँ कि नोवेल-पुरस्कार समिति की त्रुटियो पर पर्दा डाल दिया जाय। इन सीमित पृष्ठो पर केवल नोवेल-पुरस्कार की त्रुटियो का दिग्दर्शन कराकर पुस्तक के कलेवर को बढाना उचित न समझकर सक्षेप मे दो-चार ऐसी बाते बतला देता हूँ जिससे पाठक स्वय उसके गुण-दोष का अनुमान कर ले।

सभी मानवीय सस्थाओ की भाति नोबेल प्राइज सोसाइटी की दृष्टि भी सकुचित है और सभी मानवीय कृतियो की तरह जो कोई उसको अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए यथेष्ट आडम्बर रचे, और उसे स्थिर रख सके, वही इस वाञ्छनीय पुरस्कार को प्राप्त करता है। किसी भी क्रान्तिकारी विचारक को नोबेल-पुरस्कार प्राप्त नही हुआ। इसमे आश्चर्य की कोई बात नही है, क्योकि नोबेल पुरस्कार समिति के सदस्यगण स्वीडन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर और पुस्तकाध्यक्ष हैं। और उसके प्रधान स्वय स्वीडन-नरेश हैं। इनमे से किसी का भी साहित्य-क्षेत्र मे नाम नही है। बहुत-से लेखको को उनकी सुदूर-अतीत की रचना के लिए पुरस्कार दिये गये हैं। यद्यपि बीसो अमेरिकन लेखक सभी विषयो मे ससार के लेखको से श्रेष्ठतर हो गये है तथापि अभी कुछ ही वर्ष से अमेरिकनो के लिये इस पुरस्कार का द्वार खुला है। नोबेल पुरस्कार समिति की यह विलक्षणता, अन्यान्य सस्थाओ मे जो अदूरदर्शिता, सकीर्णता आदि पाई जाती है, उनका साक्षी है और इससे सबको बाध्यत इस परिणाम

पर पहुँचना पडता है कि इसके लिए यथेष्ट और क्रमागत रूप से इतना हो-हल्ला मचाने की आवश्यकता है जिससे पुरस्कार-दाताओ का ध्यान उस ओर आकृष्ट हो सके।

इस प्रकार के दो पुरस्कार-लोलुप प्राथिओ को मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ जो अक्लान्त परिश्रमपूर्वक पुरस्कारदात्री समिति के सदस्यो को घेर-घार कर और सहभोजो तथा विज्ञापन-बाजी मे पर्याप्त धन व्यय करके तब कही इस लुभावने पुरस्कार को प्राप्त कर सके हैं। एक लेखक ने यह कहकर नोबेल पुरस्कार समिति की टीका-टिप्पणी की है कि नोबेल-पुरस्कार साहित्यको के लिए उन्नति-सोपान के बदले समाधि-शिला का काम देता है। इस बात को ध्यान मे रखते हुए कि नोबेल महोदय विस्फोटक पदार्थों के आविष्कारक थे यह समीचीन प्रतीत होता है कि उनका पुरस्कार समाधि-शिला से सम्बन्ध रक्खे।

इन समस्त त्रुटियो के होते हुए भी यह कहना पडेगा कि नोबेल-पुरस्कार समिति एक आदर्श लेकर स्थापित हुई थी और भाग्यवान साहित्यको के लिए यह ससार का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार है। जब कभी किसी लेखक को यह पुरस्कार मिलता है तो उसकी सारी कृतिया ससार की प्रत्येक उन्नत भाषा मे छप जाती हैं और सब प्रकार के समाचार-पत्र और पत्रिकाएँ उस भाग्यशाली पारितोषिक प्राप्तकर्त्ता का परिचय देनें के लिए व्यस्ततापूर्वक दौड पडते हैं। इस प्रकार इस सस्था की सभी मानवीय त्रुटियो को देखते हुए भी वह मानना पडेगा कि फिर भी यह समिति सरस्वती के उपासको की सेवा कर रही है जो कभी भूले भटके ही लक्ष्मी के कृपा-कटाक्ष की कोर प्राप्त कर सकते हैं।

हिन्दी-पाठको के लिए यह पुस्तक दुर्लभ उपयोग की वस्तु है, क्योकि इससे वे समझ सकते हैं कि भौगोलिक और जातीय पार्थक्य के होते हुए भी समस्त मानव जाति मे एक अन्तर्निहित एकता और सामजस्य है ।

जब मुझसे इस पुस्तक की भूमिका लिखने को कहा गया तो मैंने यह समझा था कि यह किसी अग्रेजी पुस्तक का अनुवाद या सकलनमात्र होगा, किन्तु जब मैंने इसे पढा तो मुझे यह जानकर हर्ष-युक्त आश्चर्य हुआ कि इसमे लेखक की मौलिक कृतियो की बानगी यत्र-तत्र फैली हुई है । लेखक ने, जिसकी सर्वतोमुखी प्रतिभा से हिन्दी-ससार परिचित है, देश-देशान्तर के पण्डितो की विचार-धाराओ को अवरुद्ध करके हिन्दी-भाषियो की उपलब्धि की ओर प्रचलित कर दिया है । विपयो की विभिन्नता को देखते हुए यह कार्य कितना कठिन था, इसका अनुमान किया जा सकता है ।

हिन्दी-पाठक कल्पना-राज्य के वास्तविक जगत् मे ससार के सर्वोत्कृष्ट प्रतिभाशाली लेखको को अपना पथ-प्रदर्शक बनाकर देश काल की परिधि का उल्लघनकर विचरण कर सकते हैं । स्कैण्डेनेविया के हिमवेष्ठित शिखर से, जहा उत्तरी ध्रुव की दिग्दाहमय ज्योति ग्रामीण जीवन पर अपना निर्मल सुहासित प्रकाश डालती है, समशीतोष्ण कटिबन्धस्थित सार्डीनिया द्वीप के मत्स्यजीवी निवासियो तक, अथवा हेनरी बर्गसन के मनोवैज्ञानिक समस्याओ की उलझन मे से होकर, जहा कि प्रकृति के जीवन-रहस्य की गुत्थियो को सरलता-पूर्वक सुलझाया गया है, पाठक आधिभौतिक, काल्पनिक मेघमालाओको भेदकर रवीन्द्रनाथ

के 'भूमा सैकत' की रहस्यपूर्ण लीलाओ का आस्वादन करते हुए अनन्त की ओर जा सकते हैं। जो काल्पनिक उडान मे अशक्त हो और जिसके पैर स्थूलवादिता के गुरुत्व से जकडे हुए हो वह किपलिग की पार्थिवता और सिंकलेयर लुइस के मनुष्योचित व्यवहारिक जीवन-परिचय का आधार ले सकते हैं अथवा प्रकृति के स्वत्त्व की खोज मे पाठक जीवन-सग्राम की अस्तव्यस्तावस्था के भीतर से बर्नार्ड शा के साथ चल सकते हैं और यदि यह यात्रा अत्यधिक कष्टप्रद प्रतीत हो तो थोडी देर के लिए अनातोल फ्रास के साथ विश्राम ले सकते हैं तथा अपनी ज्ञान-पिपासा तृप्तकर वास्तविक मनुष्यता प्राप्त कर सकते हैं।

सुकुमार चट्टोपाध्याय

सयुक्त–सम्पादक,
'दि फ़ादरलैण्ड,'
केलीफोर्निया, (अमेरिका)

लेक्चरर,
'दि फ्रायट लक्स सोसाइटी'
केलीफोर्निया, (अमेरिका)

मेम्बर,
'इन्टर्नेशनल जर्नेलिस्टिक एसोसिएशन'
वाशिगटन, (अमेरिका)

सूची

पृष्ठ

श्री० अल्फ्रेड नोबेल और उनका पुरस्कार

भारत के साहित्यिकों में—विशेषकर हिन्दी के साहित्यिकों मे—अभीतक नोबेल महोदय और उनके पुरस्कार के सम्बन्ध मे बहुत थोडा ज्ञान फैल पाया है। वास्तव मे कवि-सम्राट् श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर और विज्ञान-विशारद चन्द्रशेखर व्यंकट रामन् को नोबेल-पुरस्कार मिलने के पूर्व बहुत थोड़े भारतीयों को इस बात का ज्ञान था कि नोबेल-महाशय कौन थे और उपर्युक्त पुरस्कार कहाँ से और क्यों दिया जाता है। इधर इन दो भारतीयों को यह पुरस्कार मिलने के कारण हमारे देश में उसकी काफी चर्चा हुई और समय-समय पर हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं में इनके सम्बन्ध में थोड़ा-बहुत इसका उल्लेख होता

रहा। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने तो एक प्रकार से नोबेल-पुरस्कार का अनुकरण भी कर डाला है और स्वर्गीय श्री मंगलाप्रसादजी के नाम पर प्रतिवर्ष पारितोषिक देने का प्रबन्ध कर लिया है। किन्तु अभीतक हिन्दी के पाठक पाठिकाओं को जगत्प्रसिद्ध नोबेल-महोदय के सम्बन्ध में बहुत अल्प —लगभग नहीं के बराबर—ज्ञान है।

पुरस्कार-विजेताओं और उनकी रचनाओं का परिचय देने के पूर्व हम यहाँ नोबेल-महोदय और उनके नाम पर प्रचलित पुरस्कार के सम्बन्ध में कुछ विस्तृत रूपमें बतला देना चाहते हैं।

वंश-परिचय

नोबेल महोदय का पूरा नाम अल्फ्रेड वर्नार्ड नोबेल था। इनके पूर्वजों की पारिवारिक अल्ल 'नोबिलियस' थी। इनके पितामह इमानुएल फौजी डाक्टर थे और वे अपनी अल्ल को बदलकर 'नोबेल' लिखने लगे थे। अल्फ्रेड नोबेल के पिता युवावस्था में स्टाकहोम में विज्ञान के शिक्षक थे। उनकी अभिरुचि आविष्कार करने की ओर विशेष थी, इसलिये उन्होंने विस्फोटक पदार्थों के सम्बन्ध में प्रयोग करने आरम्भ कर दिये और संयोगवश चीर-फाड़ में काम आनेवाले यंत्रों तथा रबड़ के ऐसे गद्दों के निर्माण करने के लिये नक्शे बनाने मे सफल हुए जो आहतों और रोगियों के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकते थे। जहाजों की निर्माण-कला मे भी वे काफी

दिलचस्पी लेते थे और इस सम्बन्ध में उन्होंने अपना कुछ समय मिस्र में व्यतीय किया था। प्रयोग के समय विस्फोटक पदार्थों द्वारा उन्हे बड़ी हानि पहुँची थी। इस प्रकार का पहला विस्फोट १८३७ ई० मे स्टाकहोम में हुआ था, जिसके बाद वे अपने मित्रों के परामर्श से रूस चले गये। रूसमें उन्हे सामुद्रिक खानों मे प्रयोग करने की नौकरी मिल गयी। क्रीमिया के युद्ध के बादतक वे सपरिवार वहीं रहे, और जल-सेना के लिए युद्धोपयोगी रासायनिक आविष्कार करते रहे। जब वे सपरिवार स्वीडन लौटने लगे, तो उनका बडा लडका लडविग रूसमें ही रह गया। लडविग रूसमें प्रख्यात इंजीनियर बन गया और उसने बाकू में तेल की कई खानों का पता लगाया।[१] दूसरी बार स्वीडन के एक कारखाने मे १८६४ ई० में फिर एक भयंकर विस्फोट हुआ, जिसमे उनके छोटे लडके की मृत्यु हो गयी और उनके पिता को ऐसी चोट आयी, जिससे वे अपने शेष जीवन-भर रोगी बने रहे।

जन्म और शिक्षा

अल्फ्रेड बर्नार्ड नोबेल का जन्म १८३३ ई० में स्टाकहोम मे हुआ था। वह अपने भाइयों की अपेक्षा कम हृष्ट-पुष्ट थे, उनमे स्नायुविक दुर्बलता थी और वे कोमल प्रकृति के थे। वे जीवन भर सिर-दर्द से रुग्ण रहे। उनकी माता कैरोलाइन हेनरीट

---

[१] "वेस्ट मिनिस्टर रिव्यू" के १५६ वे और ६४२ वे अङ्कों में प्रकाशित लेख।

आलसिल उन्हे बड़ा प्रेम करती थीं और बचपन से ही वे उन्हे वीर और बुद्धिमान मनुष्यों की कहानियाँ सुनाया करती थीं। बुद्धिमती माता को मानो पहले ही इस बात का पता लग गया था कि अस्वस्थ प्रकृति का होते हुए भी उनका पुत्र किसी दिन एक महान् पुरुष बनेगा। अल्फ्रेडने अपना विवाह नहीं किया, यद्यपि उनका एक लडकी से प्रेम होगया था, जो अपनी तरुणावस्था मे ही इस संसार से चल बसी थी। वे अन्ततक अपनी माता के भक्त बन रहे। वयःप्राप्त होकर जब वे विदेशों में रहने लगे, तो प्रायः अपनी माँ को बड़े ही प्रेम-पूर्ण पत्र लिखा करते थे और कभी-कभी स्वीडन जाकर उनके दर्शन कर आया करते थे।

अपने पिता की तरह अल्फ्रेड ने भी रसायन, प्रकृति-विज्ञान, और यांत्रिक शिल्प का अध्ययन करने में काफी दिलचस्पी ली। लगभग सत्रह वर्ष की ही अवस्था में उनका ध्यान जहाज के निर्माण की ओर गया और वे उसके यंत्रों आदि का यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करने के लिये अमेरिका भेजे गये। अल्फ्रेड के पिता ने उन्हे इरिक्सन नामक अपने एक स्वदेश-वासी के पास भेजा, जो उन दिनों सूर्य की गर्मी से इंजन चलाने के सम्बन्ध मे कुछ प्रयोग कर रहे थे। अल्फ्रेड ने लगभग एक वर्ष वहाँ रहकर इरिक्सन को उनके आविष्कार में सहायता दी। इरिक्सन के भाग्य मे उन दिनों परि-वर्तन आरम्भ होगया था। १८४९ ई० मे उनके पास

१३२ डालर* की सम्पत्ति शेष थी, और उस साल उन्हे कुल २,००० डालर की आमदनी हुई थी। किन्तु दो ही वर्ष वाद उनके पास ८७०० डालर के लगभग रकम इकट्ठी हो गयी। इस बीच उन्होंने बहुत से नये आविष्कार करके उनके अधिकार बेच दिये थे और स्वीडन-सम्राट् से उन्हे इस सफलता के लिये बधाई प्राप्त हुई थी। किन्तु १८५३ ई० मे जब इरिक्सन की ५ लाख डालर की विपुल सम्पति की लागत से उनका नवाविष्कृत इंजन लगाकर तैयार किया हुआ 'दी इरिक्सन' नामक जहाज, जिसे उन्होंने कितने ही वर्षों के लगातार अध्यवसाय के बाद तैयार किया था, परीक्षा के समय समुद्र मे डूब गया, तो इरिक्सन का दिल टूट गया। फिर भी इरिक्सन ने साहस नहीं छोडा और 'दी मानीटर'-नामक एक दूसरा जहाज बनाने का नकशा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सरकार को उन्होंने दे दिया, जिसके निर्माण के फल-स्वरूप उपर्युक्त सरकार को बडी सफलता मिली।†

अल्फ्रेड नोवेल के दुर्बल स्वभाव पर श्री इरिक्सन के इस भारी उत्थान और पतन का गहरा प्रभाव अवश्य पडा होगा। कदाचित उसी समय नवयुवक नोवेल ने यह विचार किया होगा कि वैज्ञानिकों की सहायता के लिये कुछ ऐसा धन-

* डालर आजकल लगभग तीन रुपये के बराबर होता है।

† The Life of John Ericsson by W C. Church, New york. 1901

कोश होना चाहिए, जिससे, परीक्षा के समय असफल हो जाने पर, उन्हे कुछ आर्थिक सहायता मिल सके। जब वे स्वीडन और रूस को लौटे, तो विस्फोटक पदार्थों की निर्माण-क्रिया में अपने पिता और भाइयों के हाथ बटाने लगे। अल्फ्रेड नोबेल अब इसी खोज में लग गये कि किसी ऐसे विस्फोटक पदार्थ का निर्माण होना चाहिए, जो अधिक शक्तिशाली होते हुए भी कम खतरनाक हो। सन् १८५७ ई० में उन्होंने पीटर्सबर्ग में वाष्प-मापक-यंत्र बनाया और उसके निर्माणाधिकार की रजिस्ट्री अपने नाम से कराली। कई लेखकों का कथन है कि 'डाइनामाइट'-नामक प्रबल स्फोटन-शील द्रव्य का आविष्कार उन्होंने अन्य परीक्षणों के समय सन् १८६५-६६ ई० में संयोगवश कर लिया था। इस आविष्कार के पश्चात् अतुल धन कमाने की आशा से उन्होंने कई देशों मे इसके निर्माण के लिये कारखाने खोलने के लिये उनकी सरकारों से प्रार्थना की और फ्रास के बैंकवालों से यह कहकर ऋण माँगा कि उन्होंने एक ऐसा पदार्थ तैयार किया है, जिससे संसार को उड़ा दिया जा सकता है, किन्तु बैंकवालों ने रकम देने से इन्कार कर दिया।

सफलता और अन्त

अन्ततः नैपोलियन तृतीय ने नोबेल के इस आविष्कार में दिलचस्पी ली और फ्रास में कारखाना खोलने के लिये नोबेल को कुछ रकम दे दी। 'डाइनामाइट' के कुछ न ने थैले में

बन्दकर अल्फ्रेड नोबेल उसके व्यापार के सम्बन्ध में अमेरिका गये। न्यूयार्क के होटलों ने डरते-डरते उन्हे अपने यहाँ ठहराया, क्योंकि उनके विस्फोटक पदार्थों की चर्चा वहाँ पहले ही से हो चुकी थी। न्यूयार्क से वे केलीफोर्निया गये, जहाँ इनके बड़े भाई के मित्र डाक्टर बैण्डमैन रहते थे। उनकी सहायता से नोबेल ने लास एंजेलिस* नगर के पास एक कारखाना खोल लिया। कुछ ही वर्षों में इटली, स्पेन, फ्रास, स्काटलैण्ड, इंगलैण्ड और स्वीडन मे नोबेल के कारखाने खुल गये। जिस समय अल्फ्रेड नोबेल की अवस्था चालीस वर्ष की हुई, उस समय 'जायण्ट पाउडर' नामक पदार्थ के निर्माण से उन्हे बड़ा आर्थिक लाभ हुआ। कई वर्ष पेरिस मे रहकर उन्होंने सरेश, बैलेस्टाइट और अनेक प्रकार के धूम्रहीन पाउडरों के आविष्कार के लिये रसायनशालाएँ खोलीं। इसके पश्चात् 'सैन रीमो' मे रहकर उन्होंने पेट्रोल और कृत्रिम गटापारचे के निर्माणाधिकार की रजिस्ट्री करायी। वैज्ञानिकों और शिक्षितों ने उनका बड़ा आदर किया, किन्तु अर्द्धशिक्षित और अज्ञानी लोग उन्हे भय की दृष्टि से देखते थे।

यद्यपि नोबेल-महोदय का कार्य उच्चाभिलाषा-पूर्ण था और उन्हे सफलता, धन, और प्रतिष्ठा खूब प्राप्त हुई थी, फिर भी उन्होंने विवाह नहीं किया। उनका स्वास्थ्य ऐसा खराब रहता

---

*जिसमें अब होलीवुड के नाम से ससार का सर्वश्रेष्ठ सिनेमा-केन्द्र बन चुका है।

था कि वे प्रायः सिर-दर्द से दबे-से रहते थे। फिर भी वे सिर पर पट्टी बाँधे रसायनशाला में डटे रहते थे। उन्हें इस बात का भय था कि लोग उनकी ओर केवल उनके विपुल धन के कारण आकर्षित हो रहे हैं। बैरोनेस बर्था-वोन-सटनर नामक एक महिला ने, जो कुछ दिनों इनकी सेक्रेटरी रह चुकी थीं, उनके संस्मरण में लिखा है—"वे क़द में कुछ छोटे थे; उनके रूपमें कोई विशेषता नहीं थी। वे बहुभाषाविद् और दार्शनिकतापूर्ण स्वभाव के थे। बातचीत में पटु और कहानी कहने में अद्वितीय थे। वह उच्छृङ्खल और झूठे लोगों के तीव्र आलोचक थे, और वैज्ञानिकों तथा साहित्यिकों से मिलकर प्रसन्न होते थे।"

बैरोनेस-वॉन-सटनर के संस्मरणों से इस बात का पता लगता है कि नोबेल-महोदय का उद्देश्य पुरस्कार—और विशेष करके शान्ति-सम्बन्धी पुरस्कार—का विचार निश्चित करने मे क्या था। यहाँ यह बतला देना आवश्यक है कि 'शान्ति-सम्बन्धी' पहला पुरस्कार बैरोनेस-वॉन-सटनर को उनकी प्रख्यात कहानी "हथियार फेंक दो।"* के लिये मिला था। इस कहानी मे उक्त महिला ने संसार मे शान्ति-स्थापन करने की आवश्यकता का प्रबल समर्थन किया था। इसके प्रकाशन के बाद १८९० ई० मे नोबेल महोदय ने इसकी बडी प्रशंसा की। एक अवसर पर उन्होंने कहा था कि यदि मैं कोई ऐसा यंत्र बना सकता, जिसके द्वारा युद्ध का रोकना सम्भव होता, तो

---

* Die Waffn enieder

मुझे वडी प्रसन्नता होती। ७ जनवरी, १८९३ ई० को, अपनी मृत्यु के तीन वर्ष पूर्व, उन्होंने उपर्युक्त वैरोनेस को पेरिस से लिखा था कि मैं अपने धन का एक भाग प्रति पाँचवें वर्ष शान्ति-स्थापन के लिये पुरस्कार के रूप मे देना चाहता हू और इसे तीस वर्ष तक—अर्थात् छः किस्तों मे—देना उचित होगा, क्योंकि यदि तीस वर्ष तक सव राष्ट्रों ने वर्तमान अवस्था को सुधारकर युद्ध वन्द करने का प्रवन्ध न किया, तो फिर वे असभ्य और जंगलियों के रूप में परिवर्तित हो जायँगे। नोवेल महोदय धन एकत्रित करके उत्तराधिकारियों के लिये छोड जाने के विरोधी थे।

१० अक्तूवर, १८९६ ई० को अकस्मात् 'सैन रीमो' के कारखाने मे अल्फ्रेड नोवेल का देहान्त हो गया। उन्होंने वहुत पहले से ही दुर्वलता का अनुभव करके डाक्टरों से अनिच्छा-पूर्वक परामर्श लिया था और वडी हिचकिचाहट के साथ उनके आदेशों का पालन करते थे। इस अवस्था मे भी वे दिन-भर रसायनशाला का काम करते थे। अपने अन्तिम दिनों मे ही उन्होंने अपने धन के उपयोग पर विचार किया था और अन्ततः यह निश्चय किया था कि वे अपना धन विज्ञान, साहित्य और मनुष्य जाति के कल्याणार्थ सार्वभौम शान्ति की शिक्षा के लिये व्यय करेंगे। उनके मौलिक और आदर्श दान के वसीयतनामे से सारा सभ्य संसार चकित हो उठा। जिस व्यक्ति ने इतनी सफलतापूर्वक संसार के विनाशकारक

पदार्थों का आविष्कार किया था, उसने अपना विशाल धन समस्त संसार के मंगल के लिये रचनात्मक साहित्य की सृष्टि में लगा दिया।

नोबेल-पुरस्कार का विवरण

यहाँ नोबेल-महोदय के वसीयतनामे का सारांश दिया जाता है, जिससे पाठक समझ सकेंगे कि उसमे पुरस्कार की शर्तें क्या-क्या है :—

"मैं, डा० अल्फ्रेड बर्नार्ड नोबेल, अपनी चल भू-सम्पत्ति के सम्बन्ध में, जिसका नक़्शा २७ नवम्बर, १८६५ ई० को बनाया गया था, आदेश देता हूँ कि वह रुपये के रूप में परिवर्तित करके सुरक्षित रूप मे जमा करवा दी जाय। इस प्रकार जो धन जमा होगा, उसके ब्याज से प्रति वर्ष उन व्यक्तियों को पुरस्कार दिये जायँ, जो उस वर्ष में मानव-जाति के हित के लिये सर्वोत्कृष्ट पुस्तके लिखें। ब्याज की रकम पाँच बराबर भागों में बटेगी, जिसका विभाजन निम्नलिखित ढंग से होगा—इस धन का एक भाग उस व्यक्ति को मिलेगा, जिसने प्रकृति-विज्ञान या पदार्थ-विद्या के सम्बन्ध में किसी नयी बात का आविष्कार किया होगा, एक भाग उसको मिलेगा, जिसने रसायन में किसी नये तत्त्व का उद्घाटन किया होगा, एक भाग उस व्यक्ति को दिया जायगा जिसने प्राणि-शास्त्र या औषधि-विज्ञान मे किसी नयी बात का आविष्कार किया होगा, और एक भाग उस व्यक्ति को प्रदान किया जायगा, जो

साहित्यिक-जगत् मे आदर्शपूर्ण सर्वोत्तम नूतन ज्ञान की सृष्टि करेगा; तथा अन्तिम एक भाग उस व्यक्ति को समर्पित किया जायगा, जो संसार के सब राष्ट्रों मे बन्धु-भाव और शान्ति स्थापित करने और युद्ध रोकने का सत्प्रयत्न करेगा।"

आगे चलकर उन्हों ने लिखा है—"पदार्थ विद्या और रसायन के पुरस्कार प्रदान करने का अधिकार स्टॉकहोम-स्थित 'स्वीडिश एकैडमी आफ साइन्स' को होगा, प्राणिशास्त्र और औषधि-विज्ञान-सम्बन्धी पुरस्कार स्टॉकहोम की 'कैरोलिन मेडिकल इन्स्टीट्यूट' प्रदान किया करेगी, साहित्य-सम्बन्धी-पुरस्कार देने का अधिकार स्टॉकहोम की एकैडमी (स्वेन्स्का एकैडमीन) को होगा और सार्वभौम शान्ति-सम्बन्धी पुरस्कार का निर्णय पाँच व्यक्तियों की एक समिति करेगी, जिनका निर्वाचन 'नार्वेजियन स्टॉरदिंग' के द्वारा होगा। मेरी यह विशेष इच्छा है कि पुरस्कार देने मे किसी भी उम्मेदवार के देश, जाति या धर्म आदि का विचार न किया जाय।"

इस प्रकार नोबेल महोदय की जमा की हुई सम्पत्ति २० लाख पौण्ड* से अधिक थी, जिसमें से प्रत्येक पुरस्कार मे प्रतिवर्ष ८००० पौण्ड दिये जाते है।

साहित्य-सम्बन्धी पुरस्कार मे दो शर्तें और रक्खी गयी थीं, जिनमे से पहली यह थी कि "यदि साहित्य की दो पुस्तकें पुरस्कार-योग्य सिद्ध हों, तो उपर्युक्त पुरस्कार की

---

* पौण्ड लगभग १५) के बराबर होता है।

रक़म दोनों में बराबर विभाजित की जा सकती है।" इसके अनुसार १९०४ ई० का पुरस्कार स्पेनी नाटककार जोज इशेंगरे और प्रॉवेन्स के कवि फ्रेडरिक मिस्ट्राल में बराबर-बराबर बाँट दिया गया था। इसी प्रकार १९१७ ई० में यह पुरस्कार डेन्मार्क के दो लेखकों में समान-रूप से विभाजित कर दिया गया था। दूसरी शर्त यह थी कि "यदि किसी वर्ष ऐसा परीक्षाधीन साहित्य उच्चतम कोटि का न सिद्ध हो सके, तो उस वर्ष पुरस्कार किसी को नहीं दिया जायगा और वह रक़म मूलधन में जोड़ दी जायगी।" इसके अनुसार १९१४ और १९१८ ई० में कोई साहित्यिक पुरस्कार नहीं दिया गया।

पुरस्कारों का निर्णय न्यायपूर्वक हो, इसके लिये वसीयत-नामे में यह नियम भी लिखा गया था कि इस कार्य के लिये 'नोवेलकमिटी'-नामक एक संस्था स्थापित होगी, जिसमें तीन से पाँच तक ऐसे सदस्य होंगे, जो पुरस्कार का निर्णय करेंगे। इस 'कमिटी' (समिति) का सदस्य बनने के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह व्यक्ति स्वीडन का ही नागरिक हो।

पुरस्कार के उम्मीदवार उपर्युक्त समिति से किस प्रकार लिखा-पढ़ी कर सकते हैं, इसके सम्बन्ध मे पुरस्कार-सम्बन्धी नियमावली के सातवे नियम में लिखा है कि वसीयतनामे की शर्त के अनुसार पुरस्कार के लिये उम्मीदवार का नाम किसी सुयोग्य व्यक्ति द्वारा प्रस्तावित होगा। पुरस्कार के लिये सीधे

भेजे हुए प्रार्थनापत्र पर विचार नहीं किया जायगा। 'सुयोग्य व्यक्ति' का मतलब यहाँ ऐसे मनुष्य से है, जो विज्ञान, साहित्य आदि के क्षेत्र मे प्रतिनिधित्व रखता हो, चाहे वह स्वीडन का निवासी हो, या अन्य देश का। पुरस्कार-सम्बन्धी नियमों को सर्वसाधारण में प्रचारित करने के लिये यह आवश्यक है कि प्रति पाँचवें वर्ष उन्हे सभ्य संसार के प्रभावशाली पत्रों में प्रकाशित कराया जाय।

पुरस्कार के उम्मीदवारों के नाम प्रति वर्ष पहली फरवरी तक स्टॉकहोम पहुँच जाने चाहिएँ। यद्यपि सफल उम्मेदवारों के नाम समाचारपत्रों द्वारा प्रति वर्ष नवम्बर महीने में प्रकाशित होजाते है, किन्तु संस्था की ओर से इसकी सूचना नियम-पूर्वक १० दिसम्बर को प्रकाशित होती है, जो अल्फ्रेड नोवेल की निधन-तिथि है। इसी समय निर्णयकर्त्ता पुरस्कार-विजेताओं को पुरस्कार की रकमों के चेक (जिनमे से प्रायः प्रत्येक ८००० पौण्ड का होता है) देते हैं और साथ ही उन्हे सनद और स्वर्ण-पदक भी प्रदान करते हैं, जिनपर नोबेल महोदय की खुदी हुई मुखाकृति और कुछ लिखित मजमून होता है। पुरस्कार के नियमों मे एक बात यह भी लिखी हुई है कि पुरस्कार-विजेता के लिये, जहाँतक सम्भव हो, यह अवश्यक होगा कि जिस पुस्तक पर उसे पारितोषिक मिला हो, उसके 'विषय' पर पुरस्कार प्राप्त करने के छः मास के अन्दर स्टॉकहोम मे व्याख्यान दे और शान्ति-संस्थापना-

सम्बन्धी पुरस्कार-विजेता क्रिश्चियना में भाषण दे। पुरस्कार-सम्बन्धी उपर्युक्त नियम साहित्यिक पारितोषिकों पर लागू नहीं हो सका, क्योंकि साहित्यिक पुरस्कार-विजेताओं में से बहुत-थोड़े ऐसे हुए हैं, जो स्वयं उपस्थित होकर पुरस्कार प्राप्त कर सके हों। निर्णयकर्त्ताओं के निर्णय के विरुद्ध किसी प्रकार की आपत्ति की सुनवायी नहीं हो सकती। यदि निर्णयकर्त्ताओं में कोई मत-भेद होगा, तो उसकी सूचना न तो कार्य-विवरण में प्रकाशित होगी, न सर्वसाधारण को दी जायगी।

जिस समिति द्वारा पुरस्कार के धन का प्रबन्ध होता है, उसका नाम है 'नोबेल फ़ाउण्डेशन।' इसके पाँच सदस्य होते है, जिनमें से एक—प्रधान—की नियुक्ति स्वीडन-सम्राट् करते है और शेष चार सदस्यों का चुनाव प्रबन्ध-समिति से होता है। साहित्य-सम्बन्धी पुरस्कार का निदर्शन 'स्वीडिश एकैडमी' करती है, जिसके सदस्य 'नोबेल इन्स्टीट्यूट' और उसके पुस्तकाध्यक्ष की सहायता से सब प्रबन्ध करते है। इस संस्था के पुस्तकालय मे पुस्तकों का सुन्दर संग्रह है—खास करके आधुनिक लेखकों की कृतियाँ यहाँ सब मिल जाती है। पुस्तके सभी प्रगतिशील भाषाओं की रक्खी जाती है और आवश्यकता पड़ने पर उनके अनुवादों की प्रतियाँ भी रक्खी जाती है। नव प्रकाशित पुस्तकों के नये-से-नये विवरण भी यहाँ प्रस्तुत रक्खे जाते है।

सुपरिणाम

चाहे और जो हो; किन्तु यह बात सुनिश्चित है कि अल्फ्रेड नोबेल की पुरस्कार-सम्बन्धी दो शर्तों का पालन सुचारु रूप से हुआ है। पहली बात यह हुई है कि सभी क्षेत्रों के पुरस्कार-विजेताओं-द्वारा मनुष्य-जाति की 'बहुत' नहीं, तो 'कुछ' सेवा अवश्य हुई है, और दूसरी बात यह हुई है कि पुरस्कार के उम्मीदवार की जातीयता पर कोई विचार नहीं किया गया।

पहला नोबेल-पुरस्कार सन् १६०१ ई० मे दिया गया था। तब से १६२५ ई० तक साहित्य-सम्बन्धी परितोषिक बारह राष्ट्रों के व्यक्ति प्राप्त कर चुके हैं, जिनमे से जर्मनी और फ्रास को पुरस्कार का अधिक प्रतिशतक मिला है, स्पेन, इटली, पोलैण्ड, नार्वे और स्वीडन मे से यह प्रत्येक देश के दो-दो साहित्यिकों को मिल चुका है। ग्रेट ब्रिटेन को, जिसमे श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर (क्योंकि भारत के स्वतंत्र राष्ट्र न होने के कारण विदेशों मे इसकी गणना ग्रेट ब्रिटेन के साम्राज्य मे होती है), ईट्स और किप्लिग के पुरस्कार सम्मिलित है, यह पुरस्कार प्राप्त करने की प्रतिष्ठा तीन बार मिल चुकी है। डेन्मार्क को यह पुरस्कार एक बार मिला और स्विट्जरलैण्ड को भी एक बार। 'विज्ञान' और 'शान्ति-स्थापन' के क्षेत्र मे अमेरिका के ए० ए० मिकल्सन को पदार्थ-विद्या-सम्बन्धी, टी० डब्ल्यू० रिचार्ड्स को रसायन-सम्बन्धी, डा० एलेक्सिस कैरेल को औषधि-विज्ञान सम्बन्धी, तथा थियोडोर रूजवेल्ट, इलिहू रोट और

उडरो विल्सन को 'शांति-स्थापन'-सम्बधी पारितोपिक मिले।

इन पुरस्कारों का अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव अच्छा हुआ है और सभी सभ्य देशों में इन पुरस्कारों के सम्बन्ध में काफ़ी चर्चा हुई है। इसमें सन्देह नहीं कि इस विशाल विश्व में केवल एक अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार नाममात्र का लाभ पहुँचा सकता है, परन्तु आदर्श और उदाहरण के रूप मे पहला प्रयत्न होने के कारण महामना नोबल का नाम सदा के लिये अमर रहेगा, और संसार में बहुत-से ऐसे विद्या-व्यसनी धनिक पैदा हो जायँगे, जो इसका अनुसरण करेंगे और जिस पवित्र उद्देश्य से नोबेल-महोदय ने अपनी जन्म-भर की कष्ट-पूर्वक अर्जित सम्पत्ति संसार को प्रदान कर दी है, उसकी पूर्ति के लिये सचेष्ट होंगे।

फ्रांस और प्रावेंस के कवि

[सली-प्रुद्होम और फ्रेडरिक मिस्ट्राल]

यूरोप मे फ्रास का साहित्य बहुत पहले से अद्वितीय रहा है। शताब्दियोंसे फ्रासीसी भाषा यूरोप की सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक भाषा मानी जाती है। साहित्य मे जो गौरवपूर्ण पद हमारे देश में बंग-भाषा को प्राप्त है, वही—बल्कि उससे भी ऊँचा—यूरोप में फ्रासीसी भाषा को प्राप्त है। यही कारण है कि पहले-पहल नोबेल-पुरस्कार जीतने का श्रेय फ्रांसीसी कवि रेनी फ्रासिस अर्मा को प्राप्त हुआ था।

फ्रासिस अर्मां का जन्म १६ मई १८३६ ई० को पेरिस मे हुआ था। ये एक अच्छे कवि, और विख्यात् फ्रेंच एकैडमी के सदस्य थे। इनका पूरा नाम रेनी फ्रासिस अर्मां सली-प्रुदूहोम

था। १६०१ ई० मे जिस समय उन्हे पहले-पहल नोवेल-पुरस्कार मिला, उस समय फ्रांस के पत्र-पत्रिकाओं में तो इनकी कृतियों की धूम मच ही गयी, साथ ही इंग्लैण्ड, जर्मनी, स्कैण्डेनेविया और अमेरिका की साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में भी उनकी खूब समालोचनाएँ प्रकाशित हुईं। चालीस वर्ष से भी अधिक समय से वे अपने समय के अद्वितीय कवि माने जाते थे। फ्रास मे तो उन्हे उन्नीसवीं सदी का सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक कवि माना जाता था। पुरस्कार मिलने तक इनकी रचनाओं का अनुवाद तथा इनके जीवन-सम्बन्धी अन्य बातें अंग्रेजी भाषा में बहुत कम मिलती थीं। अव भी इनकी रचनाएं अंग्रेजी में कम ही अनूदित हुई हैं। फ्रेंच एकैडमी के लिये यह गौरव की बात थी कि उसके एक सदस्य को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा में सर्वप्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

रेनी सली-प्रुदूहोम अपनी माता के एकमात्र पुत्र थे। इनकी माता का तरुणावस्था के आरम्भ में जिस पुरुष के साथ प्रेम हुआ था, उससे विवाह करने के लिये उन्हे दस वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पडी, पर विवाह अन्त मे उन्होंने अपने उसी प्रेमी से किया, जिससे आरम्भ में प्रणय हुआ था। दुर्भाग्यवश विवाह के चार ही वर्ष पश्चात् उनके पति का देहान्त हो गया, और दोनों के प्रेम का अवशिष्ट चिह्न केवल शिशु सली-प्रुदूहोम रह गया। माता ने अपने इस इकलौते वेटे को बड़े लाड़-प्यार से पाला और उसे समुचित शिक्षा देने का प्रवन्ध कर दिया।

बचपन से ही सली-प्रुदूहोम की मेधा का पता लग गया। पेरिस-स्थित 'इकोल पॉलीटेकनिच' नामक पाठशाला में भर्ती होकर, इन्होंने गणित-सम्बन्धी विज्ञान मे अच्छी योग्यताका परिचय दिया। उस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि प्रुदूहोम-महाशय आगे चलकर एक अच्छे अध्यापक बनेंगे। किन्तु सहसा उन्हे आँखों की ऐसी भयानक बीमारी हो गयी, कि वे एकाग्रता-पूर्वक आगे अध्ययन नहीं कर सके और उन्होंने कुछ दार्शनिक ढंग की कविताएं लिखनी आरम्भ कर दीं। इनकी आरम्भिक कविताओं मे ही 'जीवन के अभिप्राय' सम्बन्धी गम्भीर प्रश्न[1] पूछे गये हैं।

उनकी कविताओं का पहला संग्रह 'स्टैंनेज-एट-पोयम्स' तब प्रकाशित हुआ, जब उनकी अवस्था छब्बीस वर्ष की हो चुकी थी। समालोचकों मे इसकी काफी चर्चा रही और इसकी बिक्री इतनी अधिक हुई कि युवक प्रुदूहोम ने वैज्ञानिक या वकील बनने के बदले कविता लिखने मे ही अपना समय लगाने का निश्चय कर लिया। इसी संग्रह में उनकी विख्यात कविता 'ली वेस ब्राइस' भी आ गयी थी, जिसमें उन्होंने हृदय की उपमा टूटे पात्र से दी है।

दूसरे वर्ष उन्होंने 'ले ए प्रीवेस' नामक काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित

---

[1] वास्तव में वे प्रश्न पाश्चात्य देश-वासियों के लिये ही गम्भीर हैं, भारत के तो साधारण लोगों मे भी उनके अन्दर कोई गम्भीरता नही दीखेगी। —लेखक

कराया, जिसका अनुवाद 'दि टेस्ट' नाम से अंग्रेजी में भी प्रकाशित हो चुका है। इसके तीन वर्ष पश्चात्, अर्थात् १८७५ ई० मे 'ले सालिच्युड' और 'ले वैरेई टेण्ड्रेसेज' नामक दो पुस्तकें और प्रकाशित हुईं। इन काव्य-ग्रन्थों में उन्होंने अपने स्वभाव की अभिव्यक्ति के रूप में 'विवेक' और 'भावों' का संघर्ष प्रतिपादित किया है। इसके वाद 'ला जस्टिस' ओर 'ले वानहूर' नामक दो और रचनाएँ प्रकाशित हुईं जिनमे उपर्युक्त संघर्ष और भी उग्र रूप में व्यक्त किया गया। उनके देश-वासियों ने प्रुदूहोम को विक्टर ह्यूगो का स्थानापन्न माना और उन्हे १८८१ ई० में फ्रेंच एकैडमी का सदस्य चुन लिया। 'ला जस्टिस' के दो भागों मे से पहले का अनुवाद अंग्रेजी में 'हार्ट, बी साइलेंट'* नाम से हो चुका है। अपने विचार व्यक्त करने के लिये उन्होंने जो दो माध्यम चुने हैं, उनमे से एक है 'दि सीकर' (जिज्ञासु) है और दूसरा 'ए व्हाइस' (एक आवाज)। इन्हींके द्वारा प्रुदूहोम ने सब वस्तुओं की दार्शनिक यथार्थता का विश्लेषण किया है और संसार की सभी वस्तुओं में 'दैवी रूप' की घोषणा की है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि न्याय और निरपेक्षता संसार मे नहीं, मनुष्य के हृदय में मिल सकती है, जो उसका पवित्र मन्दिर है।

जिस प्रकार 'ला जस्टिस' में न्याय की खोज के लिये भौतिक प्रकृति के निरीक्षण के दृष्टान्तों पर ध्यान देने को

---

*'ओ मेरे हृदय ! शान्त हो।'

कहा गया है, उसी तरह 'ले बॉनहूर' में 'चरम आनन्द' को पहुँचने के लिये तीन मार्ग बतलाये गये है, जो क्रमशः उत्सुकता, चेतनता और ज्ञान तथा बलिदान की निष्ठा हैं। अंग्रेजी मे इन तीनों की क्रियाओं को क्रमशः Intoxication (प्रमत्तता), Thought (विचार) और Supreme Flight (उच्चतम उडान) कहा गया है। इस काव्य-ग्रन्थ के फॉस्टस और स्टीला नामक दो पात्र सुख की खोज मे लगते हैं और संसार के माया-मोह और लोभ से आध्यात्मिक उडान भरकर—अर्थात् इनसे पृथक् होकर (आत्म) बलिदान में सुख की सम्भावना प्राप्त करते हैं।

सली-प्रुदूहोम के सहयोगी और सामयिक साहित्यिक श्री अनातोल फ्रास ने उनके व्यक्तित्व और काव्य—दोनों ही की प्रशंसा की है। अनातोल फ्रास की जीवनी में प्रुदूहोम महाशय के प्रति उनके प्रेम और प्रशंसा के भाव लिखते हुए लेखक (जेम्स लुई मे) लिखते है—"प्रुदूहोम की बुद्धि, उनका रूप तथा उनका धन तीनों ही सुन्दरता के सम्मिश्रण है।" इस प्रकार 'तीन कवि' (Three Poets) नामक पुस्तक में महाशय ए० डब्ल्यू० इवान्स ने सली-प्रुदूहोम, फ्रासिस कोपी और फ्रेडरिक प्लेसो की तुलना करते हुए लिखा है—"उन (प्रुदूहोम) मे न केवल कवि के रहस्यपूर्ण गुण ही थे, वरन् उनके हृदय में नितान्त सरलता, नम्रता, करुणा, अकपटता, सादगी और दार्शनिक संशयवादिता भी थी।"

प्रुदूहोम महाशय का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे तो उन्हें पक्षाघात की बीमारी हो गयी थी। फ्रासिस ग्रियर्सन महोदय ने लिखा है—"यह (प्रुदूहोम) सुन्दर और निराले ढंग के व्यक्ति थे। उनकी अन्तर्दृष्टि स्पष्ट थी। उन्होंने अपने वैज्ञानिक मस्तिष्क से संसार के माया-जाल के विरुद्ध युद्ध जारी कर दिया था और अपने कोमल भावों द्वारा कवि के स्वप्न की गहरी अनुभूति प्राप्त की थी। अपने घर पर (जो रू-डी-फावर्ग मुहल्ले में स्थित था) ये नये कवियों का बड़ा सत्कार करते थे। ये सामाजिक जीवन कम पसन्द करते, यद्यपि ये काउण्टेस दियाँ-डी-वीसाक के घर प्रायः देखे जाते थे। काउण्टेस महोदया एक अनिन्द्य सुन्दरी और स्वच्छन्द स्वभाव की कवियित्री थीं। उनके सौन्दर्य से अनुप्राणित होकर कवि प्रुदूहोम कविता करते थे। यहीं दोनों मित्र दर्शन और कला पर विचार-विमर्श करते थे।"

फ्रास और प्रशिया में जो युद्ध हुआ था, उसका प्रभाव कवि सली-प्रुदूहोम की कोमल भावना पर गम्भीर रूप मे पडा था और उन्होंने राजनीतिक बहस में पडकर उसपर भी अपने विचार प्रकट किये थे। इसके पश्चात् उन्होंने ललित कला, छन्द-शास्त्र और काव्य-सिद्धान्त पर निबन्ध लिखे। फिर उन्हों ने 'मैं क्या जानता हूँ ?'—नामक पुस्तक लिखी। इसके चार वर्ष के अनन्तर उन्हे नोबेल-पुरस्कार मिला, और मृत्यु

के दो वर्ष पूर्व—अर्थात् छासठ वर्ष की अवस्था में—उन्होंने 'ला व्रेई रेलीजन सेलों पास्कल' नामक ग्रन्थ लिखा, जिसमें जीवन और साहित्य में आध्यात्मिकता के महत्त्व के सम्बन्ध में .खूब प्रकाश डाला गया है।

सली-प्रुदूहोम की स्फुट कविताओं मे से अधिकांश का अंग्रेजी अनुवाद आर्थर ओ' शाफनेसी, ई० ऐण्ड आर० प्रोथेरो तथा डोरोथी फ्रासिस गिनी ने किया है।*

---

* जो पाठक अंग्रेजी भाषा का पर्याप्त ज्ञान रखते हों और प्रुदूहोम महाशय की चुनी हुई कविताओं का आनन्द लेना चाहे, वे The Modern Book of French Verse पढ़ें, जिसका सम्पादन एल्बर्ट बोनी (न्यूयार्क) ने किया है। —लेखक

फ्रेडरिक मिस्ट्राल

———:❀:———
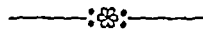
१६०४ ई० के नोबेल-पुरस्कार का अर्द्धांश फ्रेडरिक मिस्ट्राल-महोदय को मिला था। पुरस्कार का शेपार्द्ध इशेगरे-नामक स्पेनी नाटककार को मिला था, जिनके सम्बन्ध में आगे चलकर लिखा जायगा। मिस्ट्राल-महोदय का जन्म मेलाँ नामक नगर में १८३० ई० में हुआ था। इनकी गणना फ्रांसीसी लेखकों में होती है, यद्यपि इनकी भाषा प्रावेन्स थी, जो फ्रासीसी भाषा की ही एक शाखा है। मिस्ट्राल महाशय के पिता एक किसान थे, जो अपने पुत्र को वकील बनाने के अभिलाषी थे। बालक मिस्ट्राल को 'अविग्नों' की पाठशाला मे भेजा गया। बाद में नीम विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त

करके वे 'एई' में अध्ययन करने लगे। 'अविग्नों' के अध्यापकों मे जोसेफ रूमेनाइल प्रावेंस भाषा के बड़े अनुरागी थे और उन्होंने बालक मिस्ट्राल मे भी उसके प्रति प्रगाढ प्रेम उत्पन्न कर दिया था। अध्यापक महोदयने प्रावेंस-भाषा के वर्ण-विन्यास को नया रूप दिया और उसमे जातीयता के भाव भरे। उन्होंने उसे स्कूल मे प्रचलित किया। मिस्ट्राल ने भी अध्यापक की तरह इस (प्रॉवेंस) प्राचीन भाषा के पक्ष मे खूब प्रचार किया। इसके बीस वर्ष पूर्व अगेन-निवासी जैक्स जस्मिन नामक एक नाई ने गाँव-गाँव घूमकर प्रॉवेंस-भाषा की ग्रामीण कविताएँ गाकर सुनाई थीं। कहा जाता है कि उपर्युक्त नाई ने इस प्रकार गाने गा-गाकर लगभग १० लाख रुपये का प्रचुर धन एकत्रित किया था, और वह सारी रकम दान कर दी। उपर्युक्त अध्यापक महोदय ने नवयुवकों की एक समिति इस भाषा और इसकी कविताओं के प्रचारार्थ बनायी। इस समिति ने यह सिद्ध किया कि इस भाषा का उद्गम रोम से हुआ है और इस प्रकार यह इटली फ्रास और स्पेन की भाषाओं की जननी है। यद्यपि अनेक भाषा-तत्त्वविदों ने इस समिति के मन्तव्यों से मतभेद प्रकट किये हैं, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इसके अन्वेपण काफी तर्कयुक्त थे।

दूसरी कहानी यह प्रसिद्ध है कि मिस्ट्राल बड़े मातृ-भक्त थे, इसलिये वे फासीसी भाषा मे बहुत-से पद्य लिखकर इस आशा से उनके पास ले गये कि वे उन्हे प्रोत्साहन देंगी और

उनकी प्रशंसा करूँगी। पर शोक की बात यह थी कि उनकी मॉं फ्रेंच (फ्रांसीसी) भाषा नहीं समझ सकती थीं। मिस्ट्राल जिस उत्साह से अपनी मॉं के पास अपनी कविताओं का संग्रह लेकर गये थे, उसपर पानी फिर गया—मिस्ट्राल को बड़ी निराशा हुई और उन्होंने निश्चय किया कि अब अपनी मातृ-भाषा में कविता बनाऊँगा, और अपनी माता को गाकर सुनाऊँगा। उसके अनुसार उन्होंने प्रावेंस की अनेक दन्तकथाओं, कहानियों और औपन्यासिक घटनाओं का संग्रह करके कविता का रूप दिया और १८५८ ई० में उसे 'मोरीओ' नाम से प्रकाशित कराया। इस पुस्तक के प्रकाशन में अध्यापक रूमेनाइल महोदय का काफ़ी हाथ था। दूसरे वर्ष जब मिस्ट्राल-महोदय ने उसका फ्रांसीसी अनुवाद किया तो उसे पढ़कर पेरिस के नागरिक उसके माधुर्य पर मुग्ध हो गये। इस पुस्तक ने मिस्ट्राल की कीर्ति खूब बढ़ाई और आलोचनाओं में उनकी तुलना वर्गिल, थिमोक्रीटस और अरिस्टो से की गयी।"

अपने काव्य-ग्रन्थ के बारह सर्गों तक तो कवि मिस्ट्राल ने स्थानीय रीति-रस्मों का वर्णन किया है और व्यक्तिगत संस्मरण लिखे हैं। फिर खलियान का वर्णन आया है, जो एक प्रकार से इनके अपने ही घर का चित्रण है। रैमूँ को उन्होंने अपने पिता के चरित्र से लिया है। वे बचपन से ही खलियान के कामों—गेहूँ की दॅवाई (नाज को डंठल से अलग

करने की क्रिया), सीप एकत्रित करना, अँगीठी के पास बैठकर भोजन करने, नाज की कटाई के समाप्त हो जाने के उपलक्ष मे नृत्य करने आदि से पूर्णतः परिचित थे। कथानक मे कृपक-मुखिया की लड़की 'मीरिओ' डलिया बुनानेवाले के लड़के को प्रेम करती थी, दोनों दिन आनन्द मे बिताते थे और रात गम्भीर मनोव्यथा मे। अन्तमे 'होली मेरीज' के गिरजे मे उस तरुण बालिका का शरीरान्त हो जाता है, और इस दु:खान्त के समय उसके ओठों से आशापूर्ण शब्द निकलते हैं।

सब से अधिक मर्म-स्थल वह है, जहाँ नायिका, 'ला क्रा' की पथरीली जगह पार करके 'होली मेरीज' की समाधि मे शरण लेने के लिये पहुँचती है। दो सर्गों मे इसी बातका विवरण है कि होली मैरीज का इतिहास क्या है। जिस समय फिलिस्तीन से महात्मा ईसा की बलि के पश्चात् उनके शिष्यगण वहाँ से निकाल दिये गये थे, तो, किम्बदन्ती के अनुसार, उन्हे बजरे मे बैठाकर छोड दिया गया था। उनके पास न डांड थे न पाल। फलतः वायु के झोंकों से वह बजरा उस जगह समुद्र के पवित्र किनारे पर आ लगा था जहाँ 'सेण्ट्स मेरीज' गाँव आवाद है। उन शिष्यों मे लाजरस और उसकी बहनें भी थीं, जिनके नाम क्रमशः मेरी और मर्था थे। साथ ही उनका नौकर बद्दू साधु 'सारा' भी था। इनके अतिरिक्त मेरी मैगडालेन, जोसेफ आफ अरीमाथिआ और ट्रोफीन भी थीं। इनमे से अन्तिम शिष्या सब से अधिक बुद्धिमान थीं

और उन्होंने आर्ल्स-नगर-निवासियों को ख्रीष्ट धर्म की दीक्षा दी थी।

प्रेम और देश-भक्ति के गानों में मिस्ट्राल महोदय की आरम्भिक रचनाएँ जो १८७५ ई० में प्रकाशित हुई थीं, विशेष प्रख्यात् हैं। इनमे 'ले आइल्स डी ओर' को अधिक प्रशंसा हुई थी। इन रचनाओं में प्रावेंस के मुहावरे खूब प्रयुक्त हुए हैं, जिनके उच्चारण में लैटिन की और माधुर्य में अटिका* और टस्कानी† की छाप है। बयासी वर्ष की अवस्था में मिस्ट्राल ने १९१२ ई० में 'ले ओलिवेडुस' नामक संग्रह प्रकाशित कराया था, जिसके शीर्षक की व्याख्या उन्होंने इस प्रकार की थी—"दिन मे शीत की वृद्धि और समुद्र का ज्वार, मुझे सूचित करते हैं कि मेरे जीवन का शीत-काल आ गया, और मुझे बिना विलम्ब परमात्मा की वेदी पर बलिदान करने के लिये अपनी 'सामग्री' तैयार कर लेनी चाहिए।" उन्होंने 'मी ओरिजिन' के शीर्षकान्तर्गत अपनी आत्मकथा भी लिखी थी, जिसमें युवावस्था के संस्मरण भी सम्मिलित थे। कान्सटांस एलिजाबेथ मॉड महाशय ने इसका अंग्रेजी अनुवाद 'मेमॉयर्स ऑफ मिस्ट्राल' (मिस्ट्राल के संस्मरण) नाम से किया था। इसमें प्रॉवेंस के गानों का अंग्रेजी अनुवाद आलमा स्ट्रेटिल (श्रीमती लारेंस हैरिसन) ने किया था।

---

* बोली विशेष।

† फ्रांस के एक विशेष प्रान्त की बोली।

ग्राम्य-जीवन से जैसा प्रेम मिस्ट्राल को था, वैसा कदाचित् कुछ ही कवियों को रहा होगा। उन्होंने फ्रेंच एकैडमी का सदस्य बनने से इसलिये अस्वीकार कर दिया कि ऐसा करने पर उन्हे प्रोंवेस-देहात छोडकर पेरिस-नगर में रहना पडता। उन्हे एकैडमी ने पुरस्कार और 'लिजियन' के बैज* दिये थे। प्रौढावस्था मे उन्होंने आर्लीसियन परिवार की एक सुन्दरी युवती से विवाह किया था। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त मे मिस्ट्राल महोदय प्रोंवेंस के फूल, पत्थर, और प्राच्यविद्या सम्बन्धी चीजें अजायबघर के लिये संग्रह करने लगे थे और वह इस कार्य को अपनी 'अन्तिम कविता' कहते थे। मिस्ट्राल-महोदय को नोवेल-पुरस्कार का जो धन मिला था, उसका अधिकाश अजायबघर तैयार करवाने मे खर्च हो गया था। अपने जीवन के अन्तिम दस वर्षों मे उन्होंने प्राचीन और आधुनिक प्रावेंस का सरल शब्दकोश 'कम्प्रेहेंसिव लैक्सिकन आफ एन्शियण्ट ऐण्ड माडर्न प्रावेंसल' नाम से लिखा, जो दो बडी-बडी जिल्दों मे १८८६ ई० मे प्रकाशित हुआ। शिक्षित वर्ग में उनकी बडी प्रतिष्ठा थी और किसानो तथा 'रोन' के मल्लाहों मे उनके प्रति अगाध प्रेम था। १८६७ ई० मे मिस्ट्राल महोदय ने अपने पद्यों मे 'ले पोयम-डू-रोन' लिखकर उसमे प्राचीन काल के नाविकों के आनन्द का चित्रण करते हुए

---

* चिह्न-विशेष जो किसी सस्था या समाज की सदस्यता का परिचायक होता है।

बतलाया कि इंजनवाले जहाजों के चलने के पहले नावों के संचालन में क्या आनन्द था।

ग्राम-वासियों का चरित्र-चित्रण कवि मिस्ट्राल ने जिस सुन्दरता के साथ किया है, और वहाँ के दैनिक जीवन की घटनाओं को जो पद्यात्मक रूप दिया है, वह अपने ढंग का नितान्त मौलिक और अद्वितीय है। जब वे अधिक वृद्ध हो गये, तो देश-विदेश के अनेक विद्वान् इनके दर्शनों को आया करते थे। उनका शरीरान्त २५ मार्च, १९१४ ई० को हुआ था।

जर्मन विद्वान् थियोडोर मॉमसन और रुडल्फ़ यूकेन

थियोडोर मॉमसन को १९०२ ई० में नोबेल-पुरस्कार मिला था। ये बर्लिन विश्वविद्यालय के इतिहासाध्यापक थे और अपने समय में इतिहास के अद्वितीय विद्वान माने जाते थे। उन्हे अपने प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ 'रोमिशे जोशिश्ते' के उपलक्ष मे यह पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करने में फ्रांस के बाद जर्मनी का नाम आया। मॉमसन महोदय इतिहास के अतिरिक्त कानून और प्राच्य-विद्या के भी अच्छे ज्ञाता थे। उन्हे यह पुरस्कार चौरासी वर्ष की अवस्था मे प्राप्त हुआ था, और पारितोषिक मिलने के दूसरे ही वर्ष उनका देहान्त हो गया। जिस समय

अध्यापक मॉमसन को पुरस्कार मिलने की खुशी में जर्मन विद्वान आनन्द मना रहे थे, उसी समय कुछ आलोचकों ने इस बात का विरोध किया कि यह पुरस्कार नोबेल के वसीयतनामे के शब्दों को ध्यान में रखकर नहीं दिया गया, क्योंकि नोबेल महोदय ने 'आदर्शवाद-युक्त' साहित्य के लिये पुरस्कार देने का उल्लेख किया था। इस विरोध से क्या होता था, क्योंकि पुरस्कार प्राप्तकर्ता महोदय तो वयोवृद्ध हो चुके थे, अब वे आदर्श साहित्य लिखने के लिये नहीं जीवित रह सकते थे। हाँ, इसका यह परिणाम अवश्य हुआ कि स्वीडिश एकैडमी ने 'साहित्य' शब्द का अर्थ अधिक विस्तृत कर दिया और उसके अन्तर्गत विज्ञान तथा कला के अन्तर्गत आनेवाले सभी विषयों का समावेश कर दिया।

मॉमसन महोदय का जन्म श्लेस्विग प्रान्त के अन्तर्गत गार्डिंग स्थान मे १८१७ ई० में हुआ था। इनकी आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा कील नामक स्थान में हुई थी। तीस वर्ष की अवस्था के पूर्व ही बर्लिन एकैडमी ने उनकी अन्वेषण-सम्बन्धी योग्यता और उत्साह देखकर उन्हे अपने यहाँ नौकर रख लिया। वहाँ इन्हे इटली और फ्रांस की रोमन लिपि की व्याख्या करने के कार्य पर लगाया गया। साथ ही वे इतिहास और कानून भी पढ़ते रहे और १८४८ ई० मे लिपजिग विश्वविद्यालय के कानून-विभाग मे ले लिये गये। किन्तु राजनीतिक आन्दोलन में क्रियात्मक रूप में भाग लेने के

कारण उन्हे बाध्य होकर १८४६ में ही नौकरी से पृथक् होना पड़ा। दो वर्ष तक यहाँ रहने के बाद वे ज्यूरिच और वहाँ से ब्रेसला मे कानून के अध्यापक बनकर गये। ये जहाँ-जहाँ गये, छात्रों ने इन्हें प्रेम और श्रद्धा की दृष्टि से देखा। विद्यार्थियों में इन्होंने एक नया उत्साह, नया जीवन और नयी भावना भर दी और संसार भर के शिक्षा-विशेषज्ञों में इनका नाम हो गया। अन्ततः १८५८ ई० मे ये बर्लिन विश्व-विद्यालय में प्राचीन इतिहास के अध्यापक बन गये और वहाँ के विद्यार्थियों तथा साधारण इतिहास-पाठकों पर इनकी योग्यता का सिक्का जम गया।

यद्यपि इतिहास इनका विशेष विषय था और इससे उन्हे और विषयों के अध्ययन का अवसर कम मिलता था, फिर भी उनका अध्ययन काफ़ी विस्तृत था और उन्होंने देशाटन भी खूब किया था। उन्हे साहित्य-सम्बन्धी लगभग सभी विषयों का सुन्दर ज्ञान था। वे बड़े ही वाकपटु और मिष्टभाषी थे। वे प्रायः कहा करते थे कि "प्रत्येक विद्यार्थी को अपना एक विशिष्ट विषय चुनकर उसमें विशेषता प्राप्त करनी चाहिए, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उसे अन्य विषयों की ओर से आँखे मूँद लेनी चाहिएँ।" उनका लिखा हुआ "रोम का इतिहास" एक प्रख्यात पुस्तक है। अपनी तीक्ष्ण और तार्किक बुद्धि के बलपर इन्होंने बिस्मार्क तक का सफलता-पूर्वक विरोध किया था। बोअर-युद्ध के समय इन्होंने सिद्धान्त के रूप में अंग्रेजों का भी विरोध किया था।

अनुवाद और मौलिक दोनों मिलाकर मॉमसन ने सौ से अधिक ग्रन्थ लिखे थे। एडवर्ड ए० फ्रीमैन नामक प्रसिद्ध आलोचक ने लिखा है कि "मॉमसन हमारे समय के सर्वश्रेष्ठ विद्वान् है।" विशेषतः क़ानून, भाषा, रीति-रिवाज, पुरातत्व, प्राचीन सिक्के और लिपियाँ आदि पर लिखी हुई इनकी पुस्तके विद्यार्थियों के लिये बहुमूल्य है। ये बर्लिन एकैडमी से प्रकाशित होनेवाली 'कारपस इंस्क्रप्शनम् लैटिनारम्' नामक पत्रिका के सम्पादक और उपर्युक्त एकैडमी के मन्त्री भी थे। इनकी लेखन-शैली बड़ी सजीव थी। ये प्रायः नाटकीय ढंगकी भाषा बडी सफलता-पूर्वक लिखते थे और घटनाओं तथा पात्रों का रूपक बहुत अच्छा बाँधते थे। इनका लिखा हुआ 'रोम का इतिहास' इसका सबसे अच्छा उदाहरण है—रोमके आरम्भिक काल से लेकर जूलियस सीजर की मृत्यु तक के इतिहास का उन्होंने जैसा सुन्दर चित्रण किया है, उसे पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि हम कोई मनोरंजक नाटक पढ रहे है, जिसके सब पात्र एक-एक करके हमारे मानस-चक्षु के सामने अभिनय करने लगते है। इतिहास-जैसे अपेक्षाकृत शुष्क विषय को इन्होंने ऐसी सुन्दरता के साथ लिखा है कि केवल इसी एक पुस्तक (रोम का इतिहास) ने उन्हे विख्यात बना दिया। वास्तव मे उनकी रचनाओं में यही सर्वश्रेष्ठ भी मानी जाती है। इन्होंने रोमन धर्म, रोमन रीति-रिवाज, रोमन साहित्य और रोमन कला पर अच्छा प्रकाश डाला है। प्राचीन-इतिहासज्ञ होते हुए भी उन्होंने

आधुनिक संसार की गति-विधि का अच्छा अध्ययन किया था और उनका मत था कि प्राचीन संस्कृति का चक्र फिर लौटकर आयेगा और आधुनिकता के साथ उसका मेल होकर रहेगा तथा इस प्रकार इतिहास अपने आपको दुहरायेगा।

मॉमसन-महोदय की साहित्यिक योग्यता तथा नये ऐतिहासिक अन्वेषण और लेखन-शैली की विशेषता ने मनुष्य-जाति का बडा हित किया है और उससे इतिहास के विद्यार्थियों तथा साधारण पाठकों को बड़ा लाभ हुआ है। वे नोबेल-पुरस्कार के सर्वथा योग्य थे। पुरस्कार प्राप्त करने के एक वर्ष पश्चात् १ नवम्बर सन् १९०३ ई० को मॉमसन महोदय का शरीरान्त हुआ था।

रुडल्फ़ यूकेन

[जर्मन दार्शनिक]

१९०८ ई० का नोवेल-पुरस्कार रुडल्फ यूकेन नामक जर्मन दार्शनिक को मिला। यूकेन महाशय जेना विश्वविद्यालय के दर्शनाध्यापक थे। अध्यापक मॉमसन के बाद यह दूसरे जर्मन विद्वान् थे, जिन्हे यह गौरव-पूर्ण पद प्राप्त हुआ।

रुडल्फ यूकेन का जन्म १८४६ ई० में ऑरिच-नामक स्थान में हुआ था। इनके पूर्व जिन लोगों को नोबेल-पुरस्कार मिला था, उनकी अपेक्षा इनको अल्प अवस्था में ही पुरस्कार मिला था, इसलिये ये पुरस्कार प्राप्त होने के बाद लिखने तथा व्याख्यान देने का काफ़ी कार्य कर सके थे। अधिक अवस्था हो जाने पर उन्होंने उन दिनों के प्रचलित जड़वाद के विरुद्ध

प्रचार करने में अपना समय लगा दिया था। वास्तव में यूकेन महोदय को आदर्श-पूर्ण रचनाओं के कारण ही पुरस्कार मिला था। उन्होंने अपनी आत्म-कथा में लिखा है—"मेरा जीवन, जीवन को वहिर्मुख बनने के विरुद्ध युद्ध करने में लगा है। आजकल वास्तव में यह किसी व्यक्ति का दुर्गुण होने के बदले राष्ट्रों का दुर्गुण बन गया है, और इसमे अब मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है। जो भी व्यक्ति आध्यात्मिक सुधार में विश्वास रखता है, आशा है कि वह मेरी तुच्छ सेवाओं मे सहयोग देगा।"

पूर्वी फ्रीसलैण्ड के सूबे की भूमि, जहाँ यूकेन महोदय का जन्म हुआ था, कृपि और व्यापार का केन्द्र है। यह प्रान्त हालैण्ड से मिला हुआ है। यहाँ मछलियाँ पकड़ने का धन्धा भी खूब चलता है। ऑरिच भी व्यापार का केन्द्र है। बालक यूकेन का बचपन कुछ सुखद ढंग से नहीं व्यतीत हुआ। ये अपने माता-पिता की प्रथम सन्तान थे और यह अभी पाँच ही वर्ष के हुए थे कि इनके पिता का देहान्त हो गया। इसके बाद युवावस्था तक इनके ऊपर विपत्ति-पर-विपत्ति पड़ती गयी। बचपन मे एक पर्दे मे लगा हुआ छल्ला आधा निगल जाने के कारण इनका गला चिर गया और उसे निकालने की चेष्टा मे और भी गहरा घाव हो गया। इसके कुछ समय बाद उन्हे लाल बुख़ार आ गया, जो चिकित्सा खराब होने के कारण अच्छा होने के बदले और बढ़ गया। कुछ समय के लिये तो

उनकी आँखें बेकाम हो गयीं, पर पीछे इन्हें दिखायी देने लगा। इनके कुछ बड़े हो जाने पर इनका एक छोटा भाई मर गया, जिससे परिवार और भी शोक-संतप्त हो उठा।

रुडल्फ़ यूकेन की प्रवृत्ति लड़कपन से ही पढ़ने-लिखने की ओर थी। इनके पिता डाक-विभाग की नौकरी में थे और वे एक अच्छे गणितज्ञ थे। इनकी माता एक पादरी की लड़की थीं, और उन्होंने विज्ञान का अच्छा अभ्यास किया था। उनकी अभिलाषा यह थी कि उनका पुत्र योग्य बने। अपनी आत्म-कथा में यूकेन ने अपनी माता के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की है। ऑरिच की पाठशाला मे पढ़ने के समय से ही यूकेन गणित और संगीत मे दिलचस्पी लेने लगे थे। इनके ऊपर इनके अध्यापक रूटर, लीज और टीशमुलर का अच्छा प्रभाव पडा था। कुछ समय तक तो यह बर्लिन विश्वविद्यालय में थे, इसके बाद अध्यापन-कार्य के परीक्षण में सफल हो जाने पर बैसेल मे दर्शन पढ़ाने लगे। वहाँ इनके साथ इनकी माता भी गयीं, किन्तु उनका देहान्त हो जाने के कारण इनका सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करने का कार्यक्रम बिगड गया।

बैसेल विश्वविद्यालय उन दिनों शैशवावस्था में था। यूकेन ने वहाँ के विद्यार्थियों से अच्छी घनिष्ठता प्राप्त कर ली। उन्होंने अरस्तू आदि प्राचीन दार्शनिकों की कृतियों पर टीका-टिप्पणी के साथ पुस्तकें लिखनी शुरू कर दी थीं। सन १८७३ ई० में वे जेना विश्वविद्यालय मे बुलाये गये, जहाँ इनका कुनो, फ़िशर

हैकेल और हाइल्ड ब्रैण्ड-जैसे प्रख्यात दार्शनिकों के साथ सम्पर्क हुआ। सन् १८७८ ई० मे इनकी दर्शन-सम्बन्धी पुस्तक "वर्तमान दार्शनिक विचारों के मौलिक भाव"* प्रकाशित हुई, जिसके फल-स्वरूप प्रत्येक सभ्य देश में इनका और जेना विश्वविद्यालय का नाम विख्यात होगया। एल विश्वविद्यालय के प्रेसीडेण्ट नोह् पोर्टर के अनुरोध करने पर प्रोफ़ेसर एम० स्टुअर्ट फेल्प्स ने उपर्युक्त जर्मन पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद किया था।

सन् १८८२ ई० में यूकेन महोदय ने आइरेन पँसो-नामक लडकी से विवाह किया। इसके कारण उनका सामाजिक नेताओं से अधिक परिचय हो गया। यूकेन का कथन है कि उनकी स्त्री सुशिक्षिता नहीं थीं, किन्तु उनमे आध्यात्मिकता, कला-प्रेम और प्रबन्ध-शक्ति अच्छी थी। यूकेन महोदय की सास एथेंस के प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता अलरिच की पुत्री थीं, इसलिये इस विवाह से यूकेन-महाशय का परिचय वैज्ञानिकों और इतिहासज्ञों मे खूब हो गया। इसके बाद उन्होंने आधुनिक दर्शन और मानव जीवन पर अनेक पुस्तके लिखीं। कितने ही जडवादी और अद्वैतवादी जर्मन विद्वानों ने यूकेन के ग्रन्थों की कडी आलोचनाएँ कीं—जर्मनी के पत्र-पत्रिकाओं ने उनकी रचनाओं को उपेक्षा की दृष्टि से देखा। यूकेन की ख्याति उस

---

* The Fundamental Concepts of Modern Philosophic Thoughts

समय हुई जब उन्होंने धार्मिक दर्शन पर पुस्तकें लिखनी आरम्भ कीं। इस प्रकार की पुस्तकों मे "धर्म की सत्यता"* और "क्या हम अब भी ईसाई रह सकते हैं?"† ने उन्हे काफी प्रख्यात बना दिया और हालैण्ड, फ्रांस, इंग्लैण्ड तथा अमेरिका से ये इस विषय पर व्याख्यान देने के लिये आमंत्रित हुए।

उनकी बाद मे लिखी हुई पुस्तकों में से कुछ ने सन् १६०८ ई० मे उन्हे नोबेल-पुरस्कार-विजेता बनाया। उन्हे इस बात की बिल्कुल आशा नहीं थी कि उन्हे कभी नोबेल-पुरस्कार मिल सकता है, इसीलिये जब यकायक उन्हे पुरस्कार मिलने का समाचार मिला, तो ये अत्यन्त आश्चर्यान्वित हुए। इसके पश्चात् इन्हे "स्वीडिश एकैडमी आफ साइन्स" (स्वीडन की विज्ञान-परिषद्) ने अपना सदस्य बना लिया। जब फ्रास, हालैण्ड और इंग्लैण्ड ने यूकेन का आदर किया, तो जर्मनी के पत्र-पत्रिकाओं ने उनके ग्रन्थों की तीव्र आलोचना करनी बन्द कर दी। १६११ ई० में वे इंग्लैण्ड गये और बाद में व्याख्यान देने के लिये अमेरिका भी पहुँचे। अमेरिका मे वे अस्थायी रूप से अध्यापन-कार्य करते रहे और क्रमशः हार्वर्ड और कोलम्बिया विश्वविद्यालयों तथा बोस्टन के लावेल इन्स्टीट्यूट और स्मिथ कालेज के लेक्चरर रहे। उनके

---

* The Truth of Religion

† Can We Still Be Christians?

साथ उनकी स्त्री और लड़की भी अमेरिका गयीं और उन्होंने यूरप तथा अमेरिका का आतिथ्य स्वीकार किया।

यूकेन महोदय की वे रचनाएँ, जो धर्म से सम्बन्ध रखती थीं, इंग्लैण्ड और अमेरिका में खूब प्रचलित हुईं। मीरिगूथ ने उनके कितने ही निबन्धों का भी अनुवाद किया था। लूसी जज गिब्सन और डब्ल्यू० आर० ब्वायस गिब्सन ने इनकी "ईसाई धर्म और नये आदर्श"* तथा "जीवन का अर्थ और मूल्य"† नामक पुस्तकों का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित कराया। इनकी अन्य पुस्तकों में "धर्म और जीवन"‡ काफ़ी प्रसिद्ध है। "नीतिशास्त्र और आधुनिक विचार"§ भी इनकी सुप्रसिद्ध पुस्तकों में से है।

यूकेन महाशय की तुलना विद्वानों ने प्रायः दो अन्य आधुनिक विचारकों—हारनक और हेनरी बर्गसन के साथ किया है। इनमें से पहले महोदय तो लिपज़िग और बर्लिन विश्वविद्यालयों में अध्यापक थे और "ईसाईपन क्या है ?"‖ और "पन्थों का इतिहास"¶ नामक क्रान्तिकारी पुस्तकें लिखी थीं. और दूसरे महाशय ने दर्शन पर कई अधिकारपूर्ण पुस्तकें

---

* Christianity and the New Idealism.
† The Meaning and Value of Life.
‡ Religion and life.
§ Ethics and Modern Thought.
‖ What is Christianity ?
¶ History of Dogmas.

लिखी थीं।* ई० हर्मन नामक प्रसिद्ध जर्मन विद्वान ने यूकेन और वर्गसन की तुलना करते हुए लिखा है—"यूकेन कदाचित् वर्तमान समय के सर्वश्रेष्ठ विचारक हैं, क्योंकि वह एक ऐसे नये आदर्श के प्रतिपादक हैं, जो हमारी वर्तमान नैतिक माँग की पूर्ति करता है। इस प्रकार का कार्य अवतक किसी भी आदर्शात्मक दर्शन ने नहीं किया था। इन्होंने नैतिक आदर्शवाद की धार्मिक उलझनों को भली प्रकार सुविकसित करके समझाया है। इनकी 'जीवन की दार्शनिकता' आध्यात्मिक उच्चता की सहायक है, वाधक नहीं।"

नोवेल-पुरस्कार प्राप्त करने के बाद २७ मार्च, १९०९ ई० को यूकेन ने स्टाकहोम में व्याख्यान देते हुए कहा था—"हमलोग एक ऐसे जमाने से गुजर रहे हैं जब 'परम्परा' एक सन्दिग्ध वस्तु मान ली गयी है और हमारे जीवन का पथ-प्रदर्शन करने के लिये नये विचारों में संघर्ष हो रहा है।" आगे चलकर "जड़वाद और आदर्शवाद" पर अपने विचार प्रकट करते हुए यूकेन ने बतलाया है कि जडवाद का मतलब 'मनुष्य के साथ प्रकृति के सम्बन्ध में विश्वास' है, आदर्शवाद इस विश्वास को स्वीकार करता है, किन्तु यह प्रश्न करता है कि क्या समस्त जीवन यही है, या इस (जीवन) का और भी कोई रूप है। उन्होंने 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' का प्रभाव स्वीकार किया है, किन्तु केवल उपयोगितावाद की

*इनकी 'Creative Philosophy' अधिक विख्यात है।

दृष्टि से नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि जीवन केवल एक सीमित तथ्य का प्रतिबिम्ब न होकर कुछ ऊची चीज है, वह दूसरे 'लोक' मे जाता नहीं, वरन् उस (दूसरे लोक) का निर्माण करता है। आदर्शवाद, जो दैनिक जीवन के प्रसार से कोई सम्बन्ध रखता है, कोई आदर्श नहीं रखता। आज कोई नया आदर्श ही नहीं रहा, क्योंकि हम जड़वाद की निर्दिष्ट सीमा को पार कर चुके हैं। हमें अब क्षण-स्थायी संस्कृति से ऊपर उठकर किसी अधिक हृदयग्राही और चिरस्थायी वस्तुकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

यूकेन के उपर्युक्त आदर्शात्मक विचारों ने ही उन्हे शिक्षक, दार्शनिक और लेखक के रूप मे ऐसा प्रख्यात बना दिया कि अन्त मे उन्हे नोबेल-पुरस्कर-समिति ने पारितोषिक देने मे अपनी प्रतिष्ठा समझी और इस प्रकार उनका सार्वभौम आदर बढ़ाया। यूकेन महोदय का देहान्त १४ सितम्बर, १९२६ ई० को हुआ और इस प्रकार उन्होंने दार्शनिक की पूर्ण अवस्था का उपभोग किया।

जार्नसन

[नार्वे का विख्यात औपन्यासिक और नाटककार]

शान्ति-सम्बन्धी पुरस्कार प्राप्त करनेवाले जार्नसन महोदय पहले नार्वे-निवासी थे जिन्हे यह गौरव मिला। वास्तव में जार्नसन महोदय यह पुरस्कार प्राप्त करने के उपयुक्त पात्र थे, क्योंकि समस्त मानव-जाति के हित के लिये उन्होंने अत्यन्त उपयोगी साहित्य लिखा था। १६०३ ई० में जब उन्हे पुरस्कार प्राप्त हुआ, उसके पूर्व से ही इस विषय में उन्हे काफ़ी ख्याति प्राप्त हो चुकी थी और वे 'नार्वे के पिता' के नाम से प्रसिद्ध थे। औपन्यासिक के रूप मे वे अपने देश मे सब से अधिक विख्यात् हुए थे। इसके अतिरिक्त वे सार्वजनिक कार्यकर्त्ता, सुवक्ता, सुप्रबन्धक और शासन विधानात्मक कार्यकर्ता के रूप मे एक सफल व्यक्ति थे।

पुरस्कार समिति ने जार्नसन महोदय को पारितोषिक देते समय उनकी आरम्भ में लिखी हुई ग्राम्य जीवन सम्बन्धी कहानियों पर, जिनमें नार्वे के वास्तविक जीवन का सुन्दर और काव्यात्मक चित्रण है, विशेष रूप से ध्यान दिया था। बादमें उन्होंने 'मानवीय शक्ति के बाहर' 'सम्पादक' तथा 'सिगर्ड स्लेम्ब' नामक नाटक लिखे थे, जिनमे उन्होंने बहुत-सी समस्याओं को हल किया, और जिनकी चर्चा अनेक सभ्य देशों मे खूब हुई थी। जार्नसन महोदय में पौरुष और नम्रता का अद्भुत सामंजस्य था। उनमे कवित्व का गुण भी था—विशेषकर नार्वे के ग्राम्यगीतों को वे अत्यन्त गम्भीर और उत्साहमय प्रेम से पढ़ते थे। उनकी शारीरिक शक्ति प्रशंसनीय थी और वे अवसर आने पर बल-प्रयोग करने से नहीं चूकते थे।

जार्नसन का जन्म १८३२ ई० मे क्विकने नामक स्थान में हुआ था। उनके पिता गड़रिये थे। जार्नसन अभी छः वर्ष के ही हुए थे कि उनका परिवार क्विकने से राम्सडेल को चला गया। इस स्थान की प्राकृतिक शोभा—पर्वतावली, घाटी और हरियाली—का वर्णन उनकी कविताओं मे मिलता है। मोल्ड की पाठशाला में उनके दिन बड़े आनन्द से कटे थे। वह प्राचीनकाल के सत्यनिष्ठ बुद्धिमान पुरुषों की जीवनियाँ और इतिहास बड़े उत्साहपूर्वक पढ़ते थे। नार्वे के प्रख्यात कवि वर्जलैण्ड की रचनाएँ उन्हे बहुत पसन्द थीं। १७ वर्ष की

अवस्था में वे विश्वविद्यालय की परीक्षा की तैयारी के लिये क्रिश्चिआनिया गये। वहाँ वे इब्सन के सहाध्यायी बने। उन दिनों के संस्मरणों का उल्लेख उन्होंने अत्यन्त हास्यपूर्वक किया है। धीरे-धीरे जार्नसन और इब्सन के परिवार में इतनी घनिष्ठता हो गयी थी कि जार्नसन की लड़की बर्गलिट का विवाह इब्सन के लड़के के साथ हो गया।

क्रिश्चिआनिया में जार्नसन डेनिश* साहित्य का अध्ययन करने लगे, और यहीं पर उन्होंने अपने नाटक 'नव-दम्पति'† का लिखना आरम्भ कर दिया था, जो दस वर्ष बाद जाकर समाप्त हुआ। उसी स्थान पर उन्होंने 'युद्ध में'‡ नामक एकाङ्की नाटक लिखा जो क्रिश्चिआनिया में साधारण सफलता के साथ खेला गया। इसके बाद उन्होंने नार्वे की ग्राम्य कथाएँ लिखनी आरम्भ कीं। उन्हें इस बात का बड़ा गर्व था कि उनके पूर्वज कृषक थे और गाँवों के रीति-रिवाजों तथा ग्राम-वासियों की अभिलाषाओं से अत्यन्त गहरी सहानुभुति रखते थे। वह वर्तमान जगत् के बुद्धिमान और आदर्श व्यक्तिओं का चरित्र-चित्रण करने की विशेष इच्छा रखते थे। सीधे-सादे जीवन की आरम्भिक कहानियों में से इनकी 'आर्ने,' 'मछलीवाली,' 'सुखी बालक,' और 'सिनोव सालबेकन' का नाव,

---

* डेन्मार्क-देशीय।

† The Newly Married Couple.

‡ Between the Battles.

डेन्मार्क और जमनी मे अच्छा स्वागत हुआ। शीघ्र ही इनके अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित हो गये और इस प्रकार अपने प्रसाद गुण और राष्ट्रीय भावना के कारण इनकी कविताओं का खूब आदर हुआ।

प्रसिद्ध आलोचक श्री जार्ज ब्राण्डस लिखते है कि जार्नसन का ग्राम्य चित्रण आरम्भ मे बहुत-से लोगों को समझ मे नहीं आया और उसे लोगोंने भावुकतामात्र समझा, किन्तु 'आर्ने' नामक कहानी मे जहाँ उसके नायक को आदर्श के लिये तडपते दिखलाया गया है, उसे पढकर बहुतों को विश्वास हो गया कि जार्नसन की प्रतिभा सर्वतोमुखी और पर्यवेक्षण-शक्ति बहुत गहरी है। इसी प्रकार 'सिनोव सालबेकन' और 'आर्ने' नामक आख्यायिकाएं भी अपने ढंग की निराली है। इन दोनों कहानियों को काफी ख्याति प्राप्त हुई है। 'आर्ने' मे टार्गिट नामक स्त्री का चरित्र-चित्रण इतना सुन्दर हुआ है कि नार्वे की कोई भी स्त्री उसे पढकर मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकती। 'सुखी बालक' मे जार्नसन की सर्वोत्कृष्ट कविता का नमूना पाया जाता है। इनकी कविताओं और गानों का अंग्रेजी अनुवाद आर्थर हबेल पामर महोदय ने किया है, जो प्रकाशित हो चुका है। 'सिनोव सालबेकन' के पहले गान मे नार्वे देश की स्तुति है, जिसे उस देश का राष्ट्रीय गान कह सकते हैं। यह हमारे देश के 'वन्दे-मातरम्' की तरह नार्वे मे विख्यात है। पाठकों की जानकारी के लिये उनके उस राष्ट्रीय गान के अंग्रेजी अनुवाद का हिन्दी

पद्यार्थ नीचे दिया जाता है:—

करते हैं हम नित्य वन्दना अपने प्यारे देश की।
जहाँ गगन-चुम्बी पर्वत हैं,
और उदधि की सुखद हिलोरें,
जहाँ वायु के द्रुत प्रवाह नित,
अगणित पर्णकुटी झकझोरें॥
क्यों न प्रेम से गद्गद होकर, जय बोलें उस देशकी।
अपने प्यारे देश की॥

जहाँ हमारी प्यारी माता,
सदा बलैयाँ लेती थी।
लोरी दे दे हमें सुलाती,
और सदा सुख देती थी।
क्यों न सदा विरुदावलि गायें ऐसे मधुर स्वदेश की।
अपने प्यारे देश की॥

यह गान लिखने के तीस वर्ष पश्चात अपने मित्र हर्मन ऐंकलर के विवाह-दिवस के उपलक्ष में जार्नसन ने देशभक्ति और आदर्श-मूलक एक कविता बनायी थी, जिसका भावानुवाद इस प्रकार है:—

है वह देश हमारा।
जहाँ विपुल अभिलाषा रूपी डाँड से,
खेकर हम निज जीवन-तरणी जायेंगे।
जहाँ सफलता के अभाव में हाथ मल,
उच्छ्वासों के जलद बना, पछतायँगे॥

जहाँ हरित दल-सङ्कुल घाटी और वन,
देख-देख निज नेत्र तृप्त कर पायेंगे।
ऐसा लुब्धक दृश्य, और भावी सुदिन—
है यह दृढ विश्वास एक हो जायेंगे॥

उपसाला विश्वविद्यालय मे जाने और कोपेनहेगन में अधिक कालतक रहने के बाद जार्नसन-महोदय को नाटक लिखने और उसे अपने निरीक्षण मे खिलवाने का बडा शौक़ लगा। १८५७ से १८५६ ई० तक बर्गन मे उन्होंने यह काम बडी धूम-धाम से किया।

सन १८८१ ई० मे जार्नसन-महोदय ने इंग्लैण्ड और अमेरिका की यात्रा की। इस यात्रा के बाद जीवन के प्रति उनका दृष्टिविन्दु तीक्ष्णतर हो गया; किन्तु 'सत्य' के प्रति उनकी आस्था पूर्ववत् ही बनी रही। उनका यह विचार हो गया कि संसार के सभी व्यक्ति और राष्ट्र पृथक् होने के स्थान पर मेल के साथ रह सकते है। उन्होंने नार्वे में कपट और प्रपंच की जो कार्यवाहियाँ देखीं, उनका चित्रण अपने समस्या-पूर्ण नाटकों—'राजा', 'सम्पादक' और 'दीवालिया'—में किया। उन्होंने अपने देश-वासियों के कुकृत्यों से दुखी होकर जब उनका चित्रण इस प्रकार नाटकों में किया, तो नार्वे के राजनीतिज्ञ उनसे बिगड बैठे, यही नहीं, बल्कि जार्नसन महोदय को मारने-पीटने की धमकी भी दी गयी, और एक नवयुवक ने उनकी खिडकी पर पत्थर भी फेका।

जार्नसन के नाटकों में 'नव दम्पति' विद्यार्थियों को बहुत पसन्द आया। 'लॅगड़ी हल्दा' भी उनकी आरम्भ की सुन्दर और मनोविज्ञान-पूर्ण कृतियों में से है। पहली रचना में तो यह दिखलाया गया है कि किस प्रकार नवविवाहिता लड़की अपने प्यारे माता-पिता को छोड़कर एक नितान्त अपरिचित व्यक्ति से प्रेम करने को विवश होती है। इसमें इस बात की व्याख्या की गयी है कि पैतृक प्रेम और दाम्पत्य प्रेम में क्या अन्तर होता है। दूसरे नाटक में चौबीस वर्ष की लॅगड़ी नायिका के ज्वलन्त प्रेम का चित्रण किया गया है जिसका चाहनेवाला किसी अन्य स्त्री को प्रेम करता है। काव्य की दृष्टि से जार्नसन महोदय का 'यंग विकिंग' उच्च कोटि का नाटक है।

जार्नसन-महोदय के सामाजिक नाटकों में 'मानवीय शक्ति के बाहर'* सब से अधिक विख्यात है। यह अपने समय की सर्वोत्तम रचनाओं में से एक कही जाती है। इसके प्रथम भाग में तो धार्मिक विश्वास और कट्टरता की समस्या पर प्रकाश डाला गया है और दूसरे भाग मे श्रमजीवी और पूॅजीवादी दलों के विचारों की विभिन्नता दिखलायी गयी है। इसका पहला भाग अमेरिका में बडी सफलता-पूर्वक खेला जा चुका है।

जार्नसन ने बाद में जो नाटक लिखे, उनमें 'लैबोरेमस', 'ढैगलानेट', और 'नव मदिरा' विशेष उल्लेखनीय हैं। सत्तर वर्ष की अवस्था हो जाने के बाद उन्होंने 'मेरी' नामक कहानी

* Beyond Human Control

लिखो। इससे प्रतीत होता है कि वृद्धावस्था मे भी उनके अन्दर कैसी सजीवता भरी हुई थी। १६०३ ई० में नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करने के बाद उन्होंने हास्यरस-पूर्ण व्याख्यान दिये थे। उनकी स्त्री अभिनेत्री का काम करती थीं। स्त्री के साथ उन्हे अन्ततक बड़ा प्रेम और सहानुभूति थी। अन्त में २६ अप्रैल १६१० ई० को उन्नीसवीं शताब्दी के इस प्रकाण्ड साहित्यिक का शरीरान्त हो गया।

जियोसू कार्डुकी

[इटैलियन कवि]

१९०६ ई० मे नोबेल-पुरस्कार इटली के तत्कालीन सर्व-श्रेष्ठ कवि और साहित्याध्यापक को प्रदान किया गया था। इस समय उनकी अवस्था सत्तर वर्ष की हो चुकी थी और वे बोलोना विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य कर रहे थे। मिस्ट्राल की तरह यह भी देशभक्त कवि थे। कार्डुकी महाशय मे भावुकता-पूर्ण कवित्व को अपेक्षा स्वतंत्रता की प्रवृति अधिक थी।

कार्डुकी का जन्म २७ जुलाई, १८३५ ई०, को वाल-डी-कैसेलो में हुआ था। उनके पिता गांव मे दवा-दारू का काम करते थे और कार्डुकी के जन्म के पहले राजनीतिक आन्दोलन

मे भाग लेने के कारण जेल जा चुके थे । शिशु कार्डुकी की अवस्था अभी तीन ही वर्ष की थी कि इनका परिवार टस्कन-मरेमा प्रदेश के वालगेरी नामक स्थान को चला गया । ग्यारह वर्ष की अवस्था तक बालक कार्डुकी यहीं पहाडियों पर और घाटियों मे घूमा करते थे । अपनी एक कविता मे इन्होंने अपने बचपन के सस्मरण लिखे है। उनकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई थी, इनके पिता उन्हे लैटिन पढ़ाते थे और इनकी माता इन्हे अलफीरी की कविताएँ सुनाया करती थी। सन् १८४८ ई० के अशान्त वातावरण मे उनका परिवार वालगेरी से फ्लोरेंस पहुंचा और कार्डुकी को स्कूल भेजा गया । अट्ठारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने "सैकिक्स और अल्केइक्स"-नामक पुस्तक लिखी जिसमे उन्होंने प्राचीन इटली की महिलाओं के आदर्श का चित्रण किया । गिर्जाघरों से सुधार में क्या-क्या बाधाएँ पडती हैं, इसपर भी उन्होंने हल्का प्रकाश डाला था। उन दिनों वे शिलर, बॉयरन और स्काट की कविताएँ विशेप रूप से पढ़ते थे।

सन् १८५६ ई० में वे सैन-मनियाटो की व्यायामशाला मे अध्यापक नियुक्त हो गये, किन्तु राजनीतिक और साहित्यिक विरोध में पड जाने के कारण इन्हें अरेजो में अध्यापक का जो स्थान मिला था, सरकार ने उसके लिये स्वीकृति नहीं दी, इसलिये विवशतः इन्हे फ्लोरेंस को लौटना पडा। उस अवस्था तक वे बड़े ही अकिंचन थे और अत्यन्त दरिद्रता-पूर्ण जीवन

व्यतीत कर रहे थे। पढ़ने के लिये पुस्तकें न खरीद सकने के कारण दूर-दूर की पुस्तकालयों में पढ़ने जाया करते थे और ग्रीक तथा लैटिन साहित्य का अध्ययन करने मे लगे हुए थे। उन्हीं दिनों उन्हे बरबेरा-नाकम एक इटैलियन प्रकाशक के यहाँ नौकरी भी मिल गयी, जिसकी पुस्तकों की भूमिका-आदि लिखने का साहित्यिक कार्य ये करते रहे। दुर्भाग्यवश इनके परिवार पर दो विपत्तियाँ पड़ीं—एक तो इनके भाई दान्ते ने आत्म-हत्या कर ली और दूसरे इनके पिता का शरीरान्त हो गया। अपने भाई के विछोह से विकल होकर इन्होंने 'अह्ला मेमोरिया-डी० डी० सी०' नामक सुन्दर पद्य लिखे। पीछे जब उन्होंने अपने सम्बन्धी और मित्र मेनीक की गुणवती कन्या से विवाह कर लिया, तो उनका जीवन काफी सुख पूर्ण हो गया। उनका गार्हस्थ्य जीवन सुख से व्यतीत होने लगा। उसी स्त्री से इनके चार बच्चे पैदा हुए, जिनमे से एक लड़की का नाम इन्होने 'लिबर्टी' (स्वतंत्रता) रक्खा। इसके बाद उनपर पुनः विपत्तियाँ पड़ीं—जिस वर्ष कार्डुकी की माता का देहान्त हुआ, उसी वर्ष उनका तीन वर्ष का छोटा लडका दान्ते भी चल बसा। माँ तो पर्याप्त रूप से वृद्धा हो चुकी थीं, इसलिये उनके लिये उतना दुःख नहीं हुआ, पर छोटे बच्चे की मृत्यु ने उन्हे विक्षिप्त-सा कर दिया। बच्चे की स्मृति में जो करुणा-पूर्ण पंक्तियाँ उन्होंने लिखी है, वे अत्यन्त मर्मस्पर्शिनी है।

कार्डुकी-महोदय की १८७० ई० तक की संग्रहीत कविताओं से प्रतीत होता है कि वे समय-समय पर राजनीतिक प्रभाव मे आकर किस प्रकार उत्तेजित हो उठते थे। इनमें से अधिकाश कविताएँ 'इल पोलोजिआनो' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुई थीं। १८६० ई० मे वे ग्रीक और लैटिन के अध्यापक होकर पिस्टोइआ गये, और वहीं इटली के महावीर देशभक्त गेरी-वाल्डी की सिसली-यात्रा पर कविता लिखी। इसके बाद दस वर्ष तक ये राजनीतिक परिवर्तनो से प्रभावान्वित होते रहे। इनकी "शैतान से प्रार्थना" * नामक कविता १८६६ ई० में एनोद्रियो रोमानिओ के हस्ताक्षर से प्रकाशित हुई थी, जिसके कारण वे अत्यन्त शीघ्रता-पूर्वक विख्यात् बन गये। उनकी यह कविता पूर्णतः राजनीतिक थी। उन्होंने नरम साम्राज्यवादी और धर्मवादियों की ऐसी खबर ली कि उन्हे इन दलवालों ने 'अयोग्य प्रजावादी' का नाम दे डाला। इनकी कविता मे क्रान्ति भरी हुई थी और उसमें सावोनारोला, लूथर, तस तथा वीक्लिफ आदि सभी विख्यात देशभक्तों की चर्चा थी। इनके पद्य चार-चार पंक्तियों में सुन्दर और गाये जाने योग्य थे, इसलिये इनका प्रचार बहुत शीघ्रता-पूर्वक हुआ।

"शैतान से प्रार्थना" के प्रकाशन के सात वर्ष पूर्व वे बोलोना विश्वविद्यालय के अध्यापक नियुक्त हो चुके थे। यहीं वे

---

* Hymn to Satan

शारीरान्त होने तक रहे, और इस प्रकार छियालीस वर्ष तक अध्यापन-कार्य करते रहे। इस बीच उन्हे मैमिआनी से शिक्षा-सचिव के पद का प्रस्ताव मिला, किन्तु कवि कार्डुकी ने टस्कैनी ने छोड़ने का निश्चय कर लिया था। विद्यार्थियों पर इनका अद्भुत प्रभाव था। "शैतान से प्रार्थना" प्रकाशित होने के पश्चात् उन्हे सरकार का कोप-भाजन बनना पड़ा। सरकार विद्यार्थियो पर उनका अत्यधिक प्रभाव देखकर डर गयी और उसने उन्हें वहाँ से बदलकर नेपिल्स में लैटिन पढाने के कार्य पर लगाना चाहा। कार्डुकी ने यह कहकर नेपिल्स जाने से इन्कार कर दिया कि वह अपने आपको लैटिन पढ़ाने-योग्य नहीं समझते। लगातार सरकार का विरोध करते रहने के कारण उन्हे बोलोना मे अध्यापन-कार्य करने से रोक दिया गया। इसके बाद इटली के मन्त्रि-मण्डल मे काफी परिवर्तन हो गया और कवि कार्डुकी ने भी विश्वविद्यालय मे राजनीतिक आन्दोलन की शिक्षा देनी बन्द कर दी।

इसके बाद इन्होंने व्याख्यान देने का काम खूब जोरों पर आरम्भ किया, और इस रूपमे लोग इनकी ओर अधिक आकर्षित होने लगे। कुछ ही दिनों मे ये इटली के चुने हुए चार व्याख्यानदाताओं में से हो गये। उन्हीं दिनों रोम मे दान्ते के नाम पर एक 'चेयर'* स्थापित हुई। ये यहाँ

---

*किसी विश्वविद्यालय या शिक्षा-संस्था मे किसी प्रख्यात व्यक्ति के नाम पर एक 'चेयर' रक्खी जाती है, और चुने हुए

प्रतिवर्ष व्याख्यान देने लगे। दान्ते के सम्बन्ध मे इन्होंने काफी अध्ययन किया और उसपर अधिकार-पूर्वक विचार किया। कार्डुकी-महाशय मे विशेषता यह थी कि वे साहित्य के द्वारा क्रान्ति उत्पन्न करना चाहते थे। उनकी 'ऑडी बारबेर' (१८७३-७७ ई०) नामक रचना से इस बात की पुष्टि होती है। अपने दो आलोचक मित्रों—चिआरिनी और तार्जिआनी—से यह कहा करते थे कि संसार के सर्वश्रेष्ठ कवि होमर, पिंडर, थिवोक्रिटस, सोफोक्लिस और अरिस्टोफेंस हो गये हैं।

कार्डुकी-महोदय ज्यों-ज्यों वृद्ध होने लगे, सम्राट् के प्रति उनका विरोध भाव धीरे-धीरे कम होने लगा। इसका कारण कुछ लोग तो स्वाभाविक वृद्धावस्था-जन्य उत्साह-हीनता बतलाते हैं, और कुछ लोग यह कहते है कि जिन दिनों कवि कार्डुकी वोलेना मे थे, उन्हीं दिनों सम्राट् और सम्राज्ञी का वहाँ आगमन हुआ। सम्राज्ञी को कविता से बडा प्रेम था और वे एक सफल आलोचक थीं। उन्होंने कवि कार्डुकी को बुलवा भेजा। कार्डुकी-महोदय लोगों से मिलते-जुलते कम थे और केवल विश्वविद्यालय के सहकारियों तथा पुस्तकों मे ही उनका अधिक समय कटता था। अस्तु, किसी प्रकार अनिच्छा-पूर्वक वे सम्राट् के पास गये। सम्राज्ञो ने उनकी कविताओं की काफी प्रशंसा की और एक वास्तविक समालोचक की भाँति इनकी उत्तम

विद्वान् विशेषज्ञों के व्याख्यान होते हैं।

रचनाओं की कद्र की। इससे कार्डुकी सम्राज्ञी की साहित्यिक अभिरुचि पर मुग्ध हो गये और इस घटना के बाद सदा सम्राज्ञी को पत्रादि लिखते रहे। फिर उन्होंने सम्राट् का कभी विरोध नहीं किया।

सन् १८९९ ई० मे कवि कार्डुकी को पक्षाघात की बीमारी हो गयी और उनकी आर्थिक अवस्था भी ख़राब हो गयी। फिर भी वे ज्यों-त्यों करके अपने शिष्य सेवेरिनो फेरारी की सहायता से विश्वविद्यालय का काम करते रहे। जब उनकी आर्थिक अवस्था ऐसी हो गयी कि उन्हे अपना बहुमूल्य पुस्तकालय बेचने की नौबत आ गयी और सम्राज्ञी को इसका पता लगा तो उन्होंने उनका पुस्तकालय अच्छे दामों मे ख़रीद लिया और कवि को इस बात की स्वतंत्रता दे दी कि वह अपने जीवन-भर उस पुस्तकालय का उपभोग स्वतंत्रता-पूर्वक कर सकते हैं। १९०४ ई० मे सरकार ने कार्डुकी महोदय को पेन्शन दे दी। दूसरे ही वर्ष कवि के सहायक कार्यकर्त्ता फेरारी का देहान्त हो गया, जिससे इन्हे अत्यन्त दुःख हुआ। उसके दूसरे ही वर्ष जब इन्हे नोबेल-पुरस्कार प्रदान किया गया, तो वे उसे लेने के लिये अपना स्थान छोडकर जाने मे असमर्थ थे। स्वीडन सम्राट् ने अपने ख़ास आदमी को बोलोना भेजकर वृद्ध कवि को पुरस्कार-सम्बन्धी प्रमाणपत्र दिलवाया। यह प्रतिष्ठा प्राप्त करने के बाद कार्डुकी महोदय केवल दो मास और जीवित रहे और १६ फ़र्वरी १९०७ ई० को इनका

शरीरान्त हो गया। इनकी मृत्यु के बाद सम्राज्ञी ने इनका घर खरीदकर उसे सार्वजनिक स्मारक के रूप मे बनवा दिया।

कार्डुकी की कविताओं मे एक अद्भुत सजीवता और लावण्य का सम्मिश्रण है। उनकी कोई कविता अपूर्ण नहीं रही। इनकी कतिपय रचनाओं में तो शोक, करुणा, आशा और वान्छना का अद्भुत प्रवाह है—विशेषकर प्रकृति और जीवन-सम्बन्धी कविताओं मे यह भाव विशेषरूप से भरे है।

कवि कार्डुकी कहा करते थे कि उनके जीवन के तीन खास सिद्धान्त हैं—राजनीति मे सबसे पहले इटली की समस्या, कला मे सबसे पहले प्राचीन काव्य, और जीवन मे सबसे पहले अकपट सहृदयता और शक्ति। राजनीतिक उग्रता के साथ-साथ अधिक अवस्था मे उन्होंने धार्मिकता और ईसाइयत के विरुद्ध भी विशेष कुछ नहीं लिखा। वास्तव मे धार्मिकता के विरुद्ध तो वे कभी नहीं थे, हाँ, धार्मिक कट्टरता और अन्ध-भक्ति का उन्होंने अवश्य विरोध किया था। वे काल्पनिक गाथाओं को गढ़ने की अपेक्षा ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर कुछ लिखना अधिक पसन्द करते थे। वृद्धावस्था मे उन्होंने प्राचीन इटली और उसके साहित्य की काफ़ी प्रशंसा की है। उन्होंने कथाओं मे अद्भुतता का सामंजस्य करने के स्थान पर सत्य और वास्तविकता का आधार लेना अधिक उपयुक्त समझा है। श्री विकरस्टेथ नामक आलोचक ने लिखा है—"कार्डुकी

ने कला के दृष्टिविन्दु से सदा मनुष्य, प्रकृत्ति और स्वाधीनता को ही अपनी कविता का विषय बनाया है और इनकी समस्त कविताएँ इन्हीं तीन विषयों पर आधारभूत हैं।" स्त्रियों के सम्बन्ध में कार्डुकी की कविताओं को आदर्शवाद की श्रेणी में नहीं रख सकते, क्योंकि वाल्ट ह्विटमैन की तरह इन्होंने स्त्रियों के वाह्य सौन्दर्य—नख-शिख—का वर्णन खूब किया है। श्री० विकरस्टेथ का कथन है कि अपने देश—इटली—के सम्बन्ध मे कवि कार्डुकी ने जो-कुछ लिखा है, यह वास्तव में आदर्शवाद की श्रेणी मे परिगणनीय है।

———

रुडयार्ड किप्लिंग

—:०:ஃ:०:—

सन् १९०७ ई० मे रुडयार्ड किप्लिग-नामक पहले अंग्रेज कवि और कहानी-लेखक को नोबेल पुरस्कार मिला। इसके पहले फ्रास, जर्मनी, नार्वे, स्पेन, इटली और पोलैण्ड को यह प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी थी। इंग्लैण्ड का नम्बर सातवें वर्ष आया। जिस वर्ष किप्लिग महोदय को यह पुरस्कार मिला, इंग्लैण्ड के कितने ही अन्य लेखकों को नाम और कृतियाँ 'नोबेल फाउण्डेशन' और 'स्वीडिश एकैडमी' के पास भेजे गये थे। इन लेखकों के नाम क्रमशः स्विनबर्न, जार्ज मेरेडिथ, जान मार्ले, टामस हार्डी, बैरी और रॉबर्ट ब्रिज थे। किप्लिग-महोदय का नाम तो सब से पीछे, और एक पत्र के यह प्रश्न

करने पर कि "किप्लिंग का नाम क्यों न भेजा जाय ?", भेजा गया था, और संयोग-वश किप्लिंग को ही वह आदर भी प्राप्त हुआ। उन्हे पुरस्कार मिलने के बाद कुछ विरोधियों ने फिर आवाज उठाई कि "आदर्शवाद क्या है, ओर किप्लिंग की रचनाओं मे उसका कहा तक समावेश है ?" अन्त में आदर्शवाद की परिभापा अधिक उदार और विस्तृत रूप में की गयी और यह सिद्ध किया गया कि किप्लिंग की रचनाओं मे आदर्शवाद प्रगाढ़ रूप मे विद्यमान है! डब्ल्यू० बी० पार्कर ने लिखा कि "किप्लिंग की रचनाओं मे आदर्शवाद होने का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि लड़के उनकी रचनाओं को बड़े चाव से पढ़ते हैं।"

आदर्शवाद के अतिरिक्त किप्लिंग की रचनाओं में दो अन्य प्रधान गुण ये हैं कि उनमें साहस और पौरुष का प्रबल स्रोत मिलता है और नवयुवकों एवं कालेज के छात्रों को उनसे तेजस्विता, प्रतिष्ठा और वीरता-पूर्ण कार्य-कलाप की शिक्षा मिलती है। उनसे साहसपूर्ण वक्तृत्व और क्रिया के लिये उत्तेजना भी मिलती है। उनकी कविताओं और कहानियों मे से 'दि डेज वर्क' 'किम' और 'लाइफ्स हैंडीकैप्स' आदि प्रसिद्ध रचनाओं से निर्भयता का अच्छा पाठ मिलता है।

विख्यात् समालोचक गिलबर्ट चेस्टर्टन ने किप्लिंग महोदय की रचनाओं के सम्बन्ध मे लिखा है—"उनकी रचनाए ऐसी नहीं है जिनसे युद्ध की सी उत्तेजना मिलती हो, वरन उनमें

ऐसे साहस और वीरता का सम्मिश्रण है जो इंजीनियरों, नाविकों और खच्चरों में होती है। इस प्रकार की कहानियों में से 'दी ब्रिज बिल्डर्स' 'दि शिप दैट फाउण्ड हरसेल्फ' ".००७," 'विथ दि नाइट मेल' और 'वायरलेस' इसी कोटि की है।

किप्लिंग की कविताएं पूर्ववर्ती नोवेल-पुरस्कार विजेता कवियों से भिन्न हैं। इनकी कविताएं भी देशभक्ति-पूर्ण है, किंतु वे मिस्ट्राल और जार्नसन की कविताओं की अपेक्षा कम उद्दीपनमयी है। वास्तव मे बहुत-सी बातों मे किप्लिंग अपने देश के प्रति बड़े खरे विचार रखते है। इधर उनके विचार प्रजावादियों से मिलने लगे है और वे अपने पूर्ववर्ती विचारों के कुछ-कुछ विरुद्ध होकर साम्राज्यवाद के विरोधी बन गये हैं, जिसका परिचय उनके 'ए पिल्ग्रिम्स वे' (यात्री का पथ) नामक कविता के प्रत्येक पद से मिलता है। देश की प्रतिष्ठा और सेवा के सम्बन्ध में ऐसी आकर्षक पंक्तिया लिखनेवाले कवि थोड़े ही हुए हैं। उनकी 'इफ' 'फार आल वी हैव ऐण्ड आर' और 'दि चिल्ड्रन्स साग' शीर्षक कविताएं इस प्रकार के सुन्दर उदाहरणों में से है।

किप्लिंग महोदय को संसार का सुन्दर ज्ञान है, और उन्होंने काफी यात्रा की हुई है।

इन्होंने अपने बच्चे के देहान्त पर जो शोकपूर्ण कविता "माइ ब्वाय जैक, १६१४-१८" शीर्षक के अन्तर्गत लिखी है, वह करुणा-रस से ओतप्रोत है। उन्होंने १६ मई, १६२१ ई०

को सार्बोन में जो व्याख्यान दिया था, उससे मालूम होता है कि उनमें आध्यात्मिकता की पुट कितनी थी। उन्होंने कहा है—"कोई भी व्यक्ति टूटे हुए (अधूरे) संसार की पूर्ति उस सरलता के साथ नहीं कर सकता, जिस प्रकार अधूरे वाक्यों की कर सकता है।"

किप्लिंग महोदय को नोबेल प्राइज उनकी आरम्भिक रचनाओं के कारण मिला है। पुरस्कार प्राप्त करने के समय उनकी अवस्था बयालीस वर्ष की थी और इस प्रकार के पुरस्कार विजेताओं में ये सबसे अल्प-वयस्क थे। इस अवस्था के पहले ही उनकी गद्य और पद्य की इतनी रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी थीं, जितनी इनकी दुगनी अवस्थावालों की न हुई होंगी। इनका जन्म भारत के बम्बई नगर मे ३० दिसम्बर, १८६५ ई० को हुआ था। इन्होंने अपने माता-पिता का सा ही मानसिक उत्कर्ष प्राप्त किया है। इनके पिता जान लॉकउड किप्लिंग कलाकार थे और इनके जन्म के समय लाहौर स्कूल आफ़ इन्डस्ट्रियल आर्ट के संचालक थे। जान किप्लिंग कहानी कहने की कला में बड़े निपुण थे और उन्हे कला तथा शिल्प-विज्ञान का अच्छा अभ्यास था। उन्होंने अपने पुत्र की आरम्भिक कहानियों मे से कुछ के चित्र बनाये थे। उनकी लिखी हुई 'बीस्ट ऐण्ड मैन आव इण्डिया' (भारत के पशु और मनुष्य) रुडयार्ड किप्लिंग के नाम से १८९१ ई० मे लन्दन से प्रकाशित हुई थी। इसमे चित्राङ्कण असाधारण रूप में किया गया है।

रुडयार्ड किप्लिंग की माता का नाम एलिस मैकडॉनेल्ड था। उन्होंने अपने पुत्र मे उत्साह और अपूर्व हास्य भर दिया था।

किप्लिंग का नाम जोज़ेफ़ रुडयार्ड रक्खा गया था। परन्तु उनका पहला नाम कभी-कभी ही लेने मे आता था। रुडयार्ड नाम इंग्लैण्ड की एक झील के नाम पर रक्खा गया था, जहाँ किप्लिंग के माता और पिता पहले-पहल मिले थे। उनका शैशव और बाल्यावस्था के आरम्भिक दिन भारत मे ही व्यतीत हुए थे, इसलिये इस देश के प्रति उनमे प्रेम हो गया था। ये शिक्षा प्राप्त करने के लिये डिवॉनशायर भेज दिये गये थे, जहाँ शिक्षा समाप्त करके वे यूनाइटेड सर्विसेज कालेज, वेस्टवर्ड को चले गये। वे अपनी माता की याद मे बहुत व्याकुल रहा करते थे और उनके लिये इंग्लैण्ड मे पैदा हुए अंग्रेज बच्चों के साथ मिलना-जुलना कठिन हो गया। सन् १८८० ई० में वे भारत लौट आये और यहाँ अख़बार-नवीसी के क्षेत्र मे घुसने की चेष्टा करने लगे। वे भारतीय सैनिकों की स्थिति जानने के लिये भी सचेष्ट रहने लगे। उनके सम्बन्ध मे यह कहानी प्रसिद्ध है कि जब वे लाहौर मे अखबार-नवीसी का काम करते थे, उन्हीं दिनों ड्यूक आफ कैनाट भारत-भ्रमण करते हुए उस स्थान पर पहुँचे, और उनसे पूछा कि वे भारत में रहकर क्या काम करना चाहते हैं। नवयुवक किप्लिंग ने तुरन्त उत्तर दिया—"माननीय महोदय, मैं कुछ समय तक सेना के साथ रहना और सीमान्त प्रदेश जाकर एक पुस्तक

लिखना चाहता हूं।" ड्यूक ने किप्लिंग की प्रार्थना स्वीकार कर ली और परिणाम-स्वरूप 'हिल्स टु आईज आव एशिया' नामक पुस्तक के अन्तर्गत 'डिपार्टमेण्टल डिट्टीज' 'सोल्जर्स', 'थ्री', 'अण्डर दि देवदार' और कई अन्य सुन्दर कहानियाँ लिखकर समाप्त कीं।

किप्लिंग ने भारत के सम्बन्ध में—और विशेपकर सैनिकों और उनकी स्त्रियों के वारे में—जो कुछ लिखा, उसको लेकर अंग्रेजों में खूब चर्चा हुई और यह कहा गया कि किप्लिंग की कहानियाँ अतिशयोक्ति-पूर्ण हैं। भारत का भ्रमण किये हुए वहुतेरे समालोचकों ने उनकी रचनाओं की सत्यता प्रमाणित की और कुछने उनकी सचाई में सन्देह प्रकट किया। कुछ ऐसे आलोचक भी थे जो भारतीयों से किप्लिंग के लिखे हुए विषयों पर वार्तालाप कर चुके थे और उन्होंने उनकी रचना को अस्वाभाविक वतलाया।

सन् १८८२ ई० से १८८६ ई० तक वे भारत के कई नगरों—लाहौर, वम्बई और मांडले—मे रहे और वहाँ के सैनिक और शासक अफ़सरों से मिलते-जुलते रहे। इन दिनों उन्होंने जो कहानियाँ या पद्य लिखे, वे भारत के अंग्रेजी समाचारपत्रों में प्रकाशित हुए थे। इनकी पहली पुस्तकाकार रचना इलाहाबाद की ए० एच० ह्वीलर एण्ड कम्पनी ने प्रकाशित की थी और वह विशेष रूप से रेल्वे स्टेशनों पर बिकती थी। किप्लिंग के अपने हाथ से

खींचे हुए चित्रों के साथ उनकी कहानियों का सुन्दर संग्रह 'वी विली विंकी'* नाम से प्रकाशित हुआ था, जिसे उन्होंने अपनी माता को समर्पित किया था। अपने संग्रह के प्रकाशन का अधिकार—जिसमें बहुत-से सुन्दर और अद्भुत चित्र थे—उन्होंने हाल मे ही जे० पियरपॉण्ट मार्गन को दिया था, जिसका पारिश्रमिक उन्हे ५० हजार रुपये से अधिक प्राप्त हुआ था।

जब किप्लिंग की अवस्था पचीस वर्ष की हुई तो अपने मस्तिष्क मे भारत के वास्तविक चरित्र चित्रण की सामग्री और वीरता-पूर्ण घटनाओं के स्वचित्रित चित्र लेकर वे इंग्लैण्ड गये और वहाँ उन्हे प्रकाशित कराने की चेष्टा करने लगे। लन्दन से वे इसी उद्योग में प्रशान्त महासागर के मार्ग से केलीफोर्निया और वहाँ से न्यूयार्क पहुंचे। उन्हे आशा थी कि अमेरिका के सम्पादक उन्हे प्रोत्साहित करेंगे, क्योंकि उनके पास कुछ इस प्रकार के परिचय पत्र थे, जिनसे उन्हे ऐसी सहायता मिलने की आशा थी। किन्तु अमेरिका में उनका स्वागत नहीं हुआ। बाद मे शायद उपर्युक्त सम्पादकों और प्रकाशकों ने इस बात पर खेद भी प्रकट किया कि उन्होंने एक नये प्रतिभाशाली लेखक को खो दिया। लन्दन मे भी धीरे-धीरे उनका यश फैला। किप्लिंग की रचनाओं की कद्र सबसे पहले एण्ड्रू लाग नामक समालोचक ने की, यद्यपि बाद मे उन्होंने

*Wee Willeie Wikie.

किप्लिंग की कुछ रचनाओं को अत्यन्त त्रुटि-पूर्ण भी बतलाया।

किप्लिंग महोदय को उनकी आरम्भिक रचनाओं के तीन गुणों पर नोबेल-पुरस्कार मिला। उन्होंने अपनी रचनाओं मे उन्नीसवीं सदी के अन्त के एङ्गलो-इंडियनों के जीवन का सजीव चित्रण किया है। उन्होंने अंग्रेज और हिन्दुस्तानी फौजी सिपाहियों के रस्म-रिवाज, रहन-सहन, बोल-चाल और स्वभाव आदि का सुन्दर वर्णन किया है। जिस तरह मिस्ट्राल-महोदय ने प्रोवेंस की ग्रामीण भाषा को लुप्त होने से बचाया था, उसी प्रकार किप्लिंग महोदय ने भारत के एङ्गलो-इंडियन सैनिकों के सम्प्रदाय की ठेठ भाषा का साहित्यिक उपयोग किया। उनकी रचनाओं मे सैनिकों के जीवन के कर्कश और अभद्र रूप का उल्लेख सुन्दर रूप मे हुआ है। उनकी रचनाओं मे से 'भूत का रिक्शा' (The Phantom Rickshaw), 'तीन सैनिक' (Soldiers Three) 'शहर पनाह पर' (On the City Wall) 'मांडले' (Mandalay) और 'प्रेमी की प्रार्थना' (The Lover's Litany) आदि पुस्तकों मे बहादुरी खतरा और आकांक्षाओं की स्मृति का सुन्दर समावेश है। भारत छोडने के दस वर्ष के पश्चात् १९०२ ई० उन्होंने अत्यन्त सुन्दर कविताएँ लिखीं, जिनका संग्रह 'टूटे हुए आदमी' (The Broken Men) नामक पुस्तक मे हुआ है।

अपनी इस सफलता के बाद जब किप्लिंग महोदय पुनः

अमेरिका गये, तो वहाँ उनका बडा स्वागत हुआ। अमेरिका में ओलकाट बैलेस्टियर की बहन कैरोलिन बैलेस्टियर के साथ इनका प्रेम हो गया और बाद मे १८६२ ई० मे लन्दन में उनके साथ इनका विवाह भी हो गया। सर आर्थर कॉनन डायल ने किप्लिग को पक्का पत्नि-भक्त लिखा है। विवाह के बाद संसार-भ्रमण करते हुए किप्लिग-महोदय अपनी स्त्री के साथ पुनः अमेरिका गये थे।

किप्लिग की एक छोटी लडकी का अल्पावस्था मे ही देहान्त हो गया था। उसकी मृत्यु से दुखी होकर उन्होंने 'जंगल बुक' नामक पुस्तक लिखी। अमेरिका मे रह-कर उन्होंने 'सात समुद्र' (The Seven Seas) और 'अनेक अन्वेषण' (Many Inventions) नामक पुस्तक लिखी। उनकी बाद की रचनाओं मे 'पथ-बाधक' (The Disturber of Traffic) 'खोया हुआ सैन्य दल' (The Lost Legion) और 'स्त्री का प्रेम' (Love o' Women) प्रसिद्ध है। इनकी प्रार्थना-सम्बन्धी पुस्तकों मे 'दी रिसेशनल' (The Recessional)एक अमर कृति है। इनकी अमेरिका की रचनाओं मे 'बुझी रोशनी' (The Light That Failed), 'क्रिया और प्रतिक्रिया' (Actions and Re-actions) और 'चौथे आयतन की एक भूल' (An Error of the Fourth Dimension) विशेष उल्लेखनीय हैं।

किप्लिग की सन् १८६० ई० से १६०० ई० तक की

रचनाओं में विशेष प्रौढ़ता आ गयी है। १८६७ ई० मे इन्होंने “.००७” और “दिन का कार्य” (The Day's Work) नामक दो रचनाएँ प्रकाशित करायीं। १८६६ ई० किप्लिग के जीवन मे विशेष घटना का वर्ष था। इसी वर्ष अमेरिका जाने पर वे न्यूमोनिया रोग से पीडित हो गये और कई सप्ताह तक बीमार रहे। इस रोग से वे स्वस्थ तो हो गये; पर कुछ समालोचकों का कथन है कि इसके बाद उनकी सारी साहित्यिक योग्यता जाती रही, क्योंकि उनकी बाद की रचनाओं मे वह सजीवता नहीं रही। किंतु ऐसी अवस्था में भी उन्होंने भारत के सम्बन्ध में बहुत-कुछ लिखा और 'यदि' (If) तथा 'पृथ्वी का अन्तिम चित्र' (When the Worlds Last Picture is Painted) नामक सुन्दर रचनाएँ प्रकाशित करायीं।

बालोपयोगी साहित्य लिखने की ओर उनकी अभिरुचि पहले से ही थी—इनकी 'जंगल-बुक्स' (Jungle Books) और कहानियाँ बाल-संसार में काफी पसन्द की गयीं। इसी प्रकार इनकी समुद्री कहानियाँ भी बालकों के मनोरंजन के लिये अच्छी सिद्ध हुई। इनमे साहसी कप्तान (Captains Courageous) विशेष रूप से प्रसिद्ध हुई। इस प्रकार की अधिकाश कहानियों के संग्रह (Puck of Pook's Hill, Rewards and Fairies और Kim) उनकी अधिक प्रचलित पुस्तकों में से है। उन्होंने

'पंचराष्ट्र' (The Five Nations) नामक काव्य-संग्रह भी प्रकाशित कराया। इनकी 'किम' या 'किम्बाल ओ हारा' (लाहौर का अनाथ बालक) ने यह सिद्ध कर दिया कि बीमारी के बाद भी उनकी साहित्यिक योग्यता और नाटकीय कौशल में कमी नहीं आयी थी। बच्चों को इस कहानी से पर्याप्त उद्वेलन मिलता है। इसमे उन्होंने तिब्बती लामा के साथ यात्रा करने का रोचक वर्णन किया है।

बीसवीं सदी के साथ नये-नये कवियों और कहानी-लेखकों का अभ्युदय हुआ है। जिस समय किप्लिंग को नोबेल-प्राइज मिला, उस समय यद्यपि वे पूरे ओज के साथ अपनी लेखनी चला रहे थे, पर साहित्यिक क्षेत्र मे उन्हे पुरानी पीढ़ी का लेखक समझा जाता था और वे आधुनिकता से पिछड़े हुए समझे जाते थे। १९०७ ई० के नोबेल-पुरस्कार की घोषणा के बाद संसार के प्रत्येक सभ्य देश मे एक नयी दिलचस्पी फैल गयी। किप्लिंग के ग्रन्थों का अनुवाद डेनिश, डच, फ्रेंच, जर्मन, इटैलियन, नार्वेजियन, पॉलिश, रूसी, सर्वियन, स्पेनिश और स्वीडिश भाषाओं मे हो गया। साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं ने उनकी १९०७ ई० के पहले की रचनाओं की आलोचना आरम्भ कर दी और उनके 'आदर्श' साहित्य के लिये नोबेल-पुरस्कार दिये जाने पर स्वीडिश एकैडमी की प्रशसा की जाने लगी। 'लन्दन नेशन' ने लिखा—"अग्रेजी भाषा मे किप्लिंग की कोटि का कोई ऐसा लेखक मुश्किल से मिल

सकता है जिसने सैनिक वर्णन इतनी सफलता के साथ किया हो।" 'न्यूयार्क वर्ल्ड' ने लिखा—"पाठशाला के लड़कों की भाँति किप्लिंग मार-पीट का वर्णन करते हैं, पर ऐसा मालूम होता है, जैसे वे किसी घटना का अन्त उन बालकों की ही तरह नहीं करते।" 'शिकागो पोस्ट' ने यह टिप्पणी कसी कि "उन (किप्लिंग) का आदर्शवाद 'शक्ति' का आदर्शवाद है, और उनकी अंग्रेजी काफ़ी जोरदार है।"

इस प्रकार उनकी रचनाओं के सम्बन्ध मे अनेक मत है, किन्तु यह सच है कि उनके ग्रन्थों में दो प्रकार की शैली पायी जाती है। एक तो वह है जिसमें एक दम आदर्शवाद है। इस श्रेणी में 'दीनाशाद की शादी'* 'दुखों का द्वार'† 'मेरी पुत्रबधू'‡ और 'गैली स्लेव' (काव्य) का नाम लिया जा सकता है। किन्तु 'दिन का काम'§ और 'गहरे समुद्र का शैतान'|| और कुछ अंशों में 'ब्रशवुड ब्वाय' यथार्थवाद के अच्छे उदाहरण है।

नोवेल-पुरस्कार प्राप्त हो जाने के बाद किप्लिंग ने अपनी कलम ढीली कर दी और फिर बहुत कम लिखने लगे। इनकी बाद की रचनाओं में अधिकाश में युद्धों का ही वर्णन है। इनमें से 'समुद्रीय युद्ध'¶ 'फ्रास' और 'आयर्लैण्ड के गारद का इतिहास'** अधिक उल्लेखनीय है। अन्य प्रकार की

*The Courtship of Dinah Shadd †The Gate of the Hundred Sorrows. ‡My Son's Wife §The Day's work ||The Devil of Deep Sea. ¶Sea Warfare **History of the Irish Guards

रचनाओं मे 'महान् हृदय'* उन्होंने १९१९ ई० में रूजवेल्ट को श्रद्धाञ्जलि देने के लिये लिखी थी। उन्होंने इंगलैण्ड और अमेरिका से शान्ति-स्थापन के लिये अपील के रूप में भी कविताएँ लिखी थीं। 'लार्ड राबर्ट' के प्रति जो शोकोद्गार उन्होंने लिखे है, वह भावुकता से परिपूर्ण है और उसमे करुण-रस का विकास अच्छा हुआ है। इसके कुछ पदों में व्यंग का सम्मिश्रण भी समुचित रूप मे हुआ है। १९२३ ई० के आस-पास भी इन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी थीं, किन्तु उनमे 'एशिया की दृष्टि'† (जिसमे पूर्वीय देशवाले यूरोपियनों को किस दृष्टि से देखते हैं, इसका विवरण है) और 'उच्छ्वास'‡ अधिक प्रसिद्ध हैं।

किप्लिंग की रचनाओं की आलोचना काफी तौर पर हुई है और फिलिप गेडाला ने उनकी एक पुस्तक ('मांडले') की समालोचना 'ए गैलेरी' नामक पुस्तक मे करते हुए यहाँ तक लिख दिया है कि किप्लिंग ने बहुत-सी बातों को थोड़े-से-थोड़े शब्दों मे कह दिया है और उन्होंने अंग्रेजी भाषा पर शान रखकर उसे तेज कर दिया है। उस तेज धार से उन्होंने अंग्रेजी गद्य के खुरदरे धरातल को काटकर बराबर कर दिया है, किन्तु यह बात भी सच है कि उनकी कविता की शैली में पुरानापन काफी है और नई-शैली की कविता के पाठकों को

*Great Heart †Eyes of Asia. ‡The Fumes of the Heart.

उसे पढ़कर वैसा आनन्द नहीं मिलता।

किप्लिंग ने क्रियात्मक रूप में सार्वजनिक जीवन में कम भाग लिया है, और १६२३ ई० मे पहले-पहल उन्हे सेण्ट एण्ड्रूज विश्वविद्यालय मे भाषण करने का निमंत्रण मिला था।

किप्लिंग का आदर्श कोरी भावुकता से ही पूर्ण नहीं है—उसमें क्रियाशीलता और उत्तरदायित्त्व की छाप है। 'गोरों का उत्तरदायित्त्व'* मे उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि उन्हे अपने युवकों को शुद्ध मनुष्यता की दीक्षा देनी चाहिए। यद्यपि उनकी आरम्भिक रचनाओं मे बहुत-सा अंश ऐसा है जिसे कुछ हद तक 'फ़ालतू' कह सकते है, पर उनमे भी ध्यानपूर्वक सुनने और देखने के लिये सन्देश है। दो दशाब्दी पहले के कालेजों के विद्यार्थी इनकी रचनाओं को जितने चाव के साथ पढते थे, उतने चाव से आज शायद किसी की रचना नहीं पढी जाती, यही नहीं, अब भी सुशिक्षितों और अपढ़ यूरोपियों और अमेरिकनों द्वारा इनकी रचनाओं के उद्धरण प्रायः सुनने मे आते है।

किप्लिंग महोदय मे यह एक बड़ी विशेषता थी कि उन्होंने आर्थिक लाभ के लिये कभी अपनी साहित्यिक रचना का मान (स्टैंडर्ड) नीचे नहीं गिराया। उन्होंने सदा निर्भीकता और खरेपन के साथ काम लिया है।

---

*The white Man's Burden

सेलमा लेजरलॉफ़

१६०६ ई० का साहित्यिक मुकुट सेलमा लेजरलॉफ नामक स्वीडिश महिला के सिर बँधा। सेलमा के पिता लेफ्टिनेंट लेजरलॉफ बड़े ही खुशदिल, साहसी और विख्यात् पुरुष थे। सेना से अवकाश प्राप्त करके वह घर पर ही रहते थे और प्रायः अपने पुराने साथियों की मेहमानदारी और आव-भगत मे लगे रहते थे। सेलमा की शिक्षा का उन्हे खास खयाल था और वे उन्हे स्वीडन का प्राचीन इतिहास और अपने वंश की परम्परागत कथाएँ बड़े चाव से सुनाते थे। आगे चलकर सेलमा ने अपनी पहली कहानी मे गोस्टा बर्लिंग नामक नायक का जो चित्रण किया, उसका मूल रूप उन्होंने अपने पिता की

कही हुई एक कहानी से लिया था। उस मनुष्य का चित्रण इतना आकर्षक है कि पाठक उसपर मुग्ध हुए विना नहीं रह सकते। वह आदमी गायक है, कवि है, नृत्यकला-विशारद है, और जब वह सामाजिक सम्मेलन मे नाचने लगता है तो दर्शकों के अंग थिरक उठते हैं;—किन्तु यह सब होते हुए भी उसमें एक बड़ा त्रुटि है और वह है पुरुषोचित गुणों का अभाव। सेलमा लेजरलॉफ की माता एक राजमंत्री की कन्या थीं और उनके पितृगृह में दो पीढ़ी से राजमंत्रित्व का ही कार्य होता था। इसीलिये वह गृह-प्रबन्ध तथा मेहमानदारी करने में पूर्णतः पटु और सक्षम थीं। 'दुलहिन का मुकुट'* नामक रचना में सेलमा ने अपने घरेलू अनुभव का सुन्दर चित्र खींचा है ओर घर मे बुढिया दादी छोटे बच्चों को जो कहानियाँ, किम्वदन्तियाँ और पारिवारिक इतिहास सुनाया करती हैं, उनका उन्होंने अनुभव-पूर्ण वर्णन किया है।

सेलमा की अवस्था जब केवल साढ़े तीन वर्ष की ही थी तभी अपने पिता के साथ एक तालाब में नहाने के कारण उन्हे एक प्रकार के लकवे की सी बीमारी हो गयी थी। इससे स्वस्थ होने मे काफी समय लग गया और इसका कुछ-न-कुछ असर तो उनके जीवन भर रहा। 'मारबाका' नामक रचना मे उन्होंने अपने बाल्यजीवन की छाप-सी लगा दी है। उनमे पर्यवेक्षण शक्ति कैसी तीव्र थी, इसका अनुमान उनकी पुस्तकों मे वर्णित

*The Bridal Crown

पशु-पक्षियों के जीवन से किया जा सकता है। फूलों के सौन्दर्य का वर्णन उन्होंने बड़े ही आकर्षक ढंग से किया है।

बचपन मे कुमारी सेलमा लेजरलॉफ पर सब से अधिक प्रभाव बेलमैन की स्फुट कविताओं का पडा था, क्योंकि उनमे हास्य, करुणा और संगीत का अद्भुत सामजस्य है। जिस समय कुमारी लेजरलॉफ स्टॉकहोम के शिक्षक महाविद्यालय (Teachers' College) के पचीस चुने हुए उम्मीदवारों मे हो गयीं और उन्होंने बेलमैन, रयूनबर्ग तथा उनकी कविताओं के सम्बन्ध मे व्याख्यान सुने तो अकस्मात् भावुकता के अतिरेक से वह अनुप्राणित हो उठीं और उन्होंने निश्चय किया कि वह इस प्रकार की कहानियाँ स्वयं लिखेंगी और उनमे प्रचलित किस्से, कहानियों और किम्वदन्तियों का प्रचुर रूप मे उपयोग करेंगी। उनके मनमे कविता और नाटक लिखने की अभिलाषा अल्पावस्था मे ही हो गयी थी। अपने चाचा के पास स्टॉकहोम जाकर उन्होंने उसी अवस्था मे नाटक देखने के बाद यह निश्चय कर लिया था और जिस रात को नाटक देखा था, उस रात ऐसी ही भावना मे जागकर 'प्रार्थना' आदि सम्बन्धी पद्य लिख डाले थे।

स्नातिका होने के पश्चात् वह लैंड्स्क्रोना नामक स्थान मे अध्यापिका का काम करती रहीं और समय बचाकर कुछ लिखने का विचार भी किया करती थीं, किन्तु पाठशाला के कार्य से उन्हे अवकाश ही नहीं मिलता था। ऐसी अवस्था मे

वह विद्यार्थियों को अपनी कहानियाँ जबानी सुनाकर ही सन्तोप कर लिया करती थीं। छुट्टियों मे वह अपने पुराने घर में आकर कुछ-न-कुछ लिखनेका अवसर प्राप्त करती रहती थीं। उनकी 'गोस्टा बर्लिंग की कहानी' का पहला अध्याय बड़े दिन की छुट्टियों मे घर पर ही लिखा गया था। पहले उन्होंने इस कथा को पद्यात्मक रूप में लिखा, फिर उसे नाटक का रूप देना चाहा और अन्तमे उसे संक्षिप्त कहानी के रूपमें लिखकर तैयार किया। बादमे उन्होंने इसी प्रकार की अन्य कहानियाँ भी लिखीं और १८९० ई० में अपनी बहन के अनुरोध पर इन्होंने यह कहानियाँ एक पुरस्कार की प्रतिस्पर्द्धा के लिये भेज दीं। यह पुरस्कार 'आइडन' नामक पत्रिका की ओर से दिया जानेवाला था। जब उक्त पत्रिका ने यह विज्ञप्ति निकाली कि कई कहानियाँ तो ऐसे अस्पष्ट रूप में लिखी हुई आयी है कि उन्हे प्रतिस्पर्द्धा के लिये रक्खा भी नहीं जा सकता, तो कुमारी लेजरलॉफने समझा कि वह उन्हींकी कहानियाँ होंगी, पर बाद में उन्हे बधाई का तार मिला कि वह सफल हुई है।

फिर क्या था। उस पत्रिका के सम्पादक महोदय ने प्रस्ताव किया कि कुमारी लेजरलॉफ उस कहानी के कथानक पर शीघ्र ही एक उपन्यास लिख डाले। अन्ततः सेलमा ने पाठशाला से छुट्टी ले ली और स्वीडन की किम्वदन्तियों के आधार पर एक उपन्यास लिख डाला जिसमें हास्य के साथ-

साथ कोमल आदर्शवाद भी सम्मिलित था, किन्तु कुमारी लेजरलॉफ को उससे स्वय भी सन्तोष नहीं हुआ और वह उन्हे असम्बद्ध-सा लगा। इसके बाद उन्होंने 'जेरूसलम' और 'पोर्टुगालिया के सम्राट्'* की रचना की। 'लन्दन टाइम्स' मे ये दोनों ही उपन्यास प्रकाशित हुए और इनसे कुमारी सेलमा का काफी नाम हुआ। उनकी लेखन-शैली और विचार-धारा ने सबको अपनी ओर आकर्षित कर लिया। इनकी रचनाओं में 'पियक्कड और फक्कड कवि गोस्टा बर्लिंग' 'बेला बजनेवाली लिलीक्रोना' ('पोर्टुगालिया के सम्राट्' की नायिका) और 'गोल्डन सनीकैसिल' का चरित्र-चित्रण बड़ा ही विमोहक है।

उनकी संक्षिप्त कहानियों का संग्रह सन् १८६४ ई० मे 'अदृश्य शृङ्खला'† के नाम से प्रकाशित हुआ था। इसमे किसानों, मछुवों, बच्चों और पशुओं के अन्तरात्मिक सम्बन्ध का विश्लेषण सुन्दर रूप मे किया गया है। इसके बाद कुमारी लेजरलॉफ को साहित्यिक सेवाओं के बदले स्वीडिश एकैडमी, सम्राट् आस्कर और उनके पुत्र राजकुमार यूजेन से वार्षिक पुरस्कार मिलने लगे। इसके बाद एक मित्र के साथ वे इटली और सिसली गयीं और वहा के पर्यवेक्षणों और अनुभवों को 'ख्रीष्ट-विरोधी के चमत्कार'‡ नामक रचना मे लिखा, जो

*The Emperor of Portugallia बहुत से लोग इसे लेखिका की सर्वश्रेष्ठ कृति मानते है।

†Invisible Links

‡Miracles of Antichrist

१८९७ ई० में प्रकाशित हुई थी और दो ही वर्ष वाद जिसका अंग्रेजी अनुवाद भी पालिन वैक्राफ्ट फ्लैच ने कर डाला था। उपर्युक्त दो पुस्तकें (Story of Gosta Berling तथा Invisible Links) का अनुवाद भी उन्होंने ही किया था। 'ख्रीष्ट-विरोधी के चमत्कार' मे उन्होंने प्राचीन सिसिली की परम्पराओं और कविताओं तथा आधुनिक साम्यवाद और धर्म पर उसके प्रभाव का संघर्ष सुन्दर रूप मे चित्रित किया है। इसके लिखने में उन्होने अपनी सुकुमार कल्पना और तीव्रता दोनों ही का सुन्दर उपयोग किया है। इसमें एक अंग्रेज स्त्री के चातुर्य का वर्णन है, जो हजरत ईसा की वाल-मूर्ति देखकर रोम के किसी गिरजे में लुब्ध हो जाती है और उसे अपना समस्त वैभव देकर भी प्राप्त करना चाहती है। चमत्कार-वश कुछ ही सप्ताह वाद कृत्रिम मूर्ति गिर पड़ती है और उसकी जगह भगवान् ईसा का वास्तविक बालरूप सामने खड़ा हो जाता है। ख्रीस्ट-विरोधी को इस घटना के बाद सिसिली भेज दिया जाता है। कुमारी लेजरलॉफ ने पोप के मुह से—फादर गोण्डो से—यह कहलवाया है कि ख्रीष्ट-धर्मावलम्बियों और उनके विरोधियों में एकता इस प्रकार स्थापित हो सकती है कि आप अपने कार्यों द्वारा विरोधियों पर यह प्रमाणित कर दे कि वे जो कुछ कर रहे है वह ईसा का अनुकरणमात्र है। इससे वे ईसा की शरण मे आ जायँगे।

१८९९ ईस्वी मे उन्होंने अपनी सुन्दर कृति

'From a Swedish Homestead' प्रकाशित करायी, जिसमे 'देहाती घर की कहानी' भी थी—'The Emperor's Money-Chest' भी इस संग्रह की प्रसिद्ध कहानियों में से है।

नोवेल-पुरस्कार मिलने के पूर्व उनकी दो सुन्दर रचनाएँ—'जेरूसलम' और 'The Wonderful Advanture of Nils' और प्रकाशित हो गयी थीं। उनकी इस दूसरी रचना का फल यह हुआ कि १८९९ ई० मे स्वीडिश सरकार ने उन्हे अपनी ओर से पैलेस्टाइन भेजा। वहाँ उन्हे यह कार्य दिया गया कि वे स्वीडिश प्रवासियों का, जो 'नास' से जाकर वहाँ बसे है, वृत्तान्त लिखें। वहाँवालों की वीमारी और दरिद्रता की अफ़वाह उडने के कारण स्वीडिश सरकार ने ऐसा किया था। कुमारी लेजरलॉफ़ ने वहाँ का वास्तविक हाल लिखते हुए वतलाया कि अवस्था उतनी भयावह नहीं है जितनी कि अफवाह से मालूम होती है—पर यह दोनों कष्ट उक्त उपनिवेश के स्वीडिश प्रवासियों को अवश्य हैं। इसी यात्रा मे उन्होंने 'जेरूसलम' लिखने का कथानक और उपकरण प्राप्त किया। Christ Legend भी इसी यात्रा के वाद लिखी गयी जो श्रीमती हॉवर्ड द्वारा अनुवादित होकर १९०८ ई० में प्रकाशित हुई थी।

'एलिस इन वण्डरलैण्ड' और 'डाक्टर डुलिटिल' की तरह' दी वण्डरफुल एडवांचर्स आफ़ नील्स' और 'फर्दर

एडवांचर्स आफ नील्स' भी विद्यार्थियों के लिये बड़ी ही उपयोगी पुस्तकें है और समस्त सभ्य संसार मे चाव से पढ़ी जाती है।

इस प्रकार पाठक देखेंगे कि नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करने के पूर्व कुमारी सेल्मा लेजरलॉफ़ ने पर्याप्त रूप से साहित्यक उन्नति कर ली थी। १९०९ ई० मे यह पुरस्कार प्राप्त करने के पहले ही उन्हे स्वीडिश एकेडमी ने स्वर्ण-पदक प्रदान किया था। उपसाला-विश्वविद्यालय ने उन्हे एल-एल० डी० की उपाधि से भी पहले ही विभूषित कर दिया था। जिस समय स्टाकहोम में इन्हे पुरस्कार दिया गया तो वहाँ मेला लग गया था और सम्राट् गस्टेव-पंचम ने ग्राण्ड होटल मे इन्हे दावत दी थी। इस अवसर पर कुमारी लेजरलाफ ने जो भाषण किया उसमे उन्होंने बतलाया कि किस प्रकार लड़कपन में उनके पिता ने उनकी साहित्यिक भावनाओ को जाग्रत किया था।

कुमारी लेजरलॉफ को इक्कावन वर्ष की अवस्था मे नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करने की प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। उनके पुरस्कार-पत्र मे उनकी जन्मतिथि १८५८ ई० लिखी है। इन्हे पुरस्कार देने का कारण यह बतलाया गया है कि इनकी रचनाओं मे आदर्शवाद और आध्यात्मिकता के साथ-साथ सुन्दर कल्पना-शक्ति का अद्भुत सामंजस्य है।

१९११ ई० मे जब अन्तर्राष्ट्रीय स्त्री-सुधार कांग्रेस का

अधिवेशन हुआ तो इन्होंने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाषण किया था, जो संसार भर के प्रमुख पत्रों मे अनुवादित होकर प्रकाशित हुआ था। इस भाषण मे उन्होंने यह बतलाया कि गार्हस्थ्य सुख किस प्रकार समस्त ऐहिक सुखों की कुञ्जी है। इसी वर्ष उनका 'Lilliecrona's Home' भी प्रकाशित हुआ जो तीन वर्ष बाद एनाबार्वेल द्वारा अनूदित होकर अंग्रेजी मे भी प्रकाशित हुआ। इसमे बेला बजाने की मधुर और काव्यपूर्ण कल्पना की गयी है। वह संगीत को ही अपना घर समझती है, और वही विश्राम स्थल, उसे छोडकर वह ससार में और किसी वस्तु को कुछ मानती ही नही। तन्मयता का जैसा मनोमुग्धकारी वर्णन उपर्युक्त पुस्तक में है, वैसा शायद ही कहीं अन्यत्र मिलेगा।

यूरोपीय महायुद्ध के अन्त मे इनकी 'The Outcast' नामक पुस्तक स्वीडिश भाषा में प्रकाशित हुई, जिसका अनुवाद १९२२ ई० में अमेरिका से प्रकाशित हुआ। इसके कथानक के उत्तरार्द्ध मे संसार-व्यापी महायुद्ध का भी प्रासंगिक वर्णन है। यद्यपि सेलमा का देश स्वीडन उस युद्ध में तटस्थ ही रहा था, पर लेखिका के मन पर नर-संहार का कैसा प्रभाव पडा था, इसका परिचय इस पुस्तक से मिल जाता है। उन्होंने पवित्र मनुष्य-जीवन पर आये हुए घोर संकट की निन्दा की, और युद्ध के कुप्रभावों का चित्रण किया है। इसके बाद उनकी आरम्भिक कहानियों का भी अंग्रेजी अनुवाद

'The Treasure' नाम से प्रकाशित हुआ है। ये कहानियाँ साधारण कोटि हैं।

कुमारी लेजरलॉफ़ को आरम्भ में ही नाटक लिखने की अभिलाषा थी; और यह अभिलाषा हमेशा जागृत रही। उनके कुछ नाटक स्वीडन, डेन्मार्क और नार्वे मे सफलता-पूर्वक खेले गये। इनमे से 'The Girl from the Marshcraft'* का फ़िल्म भी बन गया और वह अमेरिका आदि सभी देशों मे दिखलाया गया। 'गोस्टा बर्लिंग' की कहानी का भी फिल्म बन गया जो स्वीडन तथा यूरोप के अन्य देशों में अच्छा चला।

कुमारी लेजरलॉफ़ छः भाषाएँ अच्छी तरह पढ़-लिख लेती हैं और वह सभी देशों की समस्याओं का थोड़ा-बहुत ज्ञान रखती हैं। यद्यपि रचनाओं की दृष्टि से वह एक जातीय या राष्ट्रीय विचार की कही जा सकती हैं, किन्तु जीवन की समस्याओं की अन्तर्दृष्टि और सहानुभूति की दृष्टि से वह एक अन्तर्राष्ट्रीय विभूति कही जा सकती हैं। पुरस्कार-प्राप्ति के बाद वह स्वीडिश एकैडमी की सदस्या भी चुन ली गयीं जो संसार में स्त्री-जाति का अपने ढंग का पहला सम्मान था। एडविन जार्कमैन ने अपने 'वाइसेज ऑफ टुमारो' मे उनके सम्बन्ध में लिखा है कि वह एक स्वप्नदर्शी, भावनामयी और अभिलाषापूर्ण महिला है।

---

*इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद 'बहिष्कार' नाम से विश्व-वाणी ग्रथमाला, प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है।

लेजरलॉफ की आरम्भिक रचनाओं मे 'लावेनस्कोल्ड्स की अँगूठी' भी है जिसमें जनश्रुतियों, रीति-रिवाजों और हास्य-परिहासों का जीवित चित्र खींचा गया है—यह चित्र स्थानीय होते हुए भी विश्व-भर के पाठकों के लिये मनोरंजन की चीज है।

'The Treasure' नाम से प्रकाशित हुआ है। ये कहानियाँ साधारण कोटि हैं।

कुमारी लेजरलॉफ़ को आरम्भ में ही नाटक लिखने की अभिलाषा थी; और यह अभिलाषा हमेशा जागृत रही। उनके कुछ नाटक स्वीडन, डेन्मार्क और नार्वे में सफलता-पूर्वक खेले गये। इनमे से 'The Girl from the Marshcraft'* का फ़िल्म भी बन गया और वह अमेरिका आदि सभी देशों मे दिखलाया गया। 'गोस्टा बर्लिंग' की कहानी का भी फ़िल्म बन गया जो स्वीडन तथा यूरोप के अन्य देशों मे अच्छा चला।

कुमारी लेजरलॉफ़ छः भाषाएँ अच्छी तरह पढ़-लिख लेती हैं और वह सभी देशों की समस्याओं का थोडा-बहुत ज्ञान रखती हैं। यद्यपि रचनाओं की दृष्टि से वह एक जातीय या राष्ट्रीय विचार की कही जा सकती हैं, किन्तु जीवन की समस्याओं की अन्तर्दृष्टि और सहानुभूति की दृष्टि से वह एक अन्तर्राष्ट्रीय विभूति कही जा सकती हैं। पुरस्कार-प्राप्ति के बाद वह स्वीडिश एकैडमी की सदस्या भी चुन ली गयीं जो संसार में स्त्री-जाति का अपने ढंग का पहला सम्मान था। एडविन जार्कमैन ने अपने 'वाइसेज ऑफ़ टुमारो' में उनके सम्बन्ध में लिखा है कि वह एक स्वप्नदर्शी, भावनामयी और अभिलाषापूर्ण महिला हैं।

*इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद 'बहिष्कार' नाम से विश्व-वाणी ग्रथमाला, प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है।

लेजरलॉफ की आरम्भिक रचनाओं मे 'लावेनस्कोल्ड्स की अँगूठी' भी है जिसमे जनश्रुतियों, रीति-रिवाजों और हास्य-परिहासों का जीवित चित्र खींचा गया है—यह चित्र स्थानीय होते हुए भी विश्व-भर के पाठकों के लिये मनोरंजन की चीज है।

पॉल हीज़

—※—

जॉन लडुविग पाल हीज का जन्म १५ मार्च सन् १८३० ई० मे बर्लिन मे हुआ था। इनके पिता भाषा-तत्त्व विशारद और बर्लिन विश्वविद्यालय के अध्यापक थे। इनकी माता एक धनिक यहूदी परिवार की लड़की थीं। अपनी माता के जो संस्मरण हीज महोदय ने लिखे है, उसमे उन्होंने अपनी माता के सम्बन्ध मे लिखा है कि वह बड़े ही उत्तेजनापूर्ण और भावुक स्वभाव की थीं। कहानी कहने और सनसनीपूर्ण ढंग की बातें सुनाने मे यह गुण इनकी माता को अपने पिता से मिला था। युक्तिवाद और तर्कवाद के गुण भी इन्हे अपने पिता से ही प्राप्त हुए थे। हीज परिवार में प्रायः विद्वान् लेखक और

कलाविद् इकट्ठे हुआ करते थे, इसलिये बालक हीज के लिये पहले से ही उत्तम विकास के साधन प्रस्तुत थे। कुगलर नामक एक प्रसिद्ध इतिहासज्ञ से बालक पॉल हीज की मित्रता हो गयी और आगे चलकर कुगलर महोदय की ही लड़की के साथ पॉल का विवाह हुआ।

बर्लिन से हीज जब बॉन विश्वविद्यालय में गये तो वह स्पेनी-भाषा की ओर आकर्षित हुए और उसमे कर्वेंटस और कलडेरों की रचनाओं से बहुत प्रभावान्वित हुए। बाद मे १८४९ और १८५२ ई० मे उन्होंने इटली का भी भ्रमण किया और दान्ते, बोकैसिवो तथा लिवोपार्डी की रचनाओं में विशेष रस लेने लगे। इटली के कलाविदों ने योग्य पिता की इस योग्य सन्तान का अच्छा आदर किया और उन्होंने भी इटली को बहुत पसन्द किया। उन्होंने इटली के लिये लिखा है कि वास्तव मे यह रंग और सौन्दर्य का देश है। शेक्सपियर की रचनाओं के वह प्रशंसक थे नाटक तथा प्रेम-काव्य लिखने की ओर उनकी विशेष प्रवृत्ति थी। खण्ड-काव्य लिखने की ओर भी इन्होंने विशेष रूप से ध्यान दिया था। १८५४ ई० मे बवेरिया के बादशाह ने इन्हे म्यूनिच के न्यायालय मे १५०० फ्लोरिन* प्रति मास पर जगह दी। म्यूनिच वास्तव मे ऐसी जगह थी जहाँ उनका सौन्दर्य-प्रेम सन्तुष्ट हो सकता था और उनकी मेधाशक्ति का

*बवेरिया का सिक्का।

विकास हो सकता था। लुई-प्रथम के समय में म्यूनिच मे सुन्दर भवनों का निर्माण हुआ था। वैसे भी म्यूनिच एक सुसंस्कृत स्थान था। हीज की मित्रता गीबल, बॉडेनस्टट, विलब्रैट, लॉग आदि कवियों और विद्वानों से हो गयी। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ शेक से भी इनकी काफ़ी घनिष्ठता हो गयी। १८६८ ई० में जब बादशाह मैक्स के उत्तराधिकारी लुई द्वितीय ने गीबल का अपमान किया और उन्हे नगर छोड देने की आज्ञा दे दी, तो हीज को इस बात से बड़ा दुख हुआ। उन्होंने म्यूनिच को मृत्यु (१९१४ ई०) पर्यन्त नहीं छोड़ा।

जीवन के आरम्भ से सम्पन्न घराने मे पलने और सदा सुखपूर्ण जीवन व्यतीत करते रहने पर भी उन्होंने अपनी रचनाओं मे मछुओं, किसानों और अन्य देहातियों का चित्रण करने मे काफ़ी सफलता प्राप्त की थी। उनकी रचनाओं में 'सलामनदर', 'Children of the World' तथा 'ला अरेबियाटा' सर्वश्रेष्ठ समझी जाती है। एँटोनियो नामक नाविक से एक कुमारी का प्रेम हो जाता है, पर जब तक कि उस (नाविक) की बाँह मे चोट नहीं लग जाती, तब तक वह उस प्रेम को रोकती है। फिर अपनी माता की स्मृति में उसकी क्या अवस्था होती है और उस प्रेम का कैसा अद्भुत परिणाम होता है, यह वर्णन पढने योग्य है। पच्चीस वर्ष बाद हीज सॉरेण्टो वापस आये।

हीज महोदय की रचना-शैली बालजक और तुर्गनीव की शैली से मिलती-जुलती है, क्योंकि उनका वर्णन प्रायः संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित होता है और एक ऐसा वातावरण पैदा कर देता है जो स्मृति में जीवित रहता है। इस प्रकार की कहानियों के उदाहरण "बारबरोसा", "ऐट दी घोस्ट आवर" और 'Dead lake' है।

बाद के उपन्यासों मे हीज़ महोदय ने अद्भुतता के बदले अधिकाश रूप में यथार्थवाद दिखलाने की चेष्टा की है, परन्तु इन्द्रिय-ग्राह्य सौन्दर्य को उन्होंने सदा और सर्वत्र प्रधानता दी है। वह कभी तबीयत पर जबर्दस्ती दबाव डालकर नहीं लिखते थे, जब मन में उमंग उठती थी और कुछ लिखने की इच्छा होती थी, तभी लिखने को बैठते थे। उनकी 'Journey After Happiness' जैसी छोटी कहानी से लेकर 'संसार के बच्चे' और 'In Paradise' जैसे बड़े नाटकों तक में प्राय यह बात दिखलायी गयी है कि प्रकृति के विरुद्ध जाना ही पाप है। ये भाग्यवादी और भोगवादी दोनों ही थे। इनकी रचनाओं मे और विशेषतः 'The Sabine Woman' में स्त्री के अन्दर आत्म-दमन और आत्म-समर्पण की मात्रा कितनी अधिक होती है, यह दिखलाया गया है। 'ससार के बच्चे' मे उन्होंने बतलाया है कि बाह्य रूप से कष्ट होते हुए भी जीवन सुख से पूर्ण है और हम उसे न केवल उद्बोधित कर सकते है वरन् हम भूत और भविष्य का अनुभव भी कर सकते हैं और

सब मिलाकर जीवन में आनन्द की अनुभूति अच्छे रूप में कर सकते हैं।

हीज महोदय ने साठ से अधिक नाटक जर्मन भाषा मे लिखे है; किन्तु उनमें से बहुत थोड़े नाटकों का अंग्रेजी मे सुन्दर और सफल अनुवाद हुआ है और रंग मंच पर वे प्रायः असफल रहे है—'हैस लैज' 'हैड्रिजन कोलबर्ग' और 'मेरी आफ़ मागदला' (लेखक के अन्तिम नाटक) का अनुवाद विलियम विटर और लायनल वेल ने अंग्रेजी में अच्छा किया है। 'कोलबर्ग' में ज़ोषफ़ेल नामक बुड्ढे दार्शनिक का चित्रण उन्होंने अपने पिता के चरित्र के आधार पर किया है। 'लिवो-निडास' में उन्होंने फ़ारस, जर्मनी और फ्रांस के युद्धों का वर्णन ऐसे सजीव ढंग से किया है कि उसे पढ़कर उत्साह और आत्मबलिदान की भावना प्रज्ज्वलित हो उठती है। 'फेलिस' नामक कहानी मे उन्होंने एक किसान की लडकी का चरित्र-चित्रण किया है जो इन्द्रिय-लिप्सा की अपेक्षा बुद्धिवाद की ओर अधिक ध्यान देती है। इससे लेखक के इस सिद्धान्त का प्रतिपादन जोरदार ढंग से हो जाता है कि हृदय की उत्ते-जना के अनुसार कार्य कर बैठना अवाञ्छनीय है। बाद मे उन्होंने जो कहानियाँ लिखी है, उनमे 'लास्ट सेण्टॉर' मे तत्कालीन जड़वाद के विरुद्ध काफ़ी विद्रोहात्मक भाव प्रकट किये गये हैं। 'The Incurable' और 'The Blind' भी उनकी सुन्दर कृतियों मे से है। हीज महाशय पुरुषों की

अपेक्षा स्त्रियों के चरित्र-चित्रण मे अधिक सफल हुए हैं। इसीलिये उनको बहुत-से जर्मन साहित्यिक 'तरुणियों के प्रेमी' कहा करते थे। उनकी रचनाओं मे कहीं-कहीं महाकवि गेटे के विचारों की झलक स्पष्ट दिखायी देती है—विशेपकर 'काइण्डर-डर-वेल्ट,' 'दि वॉंडरर आफ ट्रेविसो' 'प्राडिगल सन' (उडाऊ पूत) और 'स्पेल आफ रादेनबर्ग' मे तो उक्त बात काफी तौर पर पायी जाती है।

हीज-महोदय की गद्य-रचना पद्य की अपेक्षा अधिक सफल हुई है। इनके पद्य-ग्रन्थों में तो केवल 'मलामन्दार' 'दी फ्यूरी' और 'दी फेयरी चाइल्ड' अधिक ख्याति पा सके हैं। इनके अन्दर कोमल भावना, सौन्दर्य और आदर्श पर्याप्त परिमाण मे पाये जाते हैं।

गर्हार्ट हाप्टमैन

—+++—
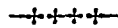
१९१२ ई० का साहित्यिक पुरस्कार गर्हार्ट हॉप्टमैन नामक प्रख्यात जर्मन औपन्यासिक और नाटककार को प्राप्त हुआ था। इनका जन्म १८६२ ई० मे हुआ था और यह दूसरे जर्मन साहित्यिक थे जिन्हे हीज के बाद नोबेल-पुरस्कार मिला। नोबेल-पुरस्कार के इतिहास मे प्रायः ऐसा होता आया है कि एक ही राष्ट्र के दो प्रतिनिधियों को बराबर पुरस्कार मिला है। नार्वे के उपन्यासकार जार्नसन और हैमसन, स्पेन के नाटककार इशैगरे बेनाविन्ते तथा जर्मन साहित्यिक हीज और हॉप्टमैन इसी प्रकार के उदाहरण है। हीज की रचनाओं मे अपेक्षाकृत प्राचीनता, काव्य और अद्भुतता पायी

जाती है। उन्होंने मनुष्य की सदाशयता और सन्तोष-वृत्ति की प्रशंसा की है। दो ही वर्ष वाद पुरस्कार प्राप्त करनेवाले गर्हार्ट हॉप्टमैन को कुछ समालोचकों ने आधुनिक काल के उच्च कोटि के यथार्थवादियों की श्रेणी मे रक्खा है। समाज की जैसी चुटकी इन्होंने ली है, वह खलवली मचा देनेवाली थी। १९०० ई० के बाद जब हीज की रचनाएं नवयुग के नवयुवकों को कम प्रिय हो चली थीं और प्रगति-शील एवं उदीयमान लेखकों के मन मे उनका आदर कम हो चला था, तो उन्हे अस्सी वर्ष की अवस्था मे पुरस्कार प्रदान करके पुरस्कारदात्री समिति ने एक बार फिर उनकी रचनाओं के प्रति लोक-रुचि उत्पन्न कर दी थी।

यद्यपि हाप्टमैन के दादा एक जुलाहे थे और वे जन्म भर सम्पन्नता और समृद्धि से वञ्चित रहे थे; पर उनके पिता तीन होटलों के मालिक थे और आगे चलकर गर्हार्ट हाप्टमैन एक काफी सुसम्पन्न व्यक्ति हो गये। उनका जन्म साल्जवर्न मे १८६२ ई० में हुआ था। इस प्रकार वे हीज से वत्तीस वर्ष छोटे थे और इसीलिये इनकी रचनाओं में वास्तव मे एक पीढ़ी की प्रगतिशीलता दिखाई देती है। उनकी शिक्षा ब्रेसथा, जेना और इटली मे हुई थी। पढने लिखने मे वह इतने सुस्त थे कि इनके भाई कार्ले के अतिरिक्त और किसी को यह विश्वास नहीं था कि भविष्य मे यह कभी किसी प्रकार की उन्नति कर सकेंगे। उन्होंने साहित्य के साथ कृषि

और इनके अंग्रेजी अनुवादों के नाम है 'दी एजम्पशन आफ़ हैनेल,' 'दी संकेन वेल' और 'पर्सीवल'।

हाप्टमैन मे दो स्पष्ट और विरोधी व्यक्तित्त्व का दर्शन पाठक करेंगे। 'संकेनवेल' की रचना पर वे नोबेल-पुरस्कार के लिये चुने गये थे। इसमे भौतिक और आध्यात्मिक संघर्ष सुन्दर रूप मे प्रदर्शित किया गया है। कहीं-कहीं उनकी रचना मे प्रसिद्ध औपन्यासिक और नाटककार सडरमैन की रचनाओं की छाप है। आदर्शवादी रचना करने के पहले हाप्टमैन ने इब्सन, जोला, टॉल्सटॉय, मैक्स नारडा और आर्नो होल्ज की तरह दुखान्त रचनाएँ की थीं। इनकी यथार्थवादी रचनाओं के कथानक कमजोर और शिथिल है—विशेषत 'दि बीवर कोट' 'रोज वर्ड' और 'दि कन्फ्लेग्रेशन' मे ऐसी त्रुटियाँ हैं। उनमे कविजनोचित भावनाएँ काफी थीं और इनका परिचय उन्होंने 'The lovely lives' 'सहचर क्रैम्पटन' और 'The weaver' नामक रचनाओं मे यत्र-तत्र स्फुट पद्यों द्वारा भली भाँति दिया है। 'The weaver' नामक रचना मे शैल्पिक उत्क्षेपन है—इसमे भावनाओं का उग्र विकास है और व्यंग तथा उच्चाभिलाषा भी सन्निविष्ट है। इस पुस्तक को गर्हार्ट हाप्टमैन ने अपने पिता को समर्पित करते हुए लिखा है—"प्यारे पिताजी, आप जानते हैं कि किन भावनाओं से प्रेरित होकर मैं यह पुस्तक आपको समर्पित कर रहा हूँ, अतः मुझे उसका विवरण यहाँ लिखने की आवश्यकता नहीं

है। आप मेरे दादा की (जो अपनी युवावस्था में करघे पर बैठकर इस पुस्तक मे वर्णित दरिद्र जुलाहों को भाँति कपड़ा वुना करते थे) जो कहानियाँ सुनाया करते थे, वही मेरे इस नाटक में है—इसमें जीवन की जो शक्ति या पतन है, वह उसी रूप में है।"

१८८६ ई० में बर्लिन में एक सामाजिक नाट्यशाला स्थापित हुई थी जिसमें प्रसिद्ध नाटककारों की कृतियाँ रंगमंच पर लायी गयीं। इस संस्था के संचालक ओटो ब्राम, मैक्स मिलियन हार्डेन, थिवोडोर वुल्फ़ आदि थे। हाप्टमैन की अनेक रचनाएँ इस नाट्यशाला के रंगमंच पर आयीं जिसमें से आठ* के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनमें से पहला नाटक (Before Dawn—प्रभात के पूर्व) सिलीसियन पर्वत पर लिखा गया था और पहले-पहल १८८६ ई० में बर्लिन में रंगमंच पर आया। इसमें दुराचारी पिता और उसके नीच साथी लड़की की अप्रतिष्ठा करना चाहते है और लडकी आत्मरक्षा के लिये उनको जान से मारने में सफल होती है। कथानक दुःखान्त-पूर्ण और प्रतारणा एवं प्रत्याख्यान से भरा हुआ है।

---

*Before Dawn, College Crampton, Florian Geyear, The Festival of Peace, Lonely Lives, The Weavers, The Beaver Coat, The Assumption of Hannele.

'जुलाहा' (The Weavers) में नाट्यकला का परिस्फुटन अपेक्षाकृत सुन्दर रूप मे हुआ है। इसमे कोई व्यक्ति प्रधान अभिनय नहीं करता—जुलाहों का झुण्ड सन्धि के समय पर सामूहिक रूप से जो कुछ करता है, यही इसका प्रधान अभिनय है। इसमे पूँजीपतियों के वैभव-पूर्ण जीवन और जुलाहों की दरिद्रतापूर्ण अवस्था का मार्मिक चित्रण किया गया है। साथ ही सरकार की इसके प्रति उदासीनता, और लोभ के शिकार बने हुए लोगों की शैल्पिक दास्ता का भी दिग्दर्शन कराया गया है। दूसरे अङ्क में यह दिखलाया गया है कि बुड्ढे ऐन्सोर्ज को इस बात का विश्वास नहीं होता कि यदि इन (जुलाहों) की दशा का समाचार सम्राट् तक पहुँचाया गया तो वह उनका दुख नहीं मेटेगा। जेगर उस (बुड्ढे) से कहता है कि सम्राट् तक समाचार पहुँचाना व्यर्थ है। वह बुड्ढा जुलाहा जब अपने उस करघे के प्रति अनुराग प्रदर्शित करके शोकान्वित होता है, जिस पर ४० वर्ष तक वह काम करता रहा है, और जिससे अब पूँजीपतियों की क्रूरता के कारण पृथक् होना पड रहा है, तो दर्शकों और पाठकों के हृदय मे करुणा का स्रोत उमड़ पड़ता है।

इसी प्रकार उनके दूसरे नाटक (Assumption of Hunnele) की भी जर्मनी मे खूब चर्चा हुई और अमेरिका मे उनका यह खेल रंगमंच पर भी खेला गया। वहाँ के लोग पहले हाप्टमैन के पूँजीवाद-विरोधी विचारों के

कारण बहुत रुष्ट थे और इनके खेल का बहिष्कार करने-वाले थे; पर बाद मे खेल शान्ति-पूर्वक समाप्त हो गया। बाद में इनका 'The Weavers' भी अमेरिका में अच्छा चला, किन्तु अमेरिका-जैसे देश मे ये दुःखान्त-पूर्ण और समस्या-युक्त नाटक उस समय आशातीत सफलता नहीं प्राप्त कर सके।

इनकी दो रचनाओं—The Assumption of Hunnele और Sunken Bell—के अंग्रेजी अनुवाद चार्ल्स हेनरी मेलजर ने किये थे। जिस समय इनके खेलों के विरुद्ध आन्दोलन शुरू हुआ तो बेचारे अनुवादक पर भी लोगों की कोप-दृष्टि हुई—यहाँ तक कि उस अभिनेत्री पर भी लोग बहुत क्रुद्ध हुए जिसने उनके नाटक में प्रधान पात्री के रूप में अभिनय किया था।

उपर्युक्त घटना के अठारह वर्ष पश्चात् स्वीडिश एकैडमी ने हाप्टमैन को जगद्विख्यात् नोबेल-पुरस्कार देकर सुप्रसिद्ध और प्रतिष्ठित लेखक बना दिया। फिर तो पाठकों का अनुराग उनकी रचनाओं की ओर बढ़ता ही गया और हाप्टमैन की दो कविताओं Dream Poem और 'The Stranger' पर उन्हे जर्मनी का ग्रिलपार्जर-पुरस्कार भी मिला। दो वर्ष बाद उन्होंने जीवन के तथ्य और रहस्यमय आकर्षण पर एक और नाटक लिखा जिसका नाम 'A Fairy Tale Play' रक्खा। इस रचना ने उनके आलोचकों को विश्वास दिला दिया कि उनमें नाट्य-रचना की अद्भुत क्षमता है।

'सकेन वेल' नामक नाटक का आधार जर्मनी की ट्यूटानिक पुराण-कथा है—इसमे घंटी बनानेवाले और उसकी स्त्री, एक दुर्दान्त प्रेतात्मा, पुरोहित और अध्यापक का चित्रण अन्य अलंकारिक पात्रो के साथ सुन्दर रूप मे किया गया है। इसमे हीनरीच घंटीवाले को सत्य और ज्ञान का खोजी और जिज्ञासु बनाया गया है—रॉटेंडलीन को प्रकृति का रूपक बनाया गया है जो स्वतन्त्रता प्रदान करता है। इसी प्रकार विटिकिन जीवन के तत्त्वज्ञान का व्यक्तीकरण करता है और वह पुरोहित के दिखाऊ सिद्धान्तों का विरोधी है, क्योंकि वे (सिद्धान्त) उच्चादर्श के मार्ग मे बाधक हैं। हीनरीच अपना आदर्श प्राप्त करने मे असफल होता है। वह ईसाई धर्म द्वारा प्रचारित सत्य के पालन मे सफलता नहीं प्राप्त कर सकता, क्योकि वह मानवीय कमजोरियो का शिकार होता है। घंटीवाला संसार भर मे घूमता फिरता है—उच्च पर्वत शिखरों के विपुल प्रकाश और ध्वनि मे भी वह नहीं ठहरता, पर उनका प्रभाव उसके चित्त पर पडता है। वापस आने पर पुरोहित जब उसकी अभ्यर्थना करता है, तो घंटीवाला जिज्ञासु कहता है:—

मैं वही हूँ, किन्तु मेरा रूप बदल गया है। दरवाजा खोल दो और अदर प्रकाश को आने दो।

इस नाटक के प्रदर्शन में बहुत अधिक सफलता इसलिये नहीं मिली कि इसमे रूपक और अध्यात्मवाद का बाहुल्य है,

इसलिये दर्शकों की अपेक्षा विचारकों को इसमें अधिक आनन्द आता है। इनका "हेनरी आफ़ आउ" नामक नाटक १६०२ ई० मे प्रकाशित हुआ था। इसे 'संकेन बेल' का उपसंहार कह सकते हैं। इसमे दिखाया गया है कि जिस समय हीनरीच उन्नति की चरम सीमा पर पहुँचता है, तो ईश्वर के प्रति धृष्टता करने के कारण उसे कुष्ठ रोग हो जाता है और उस रोग से उसे आरोग्य-लाभ तब होने लगता है जब वह अपनी निराशा और घृणा-पूर्ण आत्मा को प्रकृति और जीवन की दातव्यता स्वीकार करने में लगाना आरम्भ कर देता है। इसमें हीनरीच, हर्टमैन-वान-आउ, गॉडफ्रीड, ब्रिगिटा और किसान की लड़की ऑटेजेन का चरित्र सुन्दर रूप मे चित्रित किया गया है। नायक के आरोग्य-लाभ में इस कृषक-बालिका का विशेष प्रभाव दिखाया गया है। नाटकीय कला की दृष्टि से यह नाटक 'संकेन बेल' या 'हैनेल' के टक्कर का नहीं है, किन्तु इसमें पात्रों की दशा ऐसी चित्रित की गयी है जिसके कारण पाठक और दर्शक आकर्षित हो उठते है—कुष्ठ रोग के कारण हीनरीच की दुर्दशा पाठकों की सहानुभूति अपनी ओर खींचती है और अन्त में प्रेम के द्वारा पुनरुद्धार का दृश्य उपस्थित किया जाता है।

नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करने के बाद हाप्टमैन ने अनेक नाटक और उपन्यास लिखे, जिनमें तथ्यवाद और आदर्शवाद का सुन्दर सम्मिश्रण है। 'पर्सीवल' नामक नाटक में मानवता

की अन्तर्दृष्टि के साथ-साथ नैतिकता और धार्मिकता की भी पुट है। 'ऐण्ड पिप्पा डासेज', 'एल्गा', और 'पोएट लोर' भी बाद के ही लिखे हुए हैं।

कई लेखकों ने हाप्टमैन की तुलना जान गाल्सवर्दी से की है—इन दोनों के जीवन और रचनाओं मे काफ़ी सादृश्य पाया जाता है। 'हैनेल' की तुलना 'दी लिटिल ड्रीम' से 'माइकेल क्रेमर' की 'ए बिट आफ लव्ह' से और 'दी वीवर्स' (जुलाहा) की 'स्ट्राइफ'* से की गयी है। दोनों ही नाटककार सामाजिक बन्धन का अतिक्रमण करते हैं, दोनों ही सामाजिक समस्याओं को सुलझाने की चेष्टा करते है और दोनों ही की विचार-सरणि तथ्यवादिता की ओर झुकी हुई है—दोनों ही ने सदाचार का मूल्य बढ़ाया है। हाप्टमैन ने पात्रों के चित्रण मे अधिक दिलचस्पी ली है और गाल्सवर्दी ने पात्रों के सम्बन्धों के चित्रण मे। दोनों ही लेखक आदर्शवादी है और वे भौतिक एव आध्यात्मिक सत्य का अन्वेषण करते हैं।

हाप्टमैन की अन्तिम रचनाओं मे 'ए विण्टर बैलाड' और 'दी फेस्टिवल प्ले' अधिक उल्लेखनीय है। अंग्रेजी के पाठकों ने हाप्टमैन के उपन्यास अधिक पसन्द किये है और उनकी 'दि फूल इन दि क्राइस्ट' 'एटलाटिस' 'फैण्टम' और

---

* जान गाल्सवर्दी के इस नाटक का अनुवाद हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद ने 'हडताल' के नाम से प्रकाशित किया है।
—लेखक

'हेरेटिक आफ सोवाना' आदि रचनाए अधिक पढ़ी जाती हैं। इनमे चरित्र-चित्रण अधिक जानदार और व्यंगपूर्ण है। सामाजिक समस्याओं को हाप्टमैन प्रायः सर्वत्र सुलझाते हैं। 'दी आईलैण्ड आफ दि ग्रेट मदर' उनके बाद के उपन्यासों मे से है। हाप्टमैन ने अब भी नाटक और उपन्यास लिखने का क्रम जारी कर रक्खा है। नये लेखकों पर उनकी रचनाओं का काफ़ी प्रभाव मालूम होता है। उनके 'दि हेरेटिक आफ सोवाना' को संसार की आधुनिक रचनाओं मे एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है और उनके सभी समकालीन लेखक इस बात को स्वीकार करते है कि उनकी यह रचना उत्कृष्ट कोटि की है।

मैटरलिंक

[बेल्जियम के आदर्श-नाटककार और कवि]

मॉरिस मैटरलिक को १६११ ई० मे नोवेल-पुरस्कार प्राप्त हुआ था, इसलिये इस पुरस्कार को दशाब्दी हो चुकने के कारण काफी ख्याति प्राप्त हो चुकी थी और नये-नये लेखक साहित्यिक प्रतिद्वन्दिता मे आने लगे थे। मैटरलिक को नोवेल-पुरस्कार उनकी बहुमुखी साहित्यिक क्रियाशीलताओं और विशेषकर उनकी उन नाटकीय रचनाओं के लिये मिला है जो कल्पना और काव्योचित आदर्श से ओतप्रोत है। उनकी कृतियाँ ऐसी रहस्यपूर्ण रीति से लिखी गयी है कि सहृदय पाठक उनसे अनुप्राणित होकर भावाकुल हुए बिना नहीं रह सकता।

१६११ ई० के पुरस्कार के सम्बन्ध में साहित्यिक जगत्

यह आशा कर रहा था कि इस बार वह किसी रूसी या अमेरिकन लेखक को मिलेगा, किन्तु यह गौरव बेल्जियम जैसे छोटे देश को प्राप्त हुआ। इनके अधिकाश नाटक फ्रेंच-भाषा में लिखे गये और उन्होंने मैटरलिंक को साहित्यिक जगत् में शीघ्र ही विख्यात् बना दिया। इसके पहले बेल्जियम के कुछ ही लेखक साहित्यिक क्षेत्र में थोड़े-बहुत प्रसिद्ध हो पाये थे। चार्ल्स-वान-लर्बर्ग, हेनरी मावेल और एडमाण्ड पिकार्ड नामक बेल्जियन लेखकों की रचनाएं भी प्रकाश मे आ चुकी थीं।

मैटरलिंक का जन्म सन १८६१ ई० में बेल्जियम के घेण्ट नामक स्थान मे एक अच्छे घराने मे हुआ था। इन्होंने बाल्य-काल में अपने चारों ओर जो वातावरण देखा था, उसका दिग्दर्शन इनकी रचनाओं मे मिलता है—वाटिका, समुद्र और जहाजों का वर्णन इन्होंने पूरी दिलचस्पी के साथ किया है। धुवाँ फेंकते हुए छोटे से चिराग के धुँधले प्रकाश मे अपनी कुटिया के द्वार पर बैठे हुए किसानों का चित्रण उन्होंने सुन्दर रूप में किया है, और यह उनके बचपन के निरीक्षण का ही फल है। छोटे छोटे बच्चों को स्कूल जाते देखकर उन्हे अपने बचपन की याद आ गयी और उन्होंने युवावस्था में बालकों के मनोविज्ञान का अध्ययन किया और उसे अपनी रचना में स्थान दिया। बच्चों की अद्भुत परम्परा और उनके अकारण भय का प्रतिविम्ब उनके कुछ नाटकों में स्पष्ट झलकता है।

मेटरलिंक के पिता की यह इच्छा थी कि उनका पुत्र कानून पढे, इसलिये पहले उन्होंने कानून का ही अध्ययन करके कुछ समय तक घेण्ट मे उसकी 'प्रेक्टिस' की। सात वर्ष तक जेसूट कालेज मे अध्ययन करने पर उनकी विचार-धारा दार्शनिकता की ओर झुकती प्रतीत हुई और उन्होंने विचार किया था कि पेरिस मे रहकर वह साहित्यिकों और विद्वानों की संगति का सुअवसर प्राप्त कर सकते है। वहाँ उन्होंने विलियर्स से काफी घनिष्टता प्राप्त कर ली थी। इनका दूसरा भावुक मित्र आक्टेव मिराबाँ था जिसे बाद मे मेटरलिंक ने अपनी 'प्रिंसेज मैलीन' और 'पेलिस ऐण्ड मेलीसांदे' नामक रचानाएँ समर्पित की थीं। मिराबाँ मैटरलिक का बडा प्रशंसक था और उसे 'बेल्जियन शेक्सपियर' कहा करता था।

१८८६ ई० मे अपने पिताकी मृत्यु के पहले मैटरलिंक बेल्जियम वापस गये और उसके बाद सात वर्ष तक वहीं रहकर प्रकृति और तत्त्वविद्या का अध्यन करते रहे तथा साथ ही प्रहसन और नाटक भी लिखते रहे। इसी बीच उन्होंने कुछ अंग्रेजी रचनाओं के फ्रेंच अनुवाद भी किये और इस प्रकार अंग्रेजी की ओर आकर्पित हो गये। उन्होंने इमर्सन नोवालिस और रुइसब्राक की मध्यकालीन गूढ़ रहस्यमय रचनाओं का अंग्रेजी से फ्रेंच मे उसी समय अनुवाद कर लिया था जब ये जेसूट कालेज में पढते थे। इमर्सन की दार्शनिक रचनाओं के उस भाग की इन्होंने विशेष रूप से प्रशंसा की है

जिसमें उन्होंने "मनुष्य की आध्यात्मिक प्रकृति की उच्चता और आत्मबल" का वर्णन किया है। उन्होंने इमर्सन की प्रशंसा करते हुए लिखा है:—"इमर्सन ने हमारे जीवन की महत्ता बताने के लिये जन्म धारण किया था।...उन्होंने हमें स्वर्ग और पृथ्वी की सभी शक्तियों का दिग्दर्शन कराया है।"

१८९६ ई० मे मेटरलिंक बेल्जियम से फिर पेरिस लौट आये और यहीं उन्होंने अपना घर बना लिया। फ्रेंच एकैडमी का सदस्य बनने के लिये उन्होंने अपनी बेल्जियम की नागरिकता का परित्याग नहीं किया। महायुद्ध के दिनों में उन्होंने अनेक प्रकार से अपने स्वदेश—बेल्जियम—की सेवा की। अधिकाश जीवन पेरिस मे व्यतीत करने पर भी उनकी स्वदेश भक्ति कम नहीं हुई और उन्होंने अपने को गौरव-पूर्वक बेल्जियम-निवासी कहा है।

१८८९ ई० से १८९६ ई० तक जिन दिनों वे बेल्जियम में थे उन्होंने 'दि ब्लाइंड' 'दि इन्ट्रूडर' 'दि सेवेन प्रिंसेज' 'अलादीन ऐण्ड पैलोमाइड्ज' और 'दि डेथ आफ टिटाजिल्स' की रचना की थी। इनकी कृतियाँ रंगमंच पर लाने-योग्य भी सिद्ध हुईं और पाठोपयोगी भी। 'पेलिया और मेलीसाँदे' में मेलीसाँदे की दुखद मृत्यु का उस समय दिखाना, जब वह अपने प्रणयी का वध और लड़की की पैदाइश देख चुकती है, नाट्यकला की शक्ति का परिचय देता है। इनकी भाषा-शैली सरल और वर्णन का प्रवाह अत्यन्त परिमार्जित है।

मैटरलिंक की रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद पहले-पहल रिचार्ड हॉवी नामक एक अमेरिकन कवि ने किया था, जिसकी युवावस्था मे ही अकाल मृत्यु हो गई थी । अनुवादक ने मैटरलिक से सहमति प्रकट करते हुए पहली जिल्द की भूमिका मे कहा है कि आदर्शवाद तथ्यवाद से नितान्त पृथक् वस्तु है। और मैटरलिंक मे पहले गुण का पूर्ण विकास हुआ है । मैलार्मे गिलबर्ट पार्कर और ब्लिस कार्मन ने भी इनके इस कथन का समर्थन किया है। मैटरलिक की कृतियों मे भाव-धारा निश्चित सीमा के भीतर चलती है, किन्तु जहाँ उन्होंने दुखान्त और अद्भुतता को मिलाने का यत्न किया है, वहाँ उन्हे उतनी सफलता नहीं मिलो। श्री हॉवी का कथन है कि वह (मैटरलिंक) सदा भय और दुःख का चित्रण करते हैं उन्हे कब्र का कवि कहना अधिक ठीक होगा, क्योंकि एडगर अलेन पो की तरह इनकी शैली भी अत्यन्त प्रभावशाली है। उनके 'दि ब्लाइन्ड' और 'होम टू ज्वायजील' मे भावी क्लेश का पूर्वाभास विशिष्ट रूप से मिल जाता है।

पेरिस मे अपने साहित्यिक मित्रों द्वारा प्रोत्साहित होकर ओर जार्जेट-ली ब्लैक (एक अभिनेत्री, जिसने वाद मे उनसे शादी कर ली थी) के सम्पर्क मे आकर उन्होंने तीन ऐसे नाटक लिखे जिनमे उनकी नाटकीय प्रतिभा चरम सीमा पर पहुच गयी । इनके नाम क्रमशः 'ज्वायजील' 'मानावाना' (१९०३ ई०) और दि वल्यू वर्ड है । सम्भवत उनकी

यह अन्तिम पुस्तक ही उन्हे नोबेल-पुरस्कार दिलाने में सफल हुई है। इस नाटक में आदर्शवाद, कोमल भावना, विचार-प्रवणता, प्रत्येक दृश्य के आकर्षक पात्र, प्रत्येक देश और प्रत्येक काल के लिये उनके व्यापक सन्देश आदि ऐसे हैं, जो मनुष्य के हृदय पर स्थायी प्रभाव डालते है। सम्भव है कि रंगमंच पर इस नाटक की रहस्यमय पारदर्शिता कुछ नष्ट हो जाय, पर चित्रपट के रूप में उसका वह सौन्दर्य पूर्णतः प्रदर्शित हुआ है। उनकी इस 'दि ब्ल्यू बर्ड' जैसे पूर्ण नाटक के बाद भी उसके उपसंहार के रूप 'सगाई' The Betrothal नामक नाटक क्यों निकला, यह अनेक आलोचको का आलोच्य विपय वर्षों तक बना रहा है।

'मोनावाना' को रचना उन्होंने खास तौर पर अपनो स्त्री के लिये की थी। इसमे भावों की प्रचुरता है और पात्र ऐसे सन्धि-क्षण पर रखे गये है, जो बुद्धि का आह्वान पूर्णरूप से करते है। गिवोवाना या मोनावाना 'पीसा' की सैनिक टोली के संचालक गीडो कोलोना की स्त्री है। यही इस कथानक की नायिका है। फ्लोरेन टाइन्स का सेनापति प्रिजिवेल जो उपर्युक्त नायिका का बचपन का प्रेमी है, खल-नायक का कार्य करता है। मध्यकालीन वातावरण और नाटकीय भाव-भंगी के कारण इस नाटक के संवाद में सजीवता आ गयी है। इसके लिखने के दस वर्ष बाद १९१३ ई० में 'मेरी मेगडालेन' प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक की भूमिका में मैटरलिक ने अपने

प्रति पॉल हीज के सद्भाव की चर्चा की है और लिखा है कि इसी पुस्तक के कथानक पर क्चित स्थिति-परिवर्तन के साथ उन्होंने भी नाटक लिखने का निश्चय किया है।

गत यूरोपीय महासमर का प्रभाव मैंटरलिंक पर खूब पड़ा था, इसका पता उनके 'Wrack of the Strom' 'Belgeum at War' 'Burgomaster at Stilemonde' 'The Cloud that Lifted' 'The Power of the Dead' से लगता है। उनकी अन्य पुस्तकें जिनके द्वारा उन्होंने अपनी मनोविज्ञानात्मक योग्यता प्रदर्शित की है, 'The Great Secret' 'Our Eternity' 'Unknown Guest' और 'The Light Beyond' हैं। मनुष्य अज्ञात शक्तियों का उत्पादक है और मनुष्यता और प्रकृति सदा एक दूसरे से विश्रृङ्खलित रहती हैं, इसका प्रतिपादन उनकी 'Treasure of the Humble' 'Life and Flowers' और 'मधुमक्षिका का जीवन' नामक रचनाओं में हुआ है। मधुमक्षिकाओं की कार्य-शैली का वशिष्ट अध्यन करके उसे मानव जीवन पर घटित करने के लिये इन्होंने मधुमक्षिकाओं को स्वयं पाला था। मधुमक्षिकाओ के छत्ते को अध्ययन करके उन्होंने मक्खियों की कार्य-प्रणालो को तुलना मनुष्य की कार्य प्रणाली से की है।

जीवन की स्पर्श्य वस्तुओं से परे जाने के लिये बड़े साहस की आवश्यकता होती है। मैंटरलिंक ने 'Ariadne and Blue Beard' 'Sister Beatrice' और 'The

Miracles of Saint Anthony' में संसार को उस उपेक्षित जादू की चाबी की ओर ध्यान देने को कहा है जिसके द्वारा स्पर्श्य संसार के निषिद्धात्मक क्षेत्रों मे भी प्रवेश प्राप्त हो सकता है। जीवन को उपमा उन्होंने 'वाटिका' या 'भीतरी मन्दिर' से दी है और वानस्पतिक संसार तथा मधु-मक्षिकाओं के छत्ते से भी उसका सादृश्य सिद्ध किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं मे उग्र भावनाओ का चित्रण थोड़े स्थलों पर किया है, किन्तु उन्होने सत्य की खोज और नैतिक आत्म-संयम के सौन्दर्य पर अधिक दृष्टान्त-प्रदर्शन किया है। इन्होंने सहज-ज्ञान के द्वारा अज्ञात और रहस्य-पूर्ण गुत्थियों मे प्रविष्ट होकर उसे सुलझाने की चेष्टा की है। उनकी बहुत-सी रचनाओं में उदासीनता और शोक की छाया देखने मे आती है, उनके पात्र प्रायः अपने चारों ओर के वातावरण से संघर्ष लेने में दुर्बल सिद्ध होते हैं। उनके तीन नाटकों 'The Intruder,' 'The Death of Tintagiles' और 'Interior' मे अदृष्ट-वाद की ओर काफी इंगित है, किन्तु परिपक्वावस्था और परिपक्व बुद्धि के बाद उन्होने जो नाटक लिखे है उनमे आध्यात्मिक उन्नति और रहस्यमय आदर्शवाद की प्रचुरता है।

उनके हाल के नाटको मे 'Life of Space' और 'Magic of the Stars' मे उक्त विचारों का विकसित रूप देखने में आता है।

इनकी आरम्भिक रचनाओं में से 'The Life of the

White Ant' का अनुवाद भी १६३० ई० में प्रकाशित हो गया है। मैटरलिंक सदा गम्भीर विचार के साथ लेखनी उठाते हैं और संख्या-वृद्धि के लिये साहित्यिक रचना नहीं करते।

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर

—॰॰॰※॰॰॰—

१९१३ ई० का नोबेल-पुरस्कार भारत के महाकवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर को मिला। पुरस्कार-पत्र में इनकी रचनाओं की विशेषता का वर्णन करते हुए लिखा गया है कि इनकी काव्य-रचना की आभ्यन्तरिक गहराई और उच्च उद्देश्य ऐसे है तथा प्राच्य विचारों को इन्होंने पाश्चात्य वर्णन-शैली में ऐसी सुन्दरता और नवीनता के साथ व्यक्त किया है कि ये वास्तव में नोबेल-पुरस्कार पाने के अधिकारी हैं।

श्री रवीन्द्रनाथ का जन्म ६ मई १८६१ ई० को कलकत्ते के जोड़ासाँखो भवन में हुआ था। इनका घराना प्राचीन काल

से ही सम्पन्न माना जाता है और इनके यहाँ पूर्वकाल से लक्ष्मी के साथ-साथ सरस्वती की भी उपासना होती आई है। इनके पितामह द्वारकानाथ ठाकुर तथा पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर बंगाल के प्रमुख प्रतिष्ठित व्यक्तियों मे गिने जाते थे। इनकी माता का नाम था शारदा देवी।

किन्तु ठाकुर-वश के इतना प्रतिष्ठित होते हुए भी मुसल्मानी नवाबों के साथ घनिष्ठता होने के कारण उसका तत्कालीन ब्राह्मण-समाज ने पतित कहकर बहिष्कार कर दिया था और समाज में पतित समझे जाने के कारण जिस समय राजा राममोहन राय ने ब्राह्म-समाज की स्थापना की, उस समय इस घराने ने समाज के प्रति विद्रोहात्मक भावना रखने के कारण तत्काल उसमे भाग लिया और समाज में दबकर रहने के बदले इसने नयी स्फूर्ति प्राप्त की। सामाजिक बाधा न होने के कारण ठाकुर-परिवार विलायत-यात्रा आदि की सुविधा सर्वप्रथम प्राप्त कर सका और इसीसे धर्म, दर्शन, विचार-स्वातंत्र्य, साहित्य, संगीत और कला के सम्बन्धमे इनके विचार नयी और क्रान्ति-युक्त भावना के प्रतिपादक बने।

ठाकुर-वश भट्ट नारायण की सन्तान है। भट्ट नारायण बंगाल के निवासी नहीं थे, वरन् वे उन पंच कान्यकुब्जों मे से थे जिन्हे आदिशूर ने कन्नौज से बुलाकर बंगाल मे बसाया था और वहाँ पर्याप्त सम्पत्ति प्रदान कर प्रतिष्ठित किया था। पहले उनके वंश की अल्ल 'ठाकुर' नही थी, पर जब वे लोग

यशोहर से आकर गोविन्दपुर मे वस गये तो वहाँ के पार्श्ववर्ती निम्न जाति के लोग इन्हे 'ठाकुर' कहकर पुकारने लगे, जो बंगाल में ब्राह्मणों के लिये एक प्रचलित सम्बोधन है।

रवीन्द्रनाथ का बचपन बड़े ही स्वाभाविक वातावरण में व्यतीत हुआ था। ये आरम्भ में ओरियण्टल सेमीनरी में पढने के लिये भर्ती किये गये। यहाँ बच्चों पर जितना शासन था, उसे देखकर बालक रवीन्द्र घबरा उठे और उन्होंने वहाँ से अपनी जान छुडाई। इसके बाद उन्हे नार्मल स्कूल में भर्ती करा दिया गया। वहाँ बच्चों से अंग्रेजी गान गवाया जाता था। उन्हे यह बात पसन्द नहीं आयी। एक शिक्षक के अपशब्द कहने पर रविबाबू इतने अप्रसन्न हो गये कि उससे कभी बात तक नहीं की।

सात वर्ष की अवस्था मे ही बालक रवीन्द्र ने कविता लिखनी शुरू कर दी थी। अंग्रेजी पढने में इनका मन नहीं लगता था और यह कविता लिखने की ओर अधिक झुकने लगे। नार्मल स्कूल से छुडाकर इन्हे 'बंगाल एकैडमी' नामक एङ्गलो-इण्डियन लडकों के स्कूल मे भर्ती किया गया। रविबाबू को आधुनिक पाश्चात्य विद्वानों ने 'नदी का कवि' कहा है। वास्तव में बालक रवीन्द्र का बालकपन प्रकृति के निकट और नदी के किनारे अधिक व्यतीत हुआ है, इसीलिये उनकी कविता पर प्रकृति की छाप है और स्थल-स्थल पर नदी का सौन्दर्य और उसके प्रवाह एवं तरंगों की मनोहरता दीखती है।

जिस समय रवीन्द्रनाथ की अवस्था पन्द्रह वर्ष की थी उस समय उनकी कविता 'भारती' मे निकलने लगी थी। 'भारती' मे उनकी सर्वप्रथम कृति 'कवि-कथा' नाम से निकली थी, जो पीछे पुस्तकाकार छपी। कुछ दिनों बाद 'वन-फूल' नाम से उनका दूसरा काव्य-संग्रह प्रकाशित हुआ। बीस वर्ष की अवस्था होने के पूर्व ही उन्होंने 'गाथा' नामक पुस्तक लिखी जो खण्ड-काव्य है। इन्हीं दिनों उन्होंने 'भानुसिंह-संगीत' के बीस गाने भी लिख डाले थे। बीस वर्ष की अवस्था मे रविबाबू का यथार्थ साहित्यिक जीवन आरम्भ हो गया।

पहली बार सोलह वर्ष की अवस्था मे ही २० सितम्बर १८७७ ई० मे वे विलायत गये और १८७८ के नवम्बर मास मे भारत लौटे। उन्होंने अपने यूरोप-भ्रमण का वृतान्त 'भारती' मे प्रकाशित कराया था जिससे यह मालूम होता है कि वह यात्रा उन्हे रुची नहीं।

इसके पश्चात् उनका 'करुणा' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ और उसके कुछ ही दिनों बाद 'भग्न-हृदय' नामक पद्यबद्ध नाटक भी छपा। इन दोनों रचनाओं मे संसार के दुःख और दाह का सुन्दर चित्रण है। २३ वर्ष की अवस्था तक रविबाबू कोई उद्देश्य स्थिर नहीं कर सके थे और उनका मन भी चंचल रहता था। १८८१ ई० से उनका मन स्थिर हुआ और १८८७ ई० तक उन्होंने सुन्दर रचनाएं कीं। उन दिनों जब उनकी 'संध्या-संगीत' प्रकाशित हुई तो समस्त

बंगाल में इनकी कीर्ति व्याप्त हो गयी। इनकी नवीन कविता और नवीन विचार-धारा ने सब को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। 'वाल्मीकि-प्रतिभा' और 'काल-मृगया' नामक दो संगीत-काव्य भी उन्हीं दिनों लिखे गये।

'संध्या-संगीत' लिखते समय रविबाबू का विचार प्रभात-संगीत लिखने का भी था और बाद में चलकर उन्होंने 'प्रभात-संगीत' लिखा भी। 'प्रभात-संगीत' ने वंग-साहित्य में धूम मचा दी और बहुतों ने उनकी इस रचना को उनकी सर्वश्रेष्ट कृति मान ली। सभी दृष्टियों से यह उनकी अनूठी रचना है—भाव और छन्द सभी अनोखे है। इसमे ओज और प्रवाह भरा हुआ है। इसके प्रश्चात् इनका 'विविध-प्रसंग' प्रकाशित हुआ। 'बहू ठकुरानीर हाट' भी उन्हीं दिनों की रचना है।

१८८३ ई० में रविबाबू कुछ दिनों के लिये करवार नामक पश्चिमी उपकूल मे रहे। यहाँ उन्होंने सुख और शान्ति-पूर्वक जीवन व्यतीत किया। यहाँ का प्राकृतिक दृश्य उन्हे बहुत भाया। इसी साल दिसम्बर मास में इनका विवाह हो गया।

'प्रकृतिर परिशोध' लिखने के पश्चात् जिन दिनों वे कलकत्ते आकर रहने लगे, उन्हीं दिनों उन्होंने 'छवि ओ गान' नामक पुस्तक लिखी। निधन गृहस्थों का जीवन और उनकी दैनिक स्थिति देखकर कवि के हृदय मे करुणा का ऐसा स्रोत उमड़ा कि उन्होंने उन दिनों 'नलिनी' नामक दुःखान्त नाटक

लिख डाला। दूसरा दुःखान्त नाटक 'मायार खेल' भी इसी प्रसंग को लेकर लिखा गया था।

उन दिनों 'आलोचना' नामक पत्रिका में इनके कई निबन्ध प्रकाशित हुए जिनसे उनकी समालोचना-शक्ति का पता लगता है। उन्हीं दिनों इनका 'राजर्षि' नामक उपन्यास भी प्रकाशित हुआ जो पीछे से नाटक के रूप मे बदलकर 'विसर्जन' के नाम से प्रकाशित किया गया। उन दिनों बंगाल मे बंकिमबाबू की धाक जमी हुई थी। उनकी प्रतिभा से रविबाबू भी आकर्पित हुए। रविबाबू की बंकिमबाबू से मित्रता हो गयी, किन्तु कुछ ही दिनों बाद दोनों मे घोर विवाद आरम्भ हो हुआ। रविबाबू ने 'हिन्दू-विवाह' पर जो वक्तृता दी उससे दोनों मे विवाद खडा हो गया। यह बात १८८७-८८ ई० की है। इन दिनों एक कविता लिखकर रविबाबू ने 'बाल-विवाह' की अच्छी खबर ली थी।

१८८७ ई० मे रविबाबू गाजीपुर (संयुक्त प्रात) गये और वहाँ के प्राकृतिक दृश्यों से आकर्पित होकर उन्होंने 'मानसी' के अधिकाश पद्य वहीं लिखे। 'मानसी' भाव एवं रस की दृष्टि से विविधात्मक है—इसमे 'भैरवो' जैसी भाव-प्रवण कविता है और 'गुरु गोविन्द' एवं 'सूरदासेर प्रार्थना' जैसी शान्ति-रस की कविताएँ भी। इसमे हास्य रस की कविता का भी अभाव नहीं है—'बंगवीर' इसका एक उत्तम उदाहरण है।

'मानसी' के पश्चात् रविबाबू का 'राजा ओ रानी' प्रकाशित हुआ। यह रविबाबू के उच्चकोटि के नाटकों में गिना जाता है।

ग़ाजीपुर से लौटने के बाद रविबाबू ने पिता की आज्ञानुसार अपनी जमींदारी की देख-भाल शुरू कर दी। उस समय रवि-बाबू की अवस्था ३३ वर्ष की हो चुकी थी। उन दिनों रविबाबू राष्ट्रीय ढंग की शिक्षा देने के सम्बन्ध में निबन्ध लिखने लगे और देश को नये ढंग से शिक्षित करने के आन्दोलन में लग गये। उनके भाषण 'भारती' में प्रकाशित होने लगे और वे राजनीतिक और दार्शनिक भावनाओं के केन्द्र-से बन गये। जमींदारी का कार्य करते समय उन्हे नौका पर अपनी जमींदारी में एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना पड़ता था। इससे उन्होंने बहुत-से प्राकृतिक दृश्य देखे और प्रजा की वास्त-विक अवस्था का निरीक्षण किया। नदी के सम्बन्ध में कवि ने जो कविताएँ लिखी है, वे पद्मा नदी के पर्यवेक्षण के फल-स्वरूप लिखी गयी प्रतीत होती है।

जमींदारी के प्रबन्ध मे लगे रहने पर भी उन्होंने लिखना जारी रक्खा और 'चित्राङ्गदा'-नाटक इन्हीं दिनों मे तैयार कर लिया। सौन्दर्य की दृष्टि से इसके जोड का दूसरा नाटक रवि-बाबू ने नहीं लिखा। इस नाटक का अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ और इसकी खूब चर्चा हुई। बंगाल के प्रसिद्ध कवि और नाटककार स्वर्गीय श्री० द्विजेन्द्रलाल राय ने इसकी आलोचना करते हुए लिखा कि 'चित्राङ्गदा' का सौंदर्य-वर्णन आदर्श की दृष्टि से हेय और भ्रष्ट है, क्योंकि इसमे पौराणिक भावनाओं की रक्षा करने का विचार रविबाबू ने बिल्कुल नहीं

किया। इसके पश्चात् 'सोनार तरी' नामक छायावादात्मक काव्य प्रकाशित हुआ। इसमें रविबाबू ने एक नवीन विचार-धारा प्रवाहित की। कुछ दिनों बाद 'चिना' प्रकाशित हुई— इसमे सौन्दर्य का चरम-विकास हुआ है। 'उर्वशी' नामक कविता की तो इतनी ख्याति है कि इसकी गणना ससार की सर्वोत्कृष्ट रचनाओं मे की जा सकती है।

१८९५ ई० मे उनकी 'साधना' प्रकाशित हुई। इसके बाद ही 'चैताली' मुद्रित हुई। १९०० ई० तक इनकी तीन और प्रसिद्ध पुस्तकें—'कल्पना' 'कथा-काहिनी' 'और' 'क्षणिका'— निकलीं।

१९०१ ई० मे रविबाबू 'बंग-दर्शन' के सम्पादक हुए। उसमे उन्होंने फिर से जान डाल दी। उसी वर्ष बोलपुर शान्ति-निकेतन की नींव पडी और फिर रविबाबू अपना अधिकाश समय वहीं व्यतीत करने लगे। कलकत्ता विश्वविद्यालय की शिक्षा-प्रणाली से घृणा करके उन्होंने अपना यह शान्ति-निकेतन पूर्णतः भारतीय संस्कृति के अनुकूल स्थापित किया।

१९०१ ई० से १९०७ ई० तक रविबाबू ने उपन्यास लिखने की ओर विशेप मनोयोग दिया। १९०२ ई० मे उनकी स्त्री का देहान्त हो गया। इन्हीं दिनों आपने 'गोरा' नामक उपन्यास लिखा और अपने छोटे बच्चे को बहलाने के लिये उन्होंने 'कथा' और स्त्री के वियोग मे 'स्मरण' लिखा।

१९०३ ई० मे अंग्रेजी 'दि रेक' प्रकाशित हुआ और

१९०४ ई० में उनके देशभक्ति-पूर्ण पद्यों का संग्रह। १९०५ ई० में 'खेया' निकली। इन्हीं दिनों उनके छोटे लडके की मृत्यु हो गयी।

१९०५ ई० जब बंग-भग का आन्दोलन शुरू हुआ, उन दिनों रविबाबू के गीत बंगाल के युवक-वृन्द में खूब विख्यात् हो गये और रविबाबू ने बहुत-से राजनीतिक लेख भी लिखे।

रविबाबू केवल कवि ही नहीं है, वे दार्शनिक, वक्ता, लेखक, नाटककार, उपन्यासकार, समालोचक, सम्पादक और अध्यापक भी है। अपने सुशिक्षित कुटुम्ब के व्यक्तियों के ही लेखों से संयुक्त आपने 'भारती' नामक साहित्य-पत्रिका निकाली और उसका सम्पादन स्वयं करने लगे। 'बगदर्शन,' 'प्रवासी' और 'भारतवर्ष' मे भी आपके लेख और कहानियाँ प्रकाशित होती रहीं। आपकी कृतियों से समस्त बंगाल में नवजीवन का संचार हो गया।

बॅगला मे यशस्वी हो चुकने के बाद आपने अंग्रेजी मे भी लेख, कहानियाँ और कविताएं लिखनी शुरू कर दीं। इससे सारे भारत और विदेशों तक मे उनका नाम फैल गया। अंग्रेजी-साहित्य में भी आपका खूब स्वागत हुआ। रविबाबू के 'माडर्न रिव्यू' मे प्रकाशित अंग्रेजी लेख विदेशी पत्रों में उद्धृत होने लगे। उनकी अंग्रेजी कहानियों का संग्रह लन्दन के एक प्रकाशक ने निकाला। बाद में मैकमिलन कम्पनी ने इनकी अंग्रेजी रचनाओं का विश्व-अधिकार ले लिया और पीछे उनके

उपन्यास, नाटक और कविता-ग्रंथ इसी कम्पनी ने प्रकाशित किये।

शान्ति-निकेतन की सुव्यवस्था करने के वाद रविबाबू फिर साहित्य-सेवा मे लग गये। उन्होंने पुनः विदेश-भ्रमण की तैयारी कर दी। अपने जिस अध्यात्म-प्रेम के कारण वे पहले से प्रसिद्ध हो चुके थे, उसका परिचय उन्होंने 'गीताञ्जलि' लिखने मे दिया। वास्तव में उनका यही ग्रन्थ-रत्न उन्हे नोवेल-पुरस्कार दिला सका। गीताञ्जलि क्या थी, यह बंगाल की गीता बनकर निकली। घर-घर मे इसका पाठ होने लगा। रविबाबू के मित्र श्री० सी० एफ० एण्डरूज ने इसे सुना तो मुग्ध हो गये। इसका अंग्रेजी अनुवाद करने के लिये रविबाबू को उन्होंने ही प्रेरित किया। पुस्तक अंग्रेजी मे ज्यों ही प्रकाशित हुई त्यों ही रविबाबू की गणना संसार की उच्चतम विभूतियों में हो गयी। सभी देशो के पत्रों मे इस रचना की चर्चा हुई। यूरोप की विख्यात् साहित्यक परिषदों ने इसको नोबेल-पुरस्कार के योग्य बतलाया और अन्त मे १९१३ ई० मे रविबाबू को यह पुरस्कार मिल गया।

इस पुरस्कार के बाद रविबाबू का नाम तो हुआ ही, साथ ही भारत का भी ससार मे अच्छा मान हुआ। संसार की सभी उन्नत भाषाओं मे गीताञ्जलि का अनुवाद प्रकाशित हो गया और विदेशियों ने भी देखा कि भारतीय प्रतिभा कैसी होती है। अमेरिका, जापान, चीन, जर्मनी, स्वीट्जरलैण्ड, इटली

फ्रांस और इंग्लैण्ड की साहित्यिक संस्थाओं ने उन्हे आमंत्रित किया और रविबाबू को अनेक बार विदेश-यात्रा करनी पड़ी। विदेशों में व्याख्यान देकर रविबाबू ने अपने आध्यात्मिक ज्ञान की धाक जमा दी।

गीताञ्जलि के कुछ पदों का हिन्दी-अनुवाद यहाँ देकर पाठकों को रविबाबू के आध्यात्मिक ज्ञान और उनकी प्रतिपादन-शैली का परिचय करा देना अनुचित न होगा। अंग्रेजी गीताञ्जलि के दो पदों का अनुवाद नीचे दिया जाता है:—

तेरी अनुकम्पा

तूने मुझे अनन्त बनाया है, तेरी ऐसी लीला है। तू इस नश्वर पात्र—शरीर—को बार-बार रिक्त करता है और सदा इसे नवजीवन से भरता रहता है।

तूने बाँस की इस छोटी-सी बाँसुरी को पर्वतों और घाटियों पर फिराया है और तूने इससे ऐसी मधुर तानें अलापी हैं जो नित्य नूतन हैं।

मेरा यह छोटा-सा हृदय तेरे अमृतमय हस्त-स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को मिटा देता है और फिर उसमें ऐसे उद्गार उठते हैं जो अवर्णनीय हैं।

तेरे अपरिमित दानों की, मेरे इन क्षुद्र हाथों पर, सदैव वर्षा होती रहती है। युग पर युग बीतते जाते हैं और तू उन्हे वर्षाता जाता है फिर भी उन्हे भरने के लिये स्थान ख़ाली ही रहता है।*

---

* गीताञ्जलि का प्रथम पद।

पूर्ण प्रणाम

हे मेरे परमेश्वर, मेरी समस्त इन्द्रियाँ एक ही प्रणाम में तेरी ओर लग जायँ और इस विश्व को तेरे चरणों पर पड़ा जानकर उससे ससर्ग करें।

जिस प्रकार सावन-घन बिन बरसे हुए जल के भार से नीचे की ओर झुक जाता है, वैसे ही मेरा सारा मन एक ही प्रणाम में तेरे द्वार पर झुक जाय।

हे प्रभु, मेरे समस्त गानों की विचित्र राग-रागनियों को एक धारा में एकत्र होने दे और एक ही प्रणाम मे उन्हे शान्ति-सागर की ओर प्रवाहित कर दे।

जिस प्रकार अपने वास-स्थान के वियोग से व्याकुल हंसों का झुण्ड अहर्निशि अपने पर्वतीय निवास की ओर उड़ता हुआ लौटता है, उसी प्रकार मेरी आत्मा को एक ही प्रणाम मे अपने सनातन के वासस्थान की ओर उड़ने दे।*

जिस समय रविबाबू देश और विदेश मे विख्यात् हो गये, उस समय भारत सरकार का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ, और उसने उन्हे 'सर' की उच्च उपाधि से विभूषित किया।

रविबाबू कवि ही नहीं, गायक भी है और वे अपने पदों को जिस लालित्य के साथ गाते है, वह अपने ढंग की अद्वितीय शैली है। उन्होंने अपने नाटकों मे प्रधान पात्र का पार्ट भी किया है।

---

*गीताञ्जलि का अन्तिम पद।

रविबाबू सामाजिक और राजनीतिक सुधार के पक्षपाती है और उन्होंने अपने परिवार में ये दोनों ही भावनाएँ भरी हैं। देश-प्रेम प्रदर्शित करने मे आप कभी पीछे पाँव नहीं रखते। १६१८ ई० में जब भारत सरकार ने महायुद्ध में अत्यन्त कुर्बानी के साथ भाग लेने पर भी रौलट ऐक्ट पास करके भारतीयों को दुखी किया और नौकरशाही ने पंजाब में हत्याकाण्ड करके भारतीयों के साथ पशुता-पूर्ण व्यवहार किया, तो रविबाबू से यह नहीं देखा गया और उसके विरोध-स्वरूप उन्होंने अपनी 'सर' की उपाधि सरकार को लौटा दी और भाषणों तथा लेखों मे इन कुकृत्यों की घोर निन्दा की।

इस वृद्धावस्था में भी रविबाबू साहित्य-सेवा में लगे हुए हैं आर देश-विदेश घूमकर भारत का नाम करने में आलस्य नहीं करते।

राम्याँ रोलाँ

—:※:—

१९१४ ई० मे साहित्यिक नोवेल-पुरस्कार किसी को भी नहीं प्रदान किया गया। १९१५ ई० के पुरस्कार-विजेता 'जीन-क्रिस्टोफ' के रचयिता रोम्याँ रोलाँ हुए। इनके नाम की घोषणा प्रकाशित होने पर साधारणतः सभी साहित्यिकों ने प्रसन्नता प्रकट की। केवल इसी एक पुस्तक (Jean-Christophe) पर उन्हे पुरस्कार मिला और निर्णयकर्त्ताओं की तथा पाठकों की दृष्टि इसी एक रचना पर विशेष रूप से आकर्षित हुई। रोम्याँ रोलाँ की यह रचना फ्रेंच भाषा मे क्रमशः १९०४ ई० से १९१२ ई० तक प्रकाशित हुई थी और अनेक भाषाओं मे अनूदित होकर आलोचकों को आकर्षित कर चुकी

थी। लोग इसे सामाजिक दशा का आईना कहने लगे। इस ग्रन्थ में जीवन, संगीत, भावना, संघर्ष, प्रेम, पराजय, विद्रोह, मित्रता और दुःखद किन्तु विजयी अन्त का दिग्दर्शन अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से वर्णित है। स्टीफ़न ज्वीग नामक लेखक ने रोम्याँ रोलाँ की जीवनी लिखते हुए कहा है कि पचास वर्ष की अवस्था तक तो रोम्याँ रोलाँ चुपचाप अध्ययन करने और संगीत का आनन्द लेने में लगे रहे है; किन्तु सहसा इस पुस्तक के प्रकाशन ने उन्हे साहित्यिक क्षेत्र मे प्रख्यात बना दिया।

रोम्याँ रोलाँ का जन्म २९ जनवरी, १८६६ ई० में फ्राँस के क्लेमसी नामक छोटे-से कस्बे में हुआ था। उनके पिता आनरेरी मजिस्ट्रेट थे और इनकी माँ एक मजिस्ट्रेट की कन्या। उनकी माँ संगीतज्ञा और धर्म-परायणा थीं। वह अपने छोटे लडके मेडेलेन को बहुत प्यार करती थीं। 'जीन-क्रिस्टोफ़' में उनके सुखमय घरेलू जीवन का अच्छा चित्रण किया गया है। लडकपन से ही रोम्याँ रोलाँ को संगीत से अधिक रुचि हो गयी और उनकी माँ ने उन्हे संगीत सिखाया तथा बड़े-बड़े संगीतज्ञों की कहानियाँ सुनायीं। जब उनकी स्कूली शिक्षा समाप्त हुई तो इनके पिताने अपना काम छोड़ दिया और इनकी शिक्षा के लिये पेरिस चले गये। पेरिस में उन्होंने एक बैंक में मुहर्रिर का काम इसलिये कर लिया कि इस प्रकार वे अपने लडके को अच्छी शिक्षा दिलवानेमे

सहायक सिद्ध होंगे। बीस वर्ष की अवस्था तक तो रोलाँ ने लीसी लुई-ली-ग्रॉण्ड (विद्यालय) में अध्ययन किया और इसके पश्चात् इकोल-नार्मल-सुपीरियर (महाविद्यालय) मे प्रविष्ट हुए। वहाँ उन्होंने इतिहास का विशेप अध्ययन किया। जैब्रील मोनॉड नामक अध्यापक ने रोम्याँ रोलाँ पर बहुत अधिक प्रभाव डाला। रोम्याँ रोलाँ ने टॉल्सटॉय के प्रति विशेप अनुराग प्रकट किया और सुधारक तथा लेखक के रूप में उनके प्रति श्रद्धा रखने लगे। शेक्सपियर के भी यह बड़े प्रशंसक हो गये—विशेषकर उनके ऐतिहासिक नाटकों और प्रेम-गीतों के।

रोम्याँ रोलाँ के समकालीन पॉल क्लॉडेल भी थे जिन्होंने कैथोलिक सम्प्रदाय का इतिहास रहम्य-पूर्ण ढंग से लिखा था। रोलाँ ने पहले ही से एक ऐसे एकाकी कलाविद् की कथा लिखी थी जिसने जीवन की चट्टान से चोट खायी हुई थी। उनकी यही रचना 'जीन क्रिस्टोफ़' नामसे प्रख्यात् होकर उन्हे पुरस्कार दिलाने का कारण बनी। उन्हे नार्मल स्कूल की छात्र-वृति, फ्रेंच स्कूल के पुरातत्त्व एव इतिहास का वजीफा प्राप्त करके प्रसन्नता नहीं हुई थी। पुरातत्त्व एवं इतिहास के लिये छात्रवृति प्राप्त करके वे अध्ययन के लिये रोम गये और वहाँ दो वर्ष तक ठहरे। वहाँ वह फ्रॉलिन मालविदा-वान-मेसेनवर्ग से मिले। यह महिला राजनीति, लेखन-कार्य और कला मे विशेषज्ञ थी। उसके साथ रोलाँ 'बेरिउथ' जाकर अपना संगीत-सम्बन्धी ज्ञान बढाने मे सफल हुए। वहाँ एक दिन

टहलते-टहलते उन्होंने 'जीन-क्रिस्टोफ़' का कथानक सोचा, किन्तु कई वर्षों तक उन्होंने पुस्तक लिखने में हाथ नहीं लगाया।

रोम से वापस आकर आप पेरिस में नार्मल स्कूल के अध्यापक हो गये। इसके बाद उनका ध्यान ललित कला की ओर गया। रोम मे रहते हुए उन्होंने 'आर्सिनो', 'केलीगुला' और 'निवोवे' नामक तीन नाटक लिखे थे, किन्तु वे अभीतक प्रकाशित नहीं हुए थे। वे उनके प्रकाशन की ओर ध्यान न देकर नार्मल स्कूल तथा अन्य संस्थाओं मे संगीत के प्रति लोगों का प्रेम बढाने की ओर झुके। वे संगीत-सम्बन्धी सभाओं में भाग लेने लगे और प्रख्यात् संगीतज्ञों की जीवनी भी उन्होंने लिखकर प्रकाशित करायी। उन्होंने अपनी शादी माइकेल ब्रील नामक एक भाषातत्त्व-विशारद् की लडकी से की। अपनी ससुराल में इनका बड़े-बड़े साहित्यिकों, वैज्ञानिकों और कलाविदों से परिचय हो गया। उनकी स्त्री एक सुसंस्कृत लड़की थीं और रोलाँ की जन-साधारण में संगीत-प्रचार की भावना मे वह सहायक सिद्ध हुईं। रोम्याँ रोलाँ ने शिक्षा-सम्बन्धी अड़चनों और राजनीतिक प्रतिक्रियाओं के विरुद्ध आवाज उठायी। उन्हीं दिनों उन्होंने 'डैन्टन,' 'फोर्टीन्थ आफ जुलाई'[१] 'ट्रम्फ़ आफ रीजन' और 'सेण्टलुई' की रचना की।

---

[१] इस नाटक का अनुवाद इस पुस्तक के लेखक ने 'विनाश की घडी' के नाम से किया है, जो साहित्य-मण्डल, दिल्ली से प्रकाशित हुई है।

उन्होंने उन्हीं दिनों यह आन्दोलन भी किया कि नाटकघर केवल अमीरों के लिये ही नहीं, सर्वसाधारण के लिये भी होने चाहिएँ। इस विषय पर लिखे हुए उनके निबन्धों का अंग्रेजी अनुवाद 'दि पीपल्स थियेटर' नाम से प्रकाशित हुआ है। उन्होंने नाटकघरों से सर्वसाधारण को तीन लाभ बतलाये हैं:—(१) आनन्द-प्राप्ति, (२) शक्ति-सम्पादन, और (३) ज्ञान-वर्द्धन।

राजनैतिक झगडों मे जबतक व्यक्तिगत कडुवाहट और मतभेद नहीं उत्पन्न हुआ तब तक वह उससे पृथक् नही हुए, किन्तु जब उन्होंने इस क्षेत्र मे गन्दगी देखी, तो सार्वजनिक जीवन से पृथक् होकर माइकेल ऐंजेलो, मिलेट तथा कुछ विख्यात् संगीतज्ञों की जीवनियाँ लिखीं। 'जीन-क्रिस्टोफ' का पहला परिच्छेद उन्होंने 'कैहियर्स-दी-ला-क्विनजेन'-नामक साहित्यिक पत्रिका मे प्रकाशित कराया। पेरिस के माण्टपार्न नामक भवन के पाँचवे तल्ले पर दो कमरे रोम्याँ रोलाँ ने अपने लिखने-पढने और रहने के लिये ले रक्खे थे। वह वही पुस्तकें लिखते, प्यानों बजाते, आगतों का स्वागत करते और दिल-बहलाव के लिये टहलते थे। बाहर से तो वे कुछ शान्त मालूम होते थे; किन्तु भीतर ही भीतर संसार के छल-प्रपंच पर कुढ़ रहे थे। उन्होंने निष्प्राणता से मरते हुए स्वार्थ-पूर्ण संसार की अध्यात्मशून्यता पर 'जीन-क्रिस्टोफ' में निराशा प्रकट की है और बतलाया है कि किस

प्रकार केवल आध्यात्मिकता के ही द्वारा मानवता की रक्षा हो सकती है।

धीरे-धीरे बिना किसी की सहायता के ही 'जीन-क्रिस्टोफ़' का नाम होने लगा और आलोचकों तथा पाठकों द्वारा इसकी खूब चर्चा होने लगी। जर्मनी के पत्रकारों ने इसके गुणों की बडी कद्र की। स्वीडन के लेखक पॉल सीपल ने रोम्याँ रोलाँ की जीवनी तथा आरम्भिक रचनाओं पर बहुत-कुछ लिखा। जून १९१३ ई० में फ्रेंच एकैडमी ने रोम्याँ रोलाँ को अपना महान् पुरस्कार दिया। गिलबर्ट कैनन महोदय ने 'जीन-क्रिस्टोफ' का अनुवाद अंग्रेज़ी में किया और फिर इसकी आलोचना अधिक होने लगी। उन्हीं दिनों रोलाँ ने अपने विद्यार्थी-जीवन में लिखे हुए नाटक भी प्रकाशित कराये जिनमें 'ले ट्रेजेडीज-डी-ला फ़ाय' अधिक विख्यात् हुआ, क्योंकि वह बीसवीं सदी के लोगों के आदर्श के अनुकूल था। 'वुल्वस' का भी अंग्रेजी अनुवाद हो गया और वह न्यूयार्क में रंगमंच पर भी खेला गया।

रोम्याँ रोलाँ ने संगीतज्ञों और अपने साथियों के चरित्र-चित्रण के साथ जो कहानी लिखी है उसमें उन्होंने समस्त संसार मे भावना और सामंजस्य की परिव्याप्ति के लिये चेष्टा की है तथा स्थानीय वातावरण में भी उसकी अनुभूति का उपदेश किया है। इस कहानी में नायक अपनी भावना से प्रेरित होकर सारे संसार में अन्वेषणात्मक दृष्टि से घूमता-फिरता है। वह

विभिन्न देश और जाति के लोगों से मिलना चाहता है। वह बीथोवेन, वागनर और ह्यूगो वुल्फ आदि कई संगीतज्ञों के वास्तविक जीवन का अनुभव प्राप्त करना चाहता है। वह आदर्शवाद और मानवता मे विश्वास का झण्डा ऊँचा रखना चाहता है। लेखक की तरह वह (नायक) भी जीवन की कठोर वास्तविकता और भ्रम-भञ्जकता का शिकार बनता है। पुस्तक में प्रसंग अनेक हैं, किन्तु अन्त मे उन्हे पूर्ण स्वर-समन्वय के साथ मिश्रित कर दिया गया है। यह कथा सूत्र रूप मे १८९५-९७ ई० मे लिखी गयी थी। इसके अंश क्रमशः फ्रास और इटली मे लिखे गये थे और नाटक के रूप में पूर्ति स्विट्ज़रलैण्ड और इंग्लैण्ड मे की गयी थी। १९१२ ई० में यह नाटक के रूप में रंगमंच पर भी लाया गया था।

'जीन क्रिस्टोफ' जैसा विशद उपन्यास संसार मे कदाचित् ही दूसरा होगा। इसकी पृष्ठ-संख्या १५५० है और जिल्दें तीन है। इसमे अनेक स्थलों पर अपने ढंग के अनोखे और अद्वितीय वर्णन है। इसके पात्रों मे से कुछ ऐसे है जिनमे जीवन भरा हुआ है, कुछ ऐसे हैं जो स्मृति को सदा ताजा रखते हैं। ऑलीवियर, ग्रैंजिया, ऐण्टोने, सैबिन जैकलिन, इमैनुएल, डा० ब्रान और नायक के चरित्र ऐसे ही हैं। शेष बहुत से अप्रधान पात्र ऐसे हैं जो स्मरण भी नहीं रक्खे जा सकते। पुस्तक का वर्तमान रूप लेखक की कल्पना के पूर्ण विस्तार का द्योतक है। इसके थोड़े-थोड़े अंश

भी संगीत की एक-एक कड़ी की भाँति सुन्दर एवं आनन्द-दायक है।

कुछ आलोचकों ने एक बार रोम्याँ रोलाँ पर यह आपत्ति की कि वह जर्मनी के प्रति शत्रुता के भाव रखते हैं। इस पर उन्होंने उत्तर दिया कि मेरी जर्मनी से अणुमात्र भी शत्रुता नहीं है, क्योंकि जर्मनी की भाँति मैंने फ्रांस की भी कई स्थलों पर निन्दा की है। उन्होंने जर्मनी के सम्बन्ध मे लिखा है कि जर्मनी नैतिक शक्ति रखते हुए भी बीसवीं सदी में 'रुग्ण' हो रहा है; फ्रांस भी दोषमुक्त नहीं है। दोनों देशों मे वीरतापूर्ण भावनाएं हैं, किन्तु इनमें से एक देश के निवासी दूसरे देशवासी को ठीक तौर से समझ नहीं पाते। जबतक ये दोनों देश एक दूसरे को मित्रता-पूर्ण भाव से समझने की चेष्टा नहीं करेंगे तबतक युद्ध अवश्य-म्भावी है, जो दोनों ही राष्ट्रों को छिन्न-भिन्न करके छोड़ेगा। 'जीन-क्रिस्टोफ' की यह भविष्यवाणी दो ही वर्ष बाद सच हुई और १९१४ ई० में जर्मनी और फ्रांस ने शत्रु के रूप में यूरोपीय महासमर में भाग लिया।

इस ऐतिहासिक उपन्यास का अन्तर्राष्ट्रीय विचार पर स्थायी प्रभाव पड़ा है। इसमे एक साथ रूपक, अद्भुतता, मनोवैज्ञानिक अध्ययन और आदर्शवादी स्वप्न का सम्मिश्रण है। इसमें विशुद्धता, भावुकता और कल्पना-प्रवणता पायी जाती है। इस पुस्तक के अनुवादक (गिलबर्ट कैनन) ने लिखा है कि यह (जीन-क्रिस्टोफ़) बीसवीं सदी की पहली सर्वोत्कृष्ट

पुस्तक है और इसमें वर्णित 'सन्त क्रिस्टोफर' का चरित्र अद्भुत और अपूर्व है। इसमे अनेक कथा-भाग ऐसे है जिनमे कला और वर्णन-सौन्दर्य का पूर्ण विकास हुआ है। 'ऐण्टोने' 'दि हाउस' (घर) और 'दि न्यू डान' (नव प्रभात) ऐसे ही अश है। लेखक ने अन्त में भावी जगत् और विशेषतः युवक-समाज को इस प्रकार सन्देश दिया है—"हे वर्तमान जगत् के मनुष्यो, आगे बढो; हमे पद-दलित करके आगे बढ़ो। तुम हमसे अधिक प्रसन्न बनो। जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म का पर्याय क्रम है। किस्टोफ़! हमे पुनः जन्म धारण करने के लिए मरना अवश्य है।"

पुरस्कार-प्राप्ति के बाद रोम्याँ रोलाँ ने 'कोला ब्रूगनाँ' लिखा जो १९१९ ई० मे अंग्रेजी मे अनुवादित होकर प्रकाशित हो गया। यह उपन्यास उनके पूर्वोक्त बृहत् उपन्यास की अपेक्षा अधिक हलका रहा। यह स्विट्जरलैण्ड मे १९१३ ई० में लिखा गया था। लडकपन से ही अपने मुख्य पात्र ओलिवियर की भाँति रोम्याँ रोलाँ युद्ध से भय खाते थे। युद्ध के समय वह जेनेवा झील के निकट वेवी में थे और उन्होंने वहीं ठहरे रहने का निश्चय किया। वह फ्रास को प्यार करते थे, परन्तु युद्ध मे सम्मिलित होकर अपनी आत्मा को दुखित नहीं करना चाहते थे। उन्होंने रेड क्रॉस सोसाइटी मे भाग लेकर सेवा-कार्य किया। युद्ध के सम्बन्ध मे उन्होंने जो-कुछ लिखा वह 'एबव्ह दि बैटिल' नामक पुस्तक मे प्रकाशित

हुआ है। इन्होंने एक जर्मन नाटककार को पत्र लिखकर सद्भाव स्थापित करने की चेष्टा की थी। वुड्रो विल्सन को भी उन्होंने इस सम्बन्ध में पत्र लिखे थे और समस्त संसार के मस्तिष्क से काम करनेवालों के नाम एक गश्ती चिट्ठी लिखकर उनमें भ्रातृ-भाव स्थापित करने की चेष्टा की थी। इन्हीं दिनों उन्होंने महात्मा गाधी* पर भी एक पुस्तक लिखी।

इसके पश्चात् जब उन्हे अवकाश मिला तो उन्होंने 'लिलुली' नामक एक हास्य-रस-पूर्ण नाटक लिखा जिसकी प्रधान पात्री के रूप में उन्होंने माया का चित्रण किया। उन्होंने 'क्लेरमबॉल्ट' नामक एक कहानी लिखी जिसमे युद्ध के समय एक स्वतंत्र आत्मा की गाथा का चित्रण है। इसका अंग्रेजी अनुवाद कैथेराइन मिलर ने किया है। इस कहानी के बहाने लेखक ने अपने भाव प्रकट कर दिये है और जीवन तथा संघर्ष के तत्त्वज्ञान पर अच्छा प्रकाश डाला है। इस कहानी का नायक क्लेरम्बॉल्ट अपने जीवन मे अनोखे अनुभव करता है। उसके शान्तिपूर्ण ग्राम्य जीवन के आरम्भिक चित्र की उसके उस जीवन से तुलना की गयी है जब वह पेरिस मे पहुंचकर उन्माद-पूर्ण जीवन व्यतीत करने लगता है। नगर में जाकर वह अपने पुत्र मैक्सिम को सेना में भर्ती होने के लिये आग्रह करता और युद्ध मे जाकर मर जाता है। लेखक ने

*Mahatma Gandhi The Man Who Became One With Universal Being.

इस कहानी को क्रेरमबोल्ट और उसकी स्त्री के लिये दुःखान्त-पूर्ण बनाया है, पर उसकी आत्मा की स्वतंत्रता के लिये विजय-चिह्न सूचक। इस मनोवैज्ञानिक कहानी मे आत्म-चरित की झलक स्थल-स्थल पर मिलती है।

१९२२ ई० मे रोम्याँ रोलाँ ने 'लेम एन्शैण्टे' लिखा जिस का अनुवाद बेन रे रेडमैन ने 'एनेट ऐण्ड सिल्वी—दि प्रेल्यूड' नाम से किया है। इसकी दूसरी जिल्द 'समर' का अनुवाद एलीनोर स्टिमसन और वानविक ब्रुक्स ने किया है। इस पुस्तक मे विशेप प्रसग या सिद्धान्त न रखकर लेखक ने सत्य को प्राप्त करने के लिये संघर्ष दिखाया है और अन्त में यह दिखाया गया है कि आत्मा का सामंजस्य प्राप्त करके कितने आनन्द की प्राप्ति होती है।

रोम्याँ रोलाँ ने भारतीय महापुरुषों और भारतीय आन्दोलनों की ओर विशेष अनुराग प्रदर्शित किया है और श्रीराम-कृष्ण परमहंस तथा स्वामी विवेकानन्द की जीवनियाँ और उनके सिद्धान्त पर पुस्तकें लिखी है। महात्मा गाँधी और कवि-सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर से उनकी विशेष मित्रता है और विगत द्वितीय गोलमेज कान्फरेंस के अवसर पर महात्माजी जब लन्दन गये थे तो लौटते समय रोम्याँ रोलाँ के यहाँ सदल-बल ठहरकर उन्होंने उनकी मेहमानदारी स्वीकार की थी।

अपनी बाद की रचनाओं मे रोम्याँ रोलाँ ने आदर्शवाद का स्पष्टीकरण किया है जो उनके मत से भावना और क्रिया के

सामंजस्य और स्वतत्रता का नाम है। उनकी शैली कहीं-कहीं असंगत और ठोस भी हो गई है, पर उसमे वास्तविकता का उच्च प्रकाश और महान् सौन्दर्य सन्निहित है। अपने जीवन में उन्होंने अनेक ऐसे संघर्षों का अनुभव किया है जिनका उनके कोमल मन पर और शुद्ध आत्मा पर गम्भीर प्रभाव पडा है। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मित्रता और आध्यात्मिक ऐक्य के लिये शुद्ध भाव से लेखनी उठायी है और उन्हे इसमे काफ़ी सफलता मिली है।

गेटे और बीथोवेन के सम्बन्ध मे इन्होंने 'गेटे ऐण्ड बीथोवेन' नामक सुन्दर पुस्तक लिखी है जिसमे उनके संगीत-प्रेम और संगीत-ज्ञान का सुन्दर परिचय मिलता है। इसमे पाँच निबन्ध अत्यन्त सुन्दरता-पूर्वक लिखे गये हैं। अब भी रोम्याँ रोलाँ लेखन-कार्य में लगे ही रहते हैं।

हीडेनस्टाम

[स्वीडन के प्रसिद्ध कवि]

१९१६ ई० को नोबेल पुरस्कार स्वीडन के विख्यात् कवि हीडेनस्टाम को मिला। इनका पूरा नाम व..र-वान-हीडेनस्टाम था। पुरस्कार प्राप्त करने के पहले ही स्वीडन मे यह अद्वितीय कवि माने जा चुके थे। अंग्रेजी के पाठकों लिये यद्यपि वह उतने विख्यात् कवि नहीं है, किन्तु उनके देश में इनकी कविताओं का अद्वितीय मान है। धीरे-धीरे इनकी रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद भी होता जा रहा है और हाल में चार्ल्स व्हार्टन स्टार्क, आर्थर जी० चाटर और कैरोलिन एम० नडसन ने इनकी रचनाओं का अंग्रेजी मे अनुवाद करके इन्हे संसार के समक्ष लाने का श्रेय प्राप्त किया है।

वर्नर-वान-हीडेनस्टाम का जन्म ६ जुलाई १८५९ ई० को नार्क (स्वीडन) में हुआ था । बचपन में वह बड़े लजालु स्वभाव के और दुर्बल थे, किन्तु पढ़ने-लिखने में उनका मन बहुत लगता था—विशेषकर कविताएँ और वीर गाथाएँ यह बड़े चाव से पढ़ते थे। बचपन में ही उन्हे फेफड़े की बीमारी हो गयी थी जिसके कारण उन्हे जलवायु-परिवर्तन के लिये दक्षिणी यूरोप भेजा गया। आठ वर्ष तक वह स्वीडन से दूर ही रहे और इटली, स्विट्जरलैण्ड, ग्रीस, तुर्की और मिस्र का भ्रमण करते रहे। उनके पूर्वजों में से कुछ लोग पूर्वीय देशों में सरकारी नौकरियाँ कर चुके थे। उन देशों के सुन्दर दृश्य देखकर वह मुग्ध हो गये।

पहले-पहल उनके मन में चित्रकार बनने की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी। कुछ दिनों तक वह पेरिस के 'जेरोम'—चित्रकला शिक्षणालय—के विद्यार्थी रहे थे। समालोचकों ने उनकी कविताओं में स्थल-स्थल पर उनकी चित्रकला-विज्ञता का आभास पाया है। फ्रास के अतिरिक्त इटली और दमिश्क में भी उन्होंने चित्रकला के उपकरण संग्रह किये थे। युवावस्था के आरम्भ मे ही इनका एक मध्यम श्रेणी की स्विस लड़की से प्रेम हो गया और इसके साथ उन्होंने शादी भी कर ली थी। इसके बाद ब्रूनेग के एक पुराने किले मे ये एकान्त-वास करने लगे जहाँ यह अपनी स्त्री और ऑगस्टस्ट्रिंग बर्ग नामक मित्र के अतिरिक्त और किसी से नहीं मिलते थे।

स्ट्रिंडबर्ग इस युवक कवि हीडेनस्टाम की प्रतिभा से आकर्षित हो गये थे और इनका प्रशंसक बन चुके थे। हीडेनस्टाम ने अब निश्चय कर लिया कि वह चित्रकारी मे न पडकर साहित्यिक क्षेत्र मे पदार्पण करेगे। उन्होंने अनेक कविताएँ लिखीं और उनका संग्रह 'Pilgrimages and Wander Years' नाम से किया। 'Thoughts in Loneliness' नामक काव्य-सग्रह से इनके मातृभूमि के प्रेम और अन्याय के प्रति रोप का परिचय मिलता है। बचपन के दृश्यों के सम्बन्ध मे उन्होंने अनेक सुन्दर कविताएँ लिखी है जिनकी स्मृतियाँ अत्यन्त मनोमोहक है। इन कविताओं मे उन्होंने अपनी माता को स्मरण किया है। इनमे शोकोद्गार का पर्याप्त सम्मिश्रण है।

१८८७ ई० मे हीडेनस्टाम के पिता का देहान्त हो जाने के कारण उन्हे विदेशों के भ्रमण से स्वीडन लौट आना पडा और परिपक्वावस्था तक उन्हे घर पर ही रहना पड़ा। 'Pilgrimages and Wander Years' (तीर्थयात्रा और भ्रमण के दिन) के पश्चात् इनकी कविताओं का एक और संग्रह प्रकाशित हुआ जिसके कारण उनकी ख्याति स्वदेशवासियों मे और बढ गयी। इस संग्रह मे 'A Man's last Word to a Women' अच्छी कविता समझी जाती है। इसके अतिरिक्त 'The Forest of Tiveden' (टिवेडन का जंगल) और 'The Burial of Gustaf Froding' भी उन्हीं दिनों लिखी गयीं। स्वीडन मे इनकी कविताएँ इतनी अधिक प्रचलित हुई

कि जगह-जगह लोग इनको गाने लगे। इनकी 'स्वीडन' नामक कविता तो सब जगह सामूहिक रूप से गायी जाने लगी। इसमें देशभक्ति की पर्याप्त पुट है। उनकी बाद में लिखी हुई कविताओं में भ्रातृभाव की छाप है और १९०२ ई० में प्रकाशित उनके कविता-संग्रह में संसार-मात्र में समानाधिकार-स्थापन का शुभ सन्देश है। जानसन की तरह उन्होंने भी आदर्श में राष्ट्रवाद और विश्ववाद दोनों को स्थान दिया है। जानसन की मृत्यु पर उन्होंने जिस शोक-पूर्ण काव्य की रचना की है, वह अपना विशेष स्थान रखती है। उसमें जानसन को उन्होंने 'नार्वे का पिता' लिखा है।

वर्नर-वान-हीडेनरटाम उपन्यासकार और कवि दोनों ही थे। उनका पहला उपन्यास 'एण्डीमियन' नाम का प्रकाशित हुआ, जिसका प्रसंग पुराना होने पर भी शैली नवीन थी। एक चित्रकार की सी सुकुमार कोमलता के साथ उन्होंने यह प्रेम-कहानी लिखी थी। इसका वातावरण प्राच्य है और बीच-बीच में पाश्चात्य सभ्यता का अवरोध है। कहानी में तथ्यवाद के वह पूर्ण विरोधी थे और 'पेपिटाज वेडिंग' (पेपिटा का विवाह) में उन्होंने आदर्शवाद और आभ्यन्तरिक सत्य की खोज पर जोर दिया है। उनके उपन्यासों में 'चार्ल्समेन' जिसमें चार्ल्स बारहवें की कहानी है, अधिक विख्यात है। इसमें बीच-बीच में कविताओं की छटा भी खूब है। कथानक में स्वीडन की वीरता का विशद वर्णन है। इनकी नाटकीय कहानियों में से

'फ्रेंचमॉन्स', दि 'फोर्टीफाइड हाउस' (सुरक्षित घर) और 'कैपचर्ड' (कैदी) अधिक ख्यातिप्राप्त है। समस्त जीवन रणक्षेत्र मे रहकर भी नाली मे मरनेवाले सम्राट् की उन्होंने बड़ी ही करुणा-जनक कहानी लिखी है।

हीडेनस्टाम के अन्य उपन्यास है 'सेण्ट जार्ज ऐण्ड दि ड्रैगन' 'सेण्ट ब्रिरगिटाज पिल्ग्रिमेज' और 'फारेस्ट मर्मर्स'। इनकी निबन्धमाला 'क्लासिसिज्म और ट्यूटानिज्म' के नाम से मुद्रित हुई है। सचमुच यह दुर्भाग्य की बात है कि उनकी रचनाओं मे से बहुत कम का अनुवाद अंग्रेजी मे हुआ है। उन्होने नरम दल के और सुधारक पत्रों मे भी लेख लिखे हैं। १६०० ई० मे उन्होंने तीसरी बार विवाह किया और वाडरटेना नगर के निकट रहने लगे जहाँ उन्होंने अपने बचपन के दिन व्यतीत किये थे। उनकी स्त्री सुसंस्कृत और उच्च घराने की थीं। १६१२ ई० मे वे स्वीडिश एकैडमी के सदस्य चुने गये और इसके चार वर्ष बाद उन्हे नोबेल-पुरस्कार प्राप्त हुआ।

उनकी पद्यात्मक रचनाओं मे से 'क्रेडिल साग्स' (लोरी के गीत) अच्छा नाम पा चुकी है। बच्चों के लिये कहानियाँ भी इन्होंने लिखी है। स्वीडन के शिक्षा-विभाग के अधिकारियों ने उनसे शिक्षा विभाग के लिये रीडरें लिखने के लिये भी कहा। उन्होंने यह काम बड़े प्रेम से किया। उनमें इन्होंने वीरता की कहानियों का समावेश पर्याप्त रूप मे किया। अधिक उम्र के लड़के-लड़कियों और युवकों के लिये उन्होंने दो नाटक

आधुनिक ढंग के लिखे है जिनके नाम 'सूद्‌सेयर' (भविष्यवक्ता) और 'दि बर्थ आफ़ गॉड' (भगवान का जन्म) है। इनका अंग्रेजी अनुवाद कैरोलिन एम० नडसन ने किया है। इनमे से पहली रचना एक आर्केडियन कथानक के आधार पर लिखी गयी है और दूसरी मिस्र की पौराणिक कहानियों के आधार पर।

इनकी 'दि ट्री आफ फोकंग्स' का स्वीडिश से आर्थर जी० चार्टर नामक अमेरिकन ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है। इसमे इतिहास के साथ-साथ अनेक किम्वदन्तियों और कल्पनाओं का सम्मिश्रण है।

हेनरिक पॉण्टोपीडन

१९१७ ई० का नोबेल-पुरस्कार डेन्मार्क के प्रख्यात् लेखक हेनरिक पॉण्टोपीडन और कार्ल जेलेरप को मिला। अबतक पुरस्कार अन्य राष्ट्रों के साहित्यक महारथियों को ही मिलता आया था और डेन्मार्क-वासी इससे वञ्चित ही थे। इसका एक कारण तो यह था कि इस देश के लेखकों की रचनाओं के अनुवाद कम होने के कारण इनकी रचनाएँ साहित्यिक जगत् के सम्मुख उतनी नहीं आपायी थीं जितनी स्वीडन और नार्वे के लेखकों की। केवल हंस क्रिश्चियन ऐण्डर्सन और जार्ज ब्रैण्डस ही अभीतक नाम पा चुके थे। डेन्मार्क की राजकीय नाट्यशाला (The Danish Royal Theatre) एक

शिक्षा-सम्बन्धी संस्था समझी जाती थी । हॉलबर्ग, ओह्ले-श्लैंगर और एडवर्ड ब्राडेस नामक नाटककारों की रचनाएँ पहले भी आदर पा चुकी थीं और अन्यदेशीय साहित्यिकों ने उनकी रचनाएँ चाव से पढ़ी थीं । बर्गस्टार्म के नाटक (Karen Bornman) का अंग्रेजी अनुवाद एडविन जार्कमैन ने किया था ।

हेनरिक पॉण्टोपीडन का जन्म १८५७ ई० में जटलैण्ड के फ्रेडरिका नामक स्थान में हुआ था । उनके पितामह और पिता पादरी रह चुके थे । अभी बालक पॉण्टोपीडन स्कूल मे ही पढ रहे थे कि उनका परिवार फ्रेडरिका से स्थानान्तरित होकर कैण्डर्स आ गया । यहाँ वह अपने परिवार के साथ तब तक रहे जब तक कि वे कोपेनहेगन जाकर पॉली-टेकनिक स्कूल मे इंजीनियरी पढने नहीं चले गये । वे स्विट्जरलैण्ड की सैर को भी गये, जहाँ उन्होंने पहले-पहल प्रेम-जगत् का अनुभव प्राप्त किया किया । उन्होंने अपनी आरम्भिक रचना स्विट्जरलैण्ड मे ही की थी ।

सन् १८८१ ई० मे डेन्मार्क मे उनका 'क्लिप्ड विंग्स' नामक कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ । इनमें 'चर्च शिप' (गिरजाघर का जहाज) कल्पना और नाटकीय केन्द्रीभूतता की दृष्टि से बहुत सुन्दर है । इसमें रहस्यमय ढंग से यथार्थवाद का सम्मिश्रण किया गया है । १८९१ ई० में वह कुछ समय के लिये ऑस्ट्री में रहे थे और कुछ ही वर्ष बाद अपनी दूसरी

शादी करने के बाद वह कोपेनहेगन चले गये, जहाँ उन्होंने ब्राण्डेस से मित्रता की और शिक्षा-सम्बन्धी तथा साहित्यिक क्षेत्र मे नेतृत्व प्राप्त कर लिया। नये नाट्यकारों और औपन्यासिकों को भी वे यथेष्ट आदेश दिया करते थे। उन्हे इब्सन का अनुगामी कहा जाता है। उनकी कहानियों में दृत्यों के मलिन प्रभाव की छाप दिखायी देती है। समालोचकों ने तो यहाँ तक लिख मारा है कि इनकी रचनाओं में स्थानीयता तथा आध्यात्मिकता अधिक होने के कारण बहुत संकीर्णता आ गयी है।

पाण्टोपीडन की रचनाओं में डेन्मार्क के ग्राम्य जीवन का सुन्दर चित्रण है। उनकी पहली पुस्तक 'दि प्रामिस्ड लैण्ड' मे तथ्यवाद का बाहुल्य है। इसमें दिखाया गया है कि इस भौतिक अभिलाषा के जगत् में आदर्शवादियों के संघर्ष का वास्तविक रूप क्या होता है। यह पुस्तक बड़ी सावधानी के साथ तीन वर्ष मे लिखकर पूरा की गयी थी और यह उनकी सफल रचना मानी जाती है। उनका दूसरा उपन्यास 'लकी पीटर' था। इसे भी उन्होंने चार वर्ष में लिखा था। इस उपन्यास का नायक भी लेखक की भाँति पादरी का लड़का और इंजीनियर था। 'दि किंगडम आफ़ दि डेड' (मृतकों का साम्राज्य) महायुद्ध के दिनों मे लिखा गया था और यह देशभक्ति के साथ-साथ एक विशेप आदर्श के प्रति निष्ठा उत्पन्न करके युद्ध से घृणा करा देता है। इसमे कोपेनहेगन का नागरिक एवं ग्रामीण

दृश्य सामने आजाता है। इसके अतिरिक्त उनके 'दी अपाथेकैरीज डॉटर' का भी अनुवाद जी० नीलसेन महोदय ने अंग्रेजी में किया है।

पॉण्टोपीडन की कहानियों के अंग्रेजी अनुवाद में से 'दि प्रामिस्ड लैण्ड' और 'इमैनुएल' या 'चिल्ड्रन आफ़ दि स्वायल' पढ़ लेने से लेखक का उद्देश्य मालूम होजाता है। इस कहानी-संग्रह का अनुवाद श्रीमती एडगर लुकास ने किया है। इनकी कहानियों का चित्रण नेली इरिचसेन ने किया है, जिन्होंने 'दि एवोल्यूशन आफ़ दि डेनिश पीजेण्ट' (डे-मार्क के कृषक का विकास) नामक परिच्छेद में लेखक के वास्तविक उद्देश्य का चित्रण किया है। १८४६ ई० में जब डेन्मार्क के किसानों को आजादी मिली और वे गुलाम से नागरिक बना दिये गये तो पाण्टोपीडन के शिक्षा-सम्बन्धी एवं धार्मिक जीवन में काफ़ी बाधा और कोलाहल का समावेश हो उठा। राजनैतिक दल संगठित हुए। "किसान मित्र संघ" ने नये-नये स्कूलों की स्थापना की। १८६६ ई० में फिर उक्त स्वतंत्रता के ऐक्ट में संशोधन उपस्थित करके जब किसानों की स्वतंत्रता का अपहरण हुआ तो उन्हे बड़ी ही निराशा का सामना करना पड़ा। बीलबी और स्किबरप नामक जिन दो गाँवों में पाण्टोपीडन महोदय ने निवासकर शिक्षक का काम किया था वहाँ का चित्रण बड़ी ही सजीव भाषा में किया गया है और बतलाया गया है कि उनमें विद्रोह की भावना किस प्रकार जाग्रत हुई थी।

पॉण्टोपीडन की कुछ छोटी कहानियों की वर्णन-शैली अद्भुत है। 'ईगल्स फ्लाइट' और 'मियासाज' ऐसी ही कहानियाँ है। वह शिक्षा सम्बन्धी उन्नति विशेषरूप से चाहते हैं और इसके लिये स्वयं भी सचेष्ट रहते हैं। वह राजनैतिक छल-प्रपंच और झूठे समझौते-सन्धियों के विरोधी है। उनकी भावना सदा से आदर्शवाद-मूलक रहती आयी है। उनकी सब से बड़ी विशेषता यह है कि उनका डेन्मार्क के ग्रामों और नगरों का वर्णन इतना तथ्यपूर्ण और सजीव है कि उन्हें साहित्यिक जगत् मे डेनिश-जीवन का फोटोग्राफ़र कहा जाता है। इनकी रचनाओं की अभी तक उतनी कद्र नहीं हुई है जितनी होनी चाहिए, किन्तु ज्यों-ज्यों इनकी रचनाओं का अंग्रेज़ी अनुवाद अधिकाधिक रूप में होता जायगा, त्यों-त्यों इनकी ख्याति बढ़ती जायगी।

कार्ल जेलरप

१९१७ ई० का शेपार्द्ध पुरस्कार कार्ल जेलरप को प्राप्त हुआ था, क्योंकि एकैडमीकी दृष्टि में यह महोदय भी बहुमुखी प्रतिभा के भावुक और उच्चादर्शपूर्ण लेखक थे। पॉण्टोपीडन की तरह कार्ल एडाल्फ़ जेलरप भी एक पादरी के लड़के थे। उनका जन्म रोहोल्ट नामक स्थान में १८५७ ई० में हुआ था। अपने पिता को प्रसन्न करने के लिये पहले तो उन्होंने धर्मतत्त्व का अध्ययन किया, किन्तु उन्हे याजक बनने की इच्छा नहीं थी और उनका आधुनिक सिद्धान्तोंकी ओर अधिक झुकाव था। उन्होंने डार्विन, ब्रैण्डस और स्पेंसर की शिष्यता स्वीकार करली और बाद में उससे भी मन फेरकर वह ऐतिहासिक अध्ययन में लग गये। वह 'इडास' के अध्ययन

में खास दिलचस्पी लेते थे और लेखक बनने के पहले ही वह साहित्य की ओर आकर्षित हो गये थे। उन्होंने अपने जीवन का अधिकाश ड्रेसडन मे व्यतीत किया, जहाँ वह अपने घर की अपेक्षा अधिक विख्यात् हो गये थे।

जेलेरप ने अनेक विषयों पर लेखनी उठायी है। कला और संगीत पर उन्होंने कई पुस्तकें लिखी है। उन्होंने ऐसे नाटक लिखे है जिनमे आनिधुक ख्रिष्टान्न धर्म के तत्त्व का सामंजस्य ग्रीक-सौन्दर्य-प्रेमसे किया है। इन्होंने 'इडास' आदि पुराने कवियों की कहानियों का अनुवाद आधुनिक डेनिश भाषा में किया है। उनकी दो कहानियाँ—'दि पिलग्रिम कामनिता' और 'मीन'—अंग्रेजी में अनूदित होकर प्रकाशित हुई हैं। उनके उपन्यासों में 'ऐन आयडियलिस्ट' (एक आदर्शवादी) और 'पास्ट मान्स' ऐसे है जिनमें व्यंग और सजीव चित्रण भरे पडे हैं।

'पिलग्रिम कामनिता' का अनुवाद जान ई० लॉगॉ ने किया है और इसका स्पष्टीकरण दूसरा उपनाम 'ए लीजेण्डरी रोमास' लिखकर किया गया है। इसमे महात्मा बुद्ध की वह कहानी है जिसमे यह बतलाया गया है कि वे गंगातट से होकर पंच-पर्वत की नगरी को गये थे। इसमें कृष्ण-कुंज के वृक्षों और पुष्पों का सुन्दर वर्णन है। पंच-पर्वत की नगरी का प्राकृतिक वर्णन आत्याकर्पक है—वाटिका के मुकुलित वृक्षों, समतल चौगानों, और सुदूर तक फैली हुई पर्वतावलियों की चमक-दमक पुखराज और पद्मराग आदि

मणियों की चमक को मात कर रही है। कामनिता इन पर्वतों मे अवस्थित अवन्ति नामक नगरी के एक व्यापारी का लड़का था। स्फटिक की रँगाई और बहुमूल्य रत्नों के उद्गम-स्थान को भी जानता था। बीस वर्ष की अवस्था में वह कौशाम्बी के राजा उदयन् के पास राजदूत बनाकर भेजा गया। यहींसे उसकी तीर्थयात्रा आरम्भ होती है और कहानी मे प्रेम और स्मृतियों का सम्मिश्रण होता है। रहस्यवाद और गूढ़ तत्त्वज्ञान को इसमें यथार्थवाद से मिला दिया गया है।

'मीना' एक उपन्यास है जिसका अंग्रेजी अनुवाद नीलसेन ने किया है। इसका कथानक ड्रेसडन से सम्बन्ध रखता है। इसमें मीना और उसके दुखान्त जीवन के साथ वागनर, चोपिन और बिथोवेन के गान और संगीत सम्मिलित है। मीना को इसमें अत्यन्त भावावेग के साथ चित्रित किया गया है। इसमें लेखकने स्थल-स्थल पर विख्यात् कवि मूर की कविताएं उद्धृत की हैं।

जेरलप को नोबेल-पुरस्कार मिलने पर जर्मनी मे खूब हर्ष मनाया गया, क्योंकि उनकी कला और साहित्य का ड्रेसडन (जर्मनी) में अच्छा प्रभाव था। उन्होंने जर्मन-जीवन और जर्मन-तत्त्वज्ञान को डेनिश भाषा में लिखने में काफ़ी सफलता प्राप्त करली थी। उनके डेनिश स्वदेशवासी इनकी रचनाओं का यद्यपि पार्याप्त आदर करते है पर उनकी दृष्टि में वह कोई डेनिश भाषा का मौलिक महान् लेखक नहीं हैं। उस देश के कुछ

लोग अग्रगण्य साहित्यिक जेलेरप की अपेक्षा जार्ज बाण्डेस जैसे लेखक, बर्गस्ट्राम जैसे नाटककार या ड्राचमैन जैसे कवि या जे० वी० जेन्सन जैसे को नोबेल-पुरस्कार दिलाना अधिक पसन्द करते, फिर भी जेलेरप की काव्यमयी अन्तर्दृष्टि और व्याख्या करने की अद्भुत क्षमता ऐसी है जिससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। जिस समय उनकी समस्त रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद हो जायगा तो उनका नाम और भी बढ़ जायगा।

कार्ल स्पिटलर

१६१६ ई० का नोबेल-पुरस्कार स्विट्जरलैण्ड के साहित्यिक कार्ल स्पिटलर को मिला था। अपने देश के अतिरिक्त फ्रांस और जर्मनी में इनका नाम प्रसिद्ध हो चुका था। १६१८ ई० का नोबेल पुरस्कार किसी को भी नहीं दिया गया था। यद्यपि नीत्शे जैसे विद्वान् ने भी स्पिटलर की प्रशंसा की थी; किन्तु फिर भी इन्हे नोबेल-पुरस्कार मिलने के पूर्व अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति नहीं प्राप्त हो सकी थी।

कार्ल स्पिटलर का जन्म १८४५ ई० में लीस्टल में हुआ था। इनके पिता डाकखाने की नौकरी करते थे और बाद में खजाने के सेक्रेटरी हो गये थे। बैसेल विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करते समय कार्ल स्पिटलर पर जर्मन् विद्वान् विलहेम

चैंकरनागेल और इटैलियन इतिहासकार जैकव वर्खार्ट का विशेष प्रभाव पडा। उन्हे संगीत से बड़ा प्रेम था और वह वीथोवेन का संगीत विशेष रूप से पसन्द करते थे। उन्होंने कला-प्रेम का विशेप परिचय दिया और वाद मे वह ज्यूरिच और हीडेलवर्ग विश्वविद्यालयों मे इतिहास और कानून पढ़ने गये। धर्मशास्त्र का अध्ययन करके धर्माचार्य वनने का विचार भी उन्होंने किया था, किन्तु पीछे उन्होंने अनुभव किया कि तत्त्वज्ञान और साहित्य की ओर उनका झुकाव अधिक है। उन्होंने खूव भ्रमण किया और उनके मनमे महाकवि वनने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। उण्होंने 'जॉन आफ अबीसीनियाँ' 'एटलाण्टिस' और 'थेसियस ऐण्ड हेराकिल्स' नामक पुस्तकें लिखने का निश्चय करके उनका कच्चा ढाँचा तैयार किया, किन्तु वाद मे वाल-चेष्टा समझकर इन्हे छोड़ दिया। आठ वर्प तक यह रूसमे रहे और वहाँ एक रूसी अफसर के वच्चे के शिक्षक के तौर पर काम करते रहे। वहाँ वह कुछ काव्य-रचना भी करते रहे और 'प्रोमेथियस एपीमेथियस' नामक खण्डकाव्य को पूरा कर लिया। पहले यह फेलिक्स टैंडम के कल्पित नाम से प्रकाशित हुआ और दस वर्ष वाद उनके वास्तविक हस्ताक्षर के साथ मुद्रित हुआ। उनकी यह रचना प्रकाशित हो जाने पर वहुत से आलोचकों ने उनकी रचना को नीत्शे का अनुकरण वतलाया, पर उन्होंने उसका विरोध किया और इसपर एक पुस्तक लिखकर सिद्ध किया

कि उन्होंने इस रचना के पूर्व नीत्शे का अध्ययन तक नहीं किया था।

स्विट्जरलैण्ड के बेरती और न्यूनस्टेट स्थान में वे कुछ दिनों तक शिक्षक का कार्म करते रहने के बाद बैसेल जाकर पत्रकार का कार्य करने लगे। १८८३ ई० में उन्होंने विवाह किया और उसी वर्ष उनकी 'एक्ट्रामण्डना' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमें उन्होंने विनोदात्मक काव्य मे सृष्टि-रचना का इतिहास बतलाया है। उनकी स्फुट कविताओं का एक संग्रह 'तितली' नाम से प्रकाशित हुआ जो प्रकृति-प्रेम और छन्द-प्रवाह की दृष्टि से बड़ी सुन्दर रचना कही जा सकती है। १८९७ ई० मे उन्हे कुछ पैतृक सम्पत्ति प्राप्त हुई। इसके बाद उन्होंने आजीविका के लिए लिखना तथा शिक्षक का काम करना छोड़ दिया। उसके पश्चात् वे लुसर्ने चले गये। वहाँ के [illegible]कृतिक दृश्यों ने उनकी काव्यमयी भावना को और भी [illegible]न्नत कर दिया। यहाँ उन्होंने 'हास्यात्मक सत्य' नामक एक [illegible]न्थ-माला लिखी जिसमें व्यंग और निश्छलता का सरस [illegible]मिश्रण है। इसके बाद 'गस्टेव' तथा बच्चों के लिये 'टू लिटिल [illegible]म्यानिस्ट्स' नामक पुस्तकें प्रकाशित हुई। यह दूसरी [illegible] यद्यपि बच्चों के लिये उपयोगी है लेकिन इससे बड़ी [illegible] भी लाभ उठा सकते है।

१९०[illegible]५ ई० में इनकी कुछ कविताएँ 'बलाडेन' के नाम से [illegible]शित हुई और इसके बाद इन्होंने 'इमागो' नामक कविता

लिखी जिसमें प्रोमेथियस और इपीमेथियस की वास्तविक घटना का विश्लेषण किया है। इसमे युवक कवि विक्टर का आत्मचरित है। लेखकने जर्मनी के स्त्रीत्त्व का भी इसमे सुन्दर चित्रण किया है।

स्पिटलर के परिपक्क विचारों का परिचय पाठकों को 'ओलम्पियन स्प्रिङ्ग' नामक पुस्तक से मिल सकता है। यह १६०० से १६०५ ई० तक पत्रों मे क्रमशः प्रकाशित हुई थी। इनके एक पद्य के अँग्रेजी अनुवादक का हिन्दी भावानुवाद यहाँ दिया जाता है :—

"तुम्हारे राजमुकुट की ख्याति, प्रतिदिन अधिकाधिक बढ रही हैं। तुम्हारी भावनाएँ उच्च है। श्रेष्ठ जनो की यही पहिचान है।

हे वीर तुमने जो साहस किया है वही वीरो का कर्तव्य है।

अपने कर्त्तव्य को पूरा करने के कारण आज तुम हजारो में एक हो।"

उनकी कविताओं मे पौराणिकता और व्यंग का बाहुल्य है। बहुत-से आलोचकोंने उनकी इस रचना (ओलम्पियन स्प्रिङ्ग) को नयी शताब्दी की दैवी रचना कह डाला है। कई आलोचकों ने इस रचना की तुलना शेली की 'प्रोमेथियस अनबाउण्ड' और कीट की 'इन्डीमिअन' तथा अन्य कहाकाव्यों से की है। अनाके को पौराणिक सृष्टिकर्ता मानकर लेखक ने उसकि

हाथों देवताओं को इरेबस में क़ैद करवा दिया है। पीछे वह देवताओं को आज्ञा देता है कि वह संसार की यात्रा करें। अनांके की लड़की मोइरा जगत् में आकर यहाँ के निवासियों को वसन्त और शान्ति प्रदान करती है, किन्तु जब वे उन देशों के निकट पहुँचते है तो उनका आनन्द कष्ट के रूप में परिणत हो जाता है।

स्पिटलर स्विट्जरलैण्ड में जर्मन कविता के प्रतिनिधि समझे जाते है। उनके गद्य में गेटे और शिलर की छाप है। महायुद्ध के समय उन्होंने जर्मन-स्विट्जरलैण्ड की तटस्थता पर जोर दिया, इसलिये बहुत से जर्मन इनके विरुद्ध हो गये। इधर फ्रास में इसके कारण इनकी ख्याति बढ़ चली और सत्तर वर्ष की अवस्था में फ्रेंच एकेडमी ने उनका विशेष आदर किया। उनकी कविताओं में सागीतिक विभिन्नता है जिनमे 'बेल सांग्स' और 'बटरफ्लाईज' अधिक प्रसिद्ध है। अपनी बाद की रचनाओं में उन्होंने आध्यात्मिकता का सामंजस्य और व्यापारिकता की निन्दा की है।

सन १९३१ ई० में स्पिटलर महोदय का लुसर्न में देहान्त हो गया। विडमैन ने इनकी 'प्रामेथियस' नामक रचना की आलोचना करते हुए लिखा है—"उनकी कविता में धर्म (पौराणिकता) और विचार (तत्त्वज्ञान) का जैसा सन्निवेश है वैसा और किसी की कविता में नहीं पाया जाता।" यही महोदय "बटरफ्लाईज" (तितलियाँ) के सम्बन्ध में भी अपनी आलो-

चना में लिखते है—"उन आश्चर्य-जनक नन्हे-नन्हें जन्तुओं का—जिनका रूपान्तर मनुष्य जाति की स्मृति पर रहस्यपूर्ण प्रभाव डालता है—भाग्य कवि ने अत्याकर्षणपूर्ण दुःखान्त में वर्णन किया है। इसी प्रकार अनेक आलोचकों ने स्पिटलर की रचनाओं मे शक्ति, अनोखापन और आदर्श पाया है। रोम्याँ रोलाँ ने भी इनकी रचनाओं की प्रशंसा की है। उन्हे नोवेल पुरस्कार मिलने के पूर्व ही रोम्याँ रोलाँ ने उनके सम्बन्ध मे लिखा था—"मेरे ख़याल में स्पिटलर इस समय यूरोप के सर्व-श्रेष्ठ कवि है, और एक यही ऐसे कवि है जो प्राचीन कीर्ति को पहुँच पाये है। .... आश्चर्य है कि दुनियाँ ऐसी अन्धी है कि ऐसी चमत्कृत-ज्योति के निकट से गुजर कर भी उसके प्रकाश से वञ्चित है और उनके गुणों से अपरिचित है।"

१९१९ ई० के नोवेल-पुरस्कार ने सिद्ध कर दिया कि स्पिटलर वास्तव मे यूरोप के सर्वश्रेष्ठ कवि और आदर के भाजन है।

नट हैमसन

१६२० ई० का नोबेल-पुरस्कार नार्वे के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक नट हैमसन को मिला। इन्होंने बीस से अधिक उपन्यास और नाटक ऐसे लिखे है जिनका अनुवाद विभिन्न भाषाओं में हो चुका है। संसार के वर्तमान साहित्य-क्षेत्र में नट हैमसन का एक खास स्थान है और वह जगद्विख्यात साहित्यिक माने जाते हैं। वह कुछ समय शिकागो (अमेरिका) में घोड़ा गाड़ी हाँकने का काम कर चुके थे, इसलिये इन्हे जब नोबेल-पुरस्कार मिला तो अनेक अमेरिकन पत्रों ने बड़े-बड़े शीर्षक देकर यह समाचार छापा, "घोड़ा गाड़ी हाँकनेवाले को नोबेल-पुरस्कार" आदि, आदि। उनकी रचनाओं में उनके निजी व्यक्तित्त्व का

विकास जितना सुन्दर हुआ है उतना कदाचित ही किसी अन्य लेखक का हुआ हो।

नट हैमसन के माता-पिता किसान थे। उनका जन्म पूर्वी नार्वे के लोय नामक स्थान में ४ अगस्त, १८६० ई० में हुआ था। इनके घराने मे कारीगरी का काम हुआ करता था। इनके दादा धात का काम करनेवाले थे जिन्हे हिन्दुस्तान में ठठेरा कहते हैं। किन्तु इस काम में उन्हे विशेष आमदनी नहीं थी। जब हैमसन चार ही वर्ष के थे, उनका परिवार यहाँ का पहाड़ी प्रदेश छोड़कर लोफोडेम द्वीप (नार्डलैण्ड) चला गया। यहाँ के वन्य दृश्य और मछुओं के कठोर कार्य को देखते-देखते बालक-हैमसनने युवावस्था प्राप्त की। कुछ समय तक वह अपने एक चाचा के साथ रहे जो राजकीय गिरजे के एक उपदेशक थे। उनके चाचा बड़े कठोर-हृदय थे। अपनी 'ए स्पूक' नामक कहानी मे हैमसन ने अपने चाचा की बेतों को अच्छी तरह याद किया है, जिनके भय से वह भागकर कब्रगाह और जंगल मे छिप जाया करते थे। अपनी शिक्षा-सम्बन्धी भूख मिटा सकने के पूर्व ही नवयुवक हैमसन को बोडों मे जूते बनाने का काम सीखना पड़ा। तो भी यह निराश नहीं हुए और पढने-लिखने की ओर बराबर ध्यान रखने लगे। अन्ततः किसी प्रकार १८ वर्ष की अवस्था मे १८७८ ई० मे वे अपनी पहली रचना प्रकाशित कराने मे सफल हुए। यह रचना गम्भीर कविता के रूप में थी और इसमे प्रकृति के विभिन्न

रूप-रंगों की प्रशंसा की गयी थी। इसका नाम 'मीटिंग अगेन' (पुनर्मिलन) था। इसके बाद 'जोरगर' नामक कहानी छपी। यह एक प्रकार की आत्मकथा थी और जार्नसन की शैली पर लिखी गयी थी।

बोडों मे रहकर जूते बनाने के काम से यह उकता गये। इसलिये उसे छोड़कर कुछ दिन के लिये कोयले ढोने का, फिर सड़क बनाने का, तत्पश्चात् अध्यापक का और तदनन्तर नगराध्यक्ष के सहायक का काम करते रहे। स्कैण्डेनेविया के अन्य युवकों की भाँति उन्होंने भी अमेरिका-प्रवास करने का निश्चय किया। उन्होंने अपने 'ए वन्डरर प्लेज़ आन म्यूटेड स्ट्रिंग्स' (एक भ्रमणकारी का नीरव तंत्री-वाद्य) में लिखा है कि अमेरिका में भी यह अनेक तरह का काम करते फिरे और घोड़ा गाडी हाँकने, मजदूरी करने, मोदी की दूकान पर मुहर्रिरी करने तथा व्याख्यान देने के काम करते रहे। वह उस देश में कुछ साहित्यिक कार्य करने की अभिलाषा रखते थे, किन्तु दुर्भाग्यवश उन्हे उसका अवसर नहीं मिल सका। जिन लोगों को उनका शिकागो का जीवन याद है उनका कहना है कि घोड़ा गाड़ी हाँकने के समय भी उनकी जेबों में कोई न कोई कविता की पुस्तक रहती थी। १८८५ ई० में वे क्रिश्चियना लौट आये; पर १८८६ ई० में पुनः अमेरिका लौट गये और 'करेंट इवेन्ट्स' नामक पत्र में सम्वाददाता का काम करने लगे। पर इस काम से उन्हें काफ़ी पैसा नहीं मिलता था, इसलिये काम

चलाने के लिये वे शारीरिक परिश्रम करके भी कुछ उपार्जित करने लगे। कुछ दिनों तक वह एक रूसी के साथ नाव पर नौकरी करते रहे और उसके साथ न्यूफाउण्डलेण्ड के तट पर भी गये। इसके पश्चात् एक वर्ष तक वे मिनियापोलिस मे क्रिस्टोफर जानसन नामक नार्वे-निवासी एक पादरी के सेक्रेटरी का काम करते रहे। इस समय इनकी अवस्था अट्ठाईस वर्ष की हो चुकी थी और ये गुजारे के लिये उत्तरी डाकोटा के खेतों पर भी काम करते थे। वह मिनियापोलिस में साहित्यिक विषय पर व्याख्यान देना चाहते थे, किन्तु उनकी अभिलाषा पूरी नहीं हुई और उन्हे कटु भावना के साथ अमेरिका छोडना पड़ा। इन्हीं दिनों उन्होंने 'आधुनिक अमेरिका का 'आध्यात्मिक जीवन' (The Spiritual Life of Modern America) नामक पुस्तक लिखी जो पीछे "अमेरिका की संस्कृति" (American Culture) के नाम से प्रकाशित हुई। "युद्धमय जीवन" (Struggling Life) नामक कहानी-संग्रह से उनके शिकागो के अनुभव का सार है। "ब्रशवुड" नामक कहानी-संग्रह मे जो १९०३ ई० मे प्रकाशित हुई थी, उन्होंने उत्तरी डाकोटा के खेतों पर काम करते समय जो अनुभव किये थे, उन्हे भी लिपिबद्ध किया है।

अमेरिका से लौटकर ये कोपेनहेगन के एक दैनिक पत्र मे लिखने लगे। इसके बाद कोपेनहेगन की ही एक पत्रिका में उन्होंने 'क्षुधा' (Hunger) नामक उपन्यास धारावाहिक

रूप से लिखना शुरू किया। १८८८ ई० इनका 'न्यू स्वायल' (नयी भूमि) भी प्रकाशित हुआ जो दो वर्ष बाद पुस्तकाकार छप गया। यद्यपि यह उनकी प्रारम्भिक रचनाए ही है, परन्तु इनमें पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करने के गुण है। कुमारी लार्सन ने 'न्यू स्वायल' के सम्बन्ध मे लिखा है—"आदि, अन्त और कथानक मे कुछ न होते हुए भी इसमें चरमसार (Climax) की भरमार है।" प्रोफेसर बीहर ने लिखा है कि हैमसन ने अपनी भूतकाल की उन स्मृतियों को याद किया है जिन्होंने उनके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला था।" मिस लार्सेज ने 'एडीटर लिंज' 'सनसेट' और और 'पैन' आदि की प्रशंसा की है। 'विक्टोरिया' को लोग अपेक्षाकृत प्रगतिशील रचनाओं मे मानते है। इसमें चक्कीवाले का लड़का जोहान्स नायक है जो प्रकृति से सदा सामंजस्य रखता है। यहाँतक कि प्रेम से निराश हो जाने पर भी वह दुखी नहीं होता। हैमसन के उपन्यासों में पद्य की झलक है। इनकी 'मनकेन वेण्ट' नामक नाटकीय कविता बड़ी ही आकर्षक है। इसमें सीधे-सादे आवारा आदमी का चित्रण है। इनके 'हंगर' नामक अंग्रेजी अनूदित उपन्यास की भूमिका पढ़कर एडविन जार्कमैन के ये शब्द याद आजाते हैं कि कलाकार और आवारा दोनों प्रारम्भ से ही हैमसन के रक्त में मिले मालूम पड़ते है। दूसरे प्रकार के आदर्शात्मक उपन्यास लिखने के पूर्व हैमसन ने 'साम्राज्य के द्वार पर' (At the Gate of the Kingdom)

नामक नाटक लिखा है जिसमें कैरेनो नामक दार्शनिक विद्यार्थी को नायक बनाया है।. उसकी स्त्री में उन्होंने वासना-वृत्ति अधिक दिखलायी है। इस नाटक मे लेखक ने जीवन के रूप और शासकवर्ग की करतूतों का आलोचनात्मक विश्लेषण कैरोनो द्वारा करवाया है। दस वर्ष बाद उन्होंने 'जीवन का खेल' (Life's Play) लिखा और उसके बाद तीसरा नाटक सूर्यास्त (Sunset)। ये तीनों नाटक शृङ्खलाबद्ध हैं। इसमे कैरोनो को पचास वर्ष की अवस्था में विज्ञान में सन्देह करनेवाले तथा स्वतन्त्रता एवं सत्य से प्रेम करनेवाले के रूप मे दिखलाया गया है। लेखक ने सच्चरित्रता के पेशेवर उपदेशकों पर व्यंग कसा है और कई स्थलों पर ऐन्द्रिक विषयों को खुली और स्पष्ट भाषा में लिखा है। इनके 'जीवन के चंगुल मे' (In the Grip of Life) नामक नाटक का अनुवाद ग्राहम और रासन ने १६२४ ई० मे किया था। इनके नाटकों मे स्त्री-चरित्र को भावुकतापूर्ण दिखलाया गया है और उनमे प्रणय-पहेली का प्राधान्य है। लगभग सभी स्त्री-पात्र एक ही ढंग की चित्रित की गयी है।

१६०६ ई० इनका 'समय की सन्तान' (Children of the Age) प्रकाशित हुआ और उसके दूसरे ही वर्ष सेगेल-फ़ास नगर और 'भूमिवृद्धि' (Growth of the Soil) मुद्रित हुए। वह अब भी समाज को उपेक्षा की दृष्टि से देखते रहे। वह प्रजातंत्रवाद के भी विरोधी थे और समाज मे एक

नये विधान का स्वप्न देखते थे। अनेक उपन्यासकारों की भाँति उन्होंने भी एक परिवार का चित्रण करके अपने सामाजिक विचार प्रकट किये है। विलाज तृतीय नामक एक अवकाशप्राप्त लेफ्टिनेंट को दिखाया गया है कि वह अपनी स्त्री से उच्च सामाजिक विधान के अनुसार सम्बन्ध रखता है और अपने पुत्र के साथ भी, जो संगीत-प्रिय है, ऐसा ही व्यवहार रखता है। उसके सामाजिक वर्णन और रहन-सहन के द्वारा लेखक ने अपने समाज-सम्बन्धी विचार विकसित किये है।

'भूमिवृद्धि' के पहले ही हैमसन ने 'सेगेलफ़ास टाउन' की का अच्छा ।चि, इन दोनों में उन्होंने अपनी आर्थिक दुरवस्था लोभ का अच्छा । किया है। इस कहानी में व्यंग और आर्थिक एक टेलीग्राफ़-आफ्चित्र खींचा गया है। इसमें बार्डसन् नामक दिखलाया गया है ।टर का चरित्र अत्यन्त साहसपूर्ण और दृढ़

अमेरिका के वि

है कि 'भूमिवृद्धि' हैमख्यात् समालोचक श्री वरसेस्टर ने लिखा रिका तथा अन्य देशोंन की सर्वश्रेष्ठ रचना है और यह अमे- इसके देशकाल तथा में बहुत अधिक पढ़ी गयी है। यद्यपि प्रतिपादित विषय सार्व पात्र एकस्थानीय है, फिर भी इसका लागू होता है। न भौम है और समस्त मनुष्य जाति पर किया है और हैमसन ने साहित्यिक कौशल क्रमशः प्राप्त इनके उपन्यासों मे जोरदार और तथ्यात्मक

चित्रण पाया जाता है। उन्होंने जीवन के दार्शनिक पहलू और समाज की अन्तर्शक्ति की ओर भी पर्याप्त रूप से ध्यान दिया है। अपने ही अध्यवसाय के बल पर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी। वह एक अद्भुत धुन के आदमी थे। उनमे हास्यरस के उत्पादन की शक्ति भी थी। इन्हीं सब गुणों के कारण उन्हे अच्छी सफलता मिल सकी। दूसरी ओर चूंकि उनका इन्द्रिय-परायणता और अश्लीलता की ओर विशेष झुकाव था, अतः वे सुरुचि और संस्कृत विचारों के विरोधी थे। तो भी अपने व्यक्तिगत विचारों मे वे मूल चारित्रिकता को मानते थे। हैमसन के सम्बन्धों में डा० वीहर ने एक जगह यह विचार प्रकट किया है कि उसके देशवासी तथा अन्य पिछड़ी हुई जातियों के लोग उनका आदेश कला-कौशल मे बढ़ी हुई जातियों की अपेक्षा अधिक मानेंगे।

हैमसन के 'आवारा' (Vagabond) नामक उपन्यास की आलोचना-प्रत्यालोचना विशेप रूप से हुई है और इसकी चर्चा सब से अधिक हुई है। इसमें नार्वे के समुद्र-तट के स्त्री-पुरुपों की टोलियों का दृश्य पाठकों के सम्मुख आ जाता है। उनके मछली मारने, सुखाने और नमक लगाकर बेचने का दृश्य तथा उनके खाने-पीने मजे उडाने एवं सारी आमदनी ख़र्च कर डालने का वर्णन है। साथ ही यह भी दिखाया गया है कि इस देश के निवासी किस प्रकार धनार्जन के लिए अमेरिका का प्रवास करते है और किस तरह लौटने पर

उनकी आँखें खुल जाती हैं। इस प्रकार की टोलियों के दो मुखिया इडीवार्ट और आँगस्ट का चरित्र-चित्रण हैमसन के उपर्युक्त उपन्यास में है। साथ ही जहाज डूबने और एन मेरिया नामक लड़की का आँगस्ट को बचाने की शक्ति रखते हुए भी न बचा सकने आदि का रोमाचकारी वर्णन है। 'आवारा' के सातवें परिच्छेद में तूफ़ान का वर्णन अत्यन्त ज़ोरदार और भाव्यात्मक शैली से किया गया है। नट हैमसन पुराने ढंग की साहित्यिक शैली का विरोध जोरदार भाषा में करते थे और मानव-भावनाओं को अच्छी तरह समझते थे।

अनातोल फ्रांस

१९२१ ई० का नोबेल-पुरस्कार अनातोल फ्रास को मिला। उनका जन्म १८४४ ई० मे पेरिस मे हुआ था। वास्तव में अनातोल फ्रास का जन्म पुस्तकों के ही घर मे हुआ था, क्योंकि उनके पिता फ्रासिस नोयल थिबाल्ट पेरिस के एक प्रसिद्ध पुस्तक-विक्रेता थे। उनके पितामह एक मोची थे और इन्होंने अपने लड़के को पढ़ना-लिखना सिखाया था। अनातोल फ्रास के पिता पहले सेना में नौकर थे। बाद में पुस्तक-विक्रेता का काम करने पर उन्होंने अच्छे-अच्छे लेखकों की पुस्तकें संग्रहीत कीं। वह राजनीतिक, साहित्यक और धार्मिक सभी तरह की पुस्तके बेचते थे। वे राजभक्त और कैथोलिक थे। 'पीर नाजियर' नामक पुस्तक में अनातोल फ्रास ने अपने पिता का

चित्रण अच्छी तरह किया है। "दि व्लूम आफ़ लाइफ" नामक पुस्तक में अनातोल फ्रांस ने अपने बचपन का स्मरण किया है। इस पुस्तक में उन्होंने अपने पिता को लक्ष्य करके लिखा है कि वह पुस्तक 'बेचने' के बदले 'पढ़ने' के लिये अधिक तत्पर रहते थे। बचपन में ही अपनी पुस्तक की दुकान में बैठने और उच्च कोटि के लेखकों से परिचित हो जाने के कारण अनातोल फ्रास को साहित्य पढ़ने की बड़ी उत्कण्ठा हो गयी होगी। अनातोल फ्रास की माँ एक भद्र घराने की लड़की थीं। वे अपने लड़के को अद्भुत कहानिया सुनाया करती थीं। अनातोल फ्रास को उनसे बड़ा प्रोत्साहन मिला। उन्हे स्कूल की पढाई और वहाँ का जीवन अच्छा नहीं लगता था। कालेज-जीवन में मनोरंजन के लिये साथी मिलने के कारण उनका मन लग गया था, पर फिर भी एकान्त जीवन उन्हे अधिक प्रिय था। वह प्रायः कालेज से अनुपस्थित रहा करते थे।

उनकी माँ का उनपर ऐसा मोह और विश्वास था कि प्रोफ़ेसर लोग जब उनके सम्बन्ध मे शिकायत करते थे कि वे पढ़ने में मन नहीं लगाते, तो भी वे अपने लड़के से अप्रसन्न नहीं होती थी। उनके पिता अवश्य प्रोफ़ेसर एम० डुवाई की इस शिकायत से क्षुब्ध होते थे कि लडका कला या विज्ञान में कुछ भी सफलता नहीं प्राप्त कर सकेगा। उनकी माँ उनसे कहा करती थीं—"बेटा, तुम्हारा मस्तिष्क अच्छा है, तुम लेखक बनो—इससे तुम इतनी उन्नति कर जाओगे कि लोगों की

ज़ुबान बन्द हो जायगी।" इस प्रकार इनके लेखक बनने में इनकी माँ सबसे प्रथम सहायक हुईं। दूसरा प्रोत्साहन उन्हे पेरिस नगर से प्राप्त हुआ, जिसे वे बहुत प्रेम करते थे और बचपन से ही उनकी स्मृति मे पेरिस का चित्र घूमा करता था। उसके बाग-बगीचे, उसके कुंज, उसकी विख्यात इमारतें, उसके उपाहारगृह (रेस्टोराँ) उसकी पुस्तकों की दुकानें और नोतर-देम आदि विख्यात् जगहे उन्हे बहुत प्रिय थीं। पेरिस के सभी श्रेणी के स्त्री-पुरुष, सड़कों पर काम करनेवाले मजदूर और बागीचों मे खेलनेवाले बच्चों आदि का दृश्य इनकी रचनाओं मे अत्यन्त आकर्षक ढंग से चित्रित है।

१८६८ ई० में जब अनातोल फ्रास कुछ भी विख्यात् नहीं हुए थे, और केवल २४ वर्ष के किताबी कीड़े और स्वप्नदर्शी युवकमात्र थे, उन्होंने अल्फ्रेड-डी-विग्नी नामक कवि की प्रशंसा मे एक लेख लिखा। उन दिनों रू-डी-क्राण्डी मे बहुत से युवक लेखक एकत्रित होकर कविताओं आदि की आलोचना किया करते थे। दो वर्ष बाद अर्थात् २६ वर्ष की अवस्था मे अनातोल ने सेना मे नौकरी कर ली और साहित्यिक जीवन को भूल जाने की चेष्टा करने लगे। इसके बाद उनका झुकाव राज-नीति की ओर हुआ और उन्होंने अपनी साहित्यिक प्रवृत्ति को राजनीति की ओर मोड दिया। वे राजनीतिक व्यंग, और पुस्तकों की भूमिकाएँ आदि लिखने लगे। 'लेमर' नामक एक प्रकाशक की पाण्डुलिपियाँ भी इन्होने सम्पादकीय दृष्टिकोण

से पढ़ीं और लारूज के शब्द-कोश के सम्पादन में भी सहायता दी।

फ्रास और प्रशिया के युद्ध के बाद लेमर ने एक छोटा काव्य-संग्रह प्रकाशित किया जिसके प्रकाशन के लिये अनातोल फ्रासने बडा साहस और अनुराग प्रदर्शित किया था—साथ ही उसके लिये अनातोल फ्रांस ने अपना समय भी पर्याप्त रूप से लगाया। इस संग्रह का नाम था—"पोयम्स आपरे"। किन्तु जन-साधारण को यह संग्रह कुछ भी आकर्षित नहीं कर सका। इसके तीन वर्ष पश्चात् इनकी 'कारिन्थ की दुलहिन' (दि ब्राइड आफ़ कारिन्थ) प्रकाशित हुई जिससे मालूम हो गया कि लेखक की मूर्तिपूजा और आरम्भिक खीष्टान्त्र धर्म की व्याख्या कैसी तीव्र है। कुछ दिनों तक ये सिनेट के पुस्तकालय में लिकोण्टी-डी-लिसिल के सहायक रहे थे। यहाँ इनकी कई उदीयमान् कवियों से घनिष्टता हो गयी। इन मित्रों मे मेण्डे, कैलिया और बोनियर्स खास थे। बोनियर्स के घर पर अभिनेताओं, लेखकों और गायकों का खासा जमघट रहता था। अनातोल फ्रास का यहाँ बड़े तपाक के साथ स्वागत होता था। १८८१ ई० मे इनका उपन्यास 'दि क्राइम आफ़ सिल्वेस्टर वोनार्ड' निकला जो ४० वर्ष से अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक क्षेत्र मे अद्वितीय मान पाता रहा है। केवल इसी एक पुस्तक के द्वारा अनातोल फ्रास संसार भरके पाठकों के सुपरिचित लेखक वन गये। इसका

कथानक बहुत सीधा-सादा है—इसमे घटना बाहुल्य नहीं है, पर यह है भावुकतापूर्ण। इसकी छाप हृदय पर स्थायी रूप से पड़ती है और इसके अन्दर सत्य, सौहार्द्र तथा आकर्षण है। दस वर्ष बाद अनोतोल फ्रास अपनी इस रचना पर आश्चर्य करते थे कि वह इतना अधिक प्रख्यात् कैसे हो गया।

इस पुस्तक के समालोचकों ने भविष्यवाणी की कि इसका लेखक भविष्य में असाधारण लेखक होगा। इसके चार वर्ष बाद उनकी 'माइफ्रेण्ड्स बुक' प्रकाशित हुई जिससे लेखक की भावुकता, मित्रता और वाल्यावस्था की स्मृतियों का अच्छा परिचय मिलता है। यह रचना 'दि क्राइम आफ सिल्वेस्टर बोनार्ड' से बिल्कुल भिन्न है, क्योंकि इसमे उनकी कविजनोचित उड़ान, बाल और युवावस्था की स्मृतियाँ और तरंगें भरी हुई हैं। बचपन की बहुत-सी बातें इस पुस्तक के आरम्भिक परिच्छेद मे आयी हैं—खिलौनों के लिये बच्चे की प्रबल उत्सुकता, व्यग्रता और हास्य का इसमे सुन्दर सम्मिश्रण है। इस पुस्तक के अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका मे लाफकाडिवो हीर्न ने लिखा है—"यदि यथार्थवाद का अर्थ सत्य है, तो हमें अनातोल फ्रास को एक सुन्दर यथार्थवादी मानना पड़ेगा।"

१८८६ ई० के पश्चात् अनातोल फ्रासने "काजरी" नामक साप्ताहिक पत्रिका में "ऑन लाइफ ऐण्ड लेटर्स टु दि पेरिस टेम्प्स" लिखा जिससे उनकी साहित्यिक धाक जम गयी और वे प्रबल आलोचक माने जाने लगे। मोपासाँ, डूमा, बालजक,

मेरी वास्कर्टसिव, फ्रासिस कॉपी, रेनन और जार्ज सैण्ड आदि विख्यात् लेखकों की रचनाओं की आलोचनाएँ उन दिनों बहुत प्रकाशित हुईं। 'क्राइम आफ सिल्वेस्टर वोनार्ड' प्रकाशित होने के नौ वर्ष बाद लेखक ने पुनः परिश्रमपूर्वक दूसरी पुस्तक लिखी। अनातोल फ्रास स्वयं कहा करते थे कि इसके पहले वे सर्वसाधारण को प्रसन्न करने के लिये पुस्तक लिखा करते दे। 'माई फ्रैण्ड्स बुक्र' के पश्चात् इनकी थायस (Thias)* अधिक विख्यात् रचना सिद्ध हुई। फिर तो 'दि रेड लिली', 'ऐट दी साइन आफ़ दि रीन पेडाक'† 'दि आमेथिस्ट रिंग'‡ 'दि गाड्स आर एथर्स्ट' 'दि विकरवर्क वोमन, 'पेंगुइन आइलेण्ड' 'दि रिवोल्ट आफ़ दि ऐंजिल्स' 'मैन हू मैरिड डम्ब वाइफ़'§ रचनाओं आदि का ताँता बँध गया और संक्षिप्त कहानियों में 'क्रैंकबाइल' 'दि ह्वाइठ स्टोन' 'दि सेविन वाइव्स आफ ब्लूबर्ड' और 'टेल्स फ्राम दि मदर आफ़ पर्ल कास्केट' अधिक प्रशंसा के साथ पढ़ी गयीं।

अनातोल फ्रास की ऐतिहासिक योग्यता का ज्ञान प्राप्त करने के लिये उनकी लिखी जान 'जॉन आफ आर्क' पढ़नी चाहिये।

---

* इस पुस्तक का अनुवाद हिन्दी में श्री प्रेमचन्दजी कर चुके है।

† कुछ समालोचक इसे लेखक की सर्वोत्कृष्ठ रचना मानते है।

‡ इसका अनुवाद भी हिन्दी में हो चुका है।

§ इसका अनुवाद इस पुस्तक के लेखक ने 'गूंगी दुलहिन' के नाम से किया है।

जबतक अनानोल फ्रास को नोवेल-पुरस्कार नहीं मिला, तवतक उनकी रचनाएँ पुस्नकालयों तक मे नहीं रक्खी जाती थीं, क्योंकि इनकी रचनाओं मे साम्यवाद की एक ऐसी झलक थी जिसका विरोध उन दिनों खूब हो रहा था, किन्तु पुरस्कार मिलने के वाद लोगों ने चाव से उनकी पुस्तके पढ़ीं। उन्होंने युद्ध-प्रवृति की घोर निन्दा की और जब वे नोवेल-पुरस्कार प्राप्त करने के लिये स्टॉकहोम गये तो वर्सेई की सन्धि के सम्बन्ध में उन्होने कहा कि "सन्धि के बाद युद्ध हुआ करता है और सन्धि शान्ति की नहीं, भावी अशान्ति की द्योतक है। यदि यूरोप अपनी परामर्श सभाओं मे बुद्धिवाद को स्थान न देगा, तो इसका विनाश निश्चित है।" फ्रास के वहुत-से साहित्यिक तथा अन्य लोग उन्हे दार्शनिक मानते है, किन्तु वास्तव मे अनातोल फ्रास में एक महान और अद्भुत पर्यवेक्षण शक्ति थी और उन्होंने जीवन का अध्ययन वहुत ध्यान से किया था।

वृद्धावस्था मे अनातोल फ्रास मे पुनः बचपन-सा आ गया था। वे अपने पुराने सहपाठियों से मिलते-जुलते और स्कूल के दिनों की याद किया करते थे।

इशेगरे और वेनाविन्ते

१९०४ ई० का नोबेल-पुरस्कार स्पेन के प्रसिद्ध नाटककार जोज इशेगरे को प्रदान किया गया था। इसके पहले स्पेनी साहित्य अंग्रेज़ी भाषा के पाठकों के सम्मुख इतने परिमाण मे नहीं आया था जितना इशेगरे को पुरस्कार मिलने के बाद आया। उस समय तक स्पेनी भाषा यूरोप की अन्य भाषाओं के साथ उच्च साहित्यिक भाषा मे परिगणित नहीं होती थी। गैलडोज, वैलेरा, वैलडीज और इबानेज के उपन्यासोंने अंग्रेजी पाठकों के मन पर यह छाप लगादी कि इनकी रचनाओं मे यथार्थवाद का पूरा ज़ोर और काव्यात्मक सौन्दर्य है। नाटकों मे गैलडोज़ की तीन, मर्टिनेज सीरा की नौ, इशेगरे की एक दर्जन और वेनाविन्ते की अनेक रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। इनकी

रचनाओं के अंग्रेजी अनुवाद क्रमशः जान गैरेट अण्डरहिल, जेम्स ग्राहम, चार्ल्स निर्टलिगर, हैना लिच, रूथ लैसिग आदि प्रसिद्ध अनुवादकोंने किये है।

जोज इशेगरे को १९०४ ई० मे फ्रेडरिक मिस्ट्राल के साथ नोबेल-पुरस्कार प्राप्त हुआ था। उनका जन्म १८३३ ई० मे स्पेन मे हुआ था। इशेगरे ने आरम्भिक शिक्षा मे अङ्कगणित पढने में विशेप रुचि दिखलायी थी। आगे चलकर भू-विज्ञान और दर्शन की ओर भी विशेष मनो योग दिया। प्रजातंत्र राज्य मे उन्होंने कृषि, शिल्प और व्यापार मंत्री का पद भी ग्रहण किया और शिक्षा समिति के प्रधान और मंत्रीमण्डल के सदस्य भी बने। उन्होंने नेशनल टेकनिकल स्कूल मे शिक्षक का काम भी किया और वाद मे मैड्रिड विश्व-विद्यालय से सम्बन्ध स्थापित कर लिया।

आरम्भ मे इस गणित-विशेपज्ञ और राजनीतिज्ञ के लिए नाटक लिखना एक शौक की चीज ही समझी गयी। 'वाइफ आफ़ दि एवेंजर' 'ऐट दि हिल्ट आफ दि सोर्ड' और 'ग्लैण्डि-येटर आफ रैवेना' का प्रकाशन सन् १८७४ और १८७६ ई० के बीच मे हुआ। यद्यपि ये नाटक उन दिनों स्पेन मे विख्यात् हो चुके थे, किन्तु इनके अंग्रेजी अनुवाद प्रसिद्ध नहीं हो सके। १८७७ ई० मे उन्होंने एक ऐसा नाटक लिखा जिसकी चर्चा बहुत अधिक हुई। इसका अनुवाद रूथ लैसिंग ने 'मैडमैन आर सेण्ट' (पागल या साधु) के नाम से किया। इसी पुस्तक का

दूसरा अनुवाद हैना लिच ने 'फाली आर सेण्टलीनेस' (मूर्खता या साधुता) नाम से किया। आगे चलकर इस पुस्तक का एक और तीसरा अनुवाद भी मेरी सरेनो ने 'लाइब्रेरी आफ दि वर्ल्ड्स बेस्ट लिटरेचर' (संसार के सर्वोत्कृष्ट साहित्य का पुस्तकालय) की पुस्तकमाला मे स्वयं छपाकर प्रकाशित कराया। इस नाटक में भावावेश की प्रधानता है और आदर्श एवं अद्भुतता का भी सन्निवेश है। अन्तिम दोनों गुण इस लेखक की विशेषता है। पुस्तक में इन दोनों ही विषयों का सूक्ष्म विश्लेषण है। मेड्रिड का एक धनिक व्यक्ति जिसका नाम डान लारेंजों है, यह मालूम करता है कि उसे अपने माता-पिता की वास्तविकता के सम्बन्ध में धोखा दिया गया है,—वह अमीर घराने की सुसम्पन्ना स्त्री का पुत्र नहीं है। उसने तथा संसार ने उसके सम्बन्ध में भूल की है। सत्य यह है कि वह दाई जुआना का पुत्र है जो उसे यह सच्ची कहानी सुनाकर मर जाती है। लारेंजों की लड़की को मॅगनी डचेज आफ़ आलमाण्टी के पुत्र से हो चुकी होती है, किन्तु लारेंजों अब अपने वंश की वास्तविकता सब पर प्रकट कर देना चाहता है। इसपर एक मानसिक रोगों का विशेषज्ञ औषधि-विशेषज्ञ के साथ उसकी परीक्षा करने के लिये आता है। इसी समय लारेंजो एक न्यायाधीश को बुलाकर अपने नाम तथा सम्पत्ति का परित्याग करने के लिये स्वत्त्वाधिकार-पत्र लिखवाता है। उसका अन्तिम स्वगत-वाक्य इस प्रकार है—"यह क्या!

किसी आदमी को केवल इसलिये पागल घोषित किया जाता है कि वह अपने कर्त्तव्य-पालन का निश्चय कर चुका है ! यह हो नहीं सकता। मनुष्यता न तो इतनी अन्धी है, न भ्रष्ट।"

इचेगरे के ये आरम्भिक नाटक, जिनको उनके स्वदेश-वासियों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है, और उन्हे अपने भूतकाल के बड़े-से-बड़े साहित्यिक की कोटि में रक्खा है, विशेष साहित्यिक महत्त्व नहीं रखते। उनकी अन्य दो रचनाएँ ऐसी हैं जिन्हें अपेक्षाकृत अधिक ऊँची कह सकते हैं। इनके नाम हैं—'दि ग्रेट गैलिवटो' और 'दि सन आफ़ डानजुआन'। इन दोनों रचनाओं के समय में ग्यारह वर्ष का अन्तर था—पहली १८८१ ई० मे लिखी गयी थी और दूसरा १८९२ ई० में। इसके बीच में लेखक ने कुछ ऐतिहासिक नाटक भी लिखे जिनमें 'हैरोल्ड दि नार्मन' और 'लिसेण्डर दि बैंडिट' अधिक उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ दुखान्त और सुखान्त नाटक भी लिखे हैं। साधारणतः उन्होने अद्भुततापूर्ण नाटको को पुनर्जीवित करने की चेष्टा की है और उनमे यह दिखलाया है कि वासना और कर्त्तव्य में कैसा कठोर संघर्ष होता है। उनके चरित्र-चित्रण की अपेक्षा उनका हेतु-प्रदर्शन अधिक सफल हुआ है। उनके पात्रगण प्रतिष्ठा और सत्य के लिये लड़ते दिखाये गये हैं। उनकी रचनाओं में पात्रों द्वारा स्वगत विचार बहुत प्रकट किये गये हैं।

जिस समय 'दि सन आफ़ डनजुआन' और 'मरिआना' का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित हुआ, तो अंग्रेज़ी के पाठक

'दि ग्रेट गैलिवोटो' के अनुवाद की अपेक्षा उसकी ओर अधि
आकृष्ट हुए। १६०४ ई० में जब उन्हे नोबेल-पुरस्कार मिल
तो उन्होंने प्रोत्साहित होकर और भी कई नाटक लिखे
जिस समय उन्हे पुरस्कार मिला, स्पेन सम्राट् ने मेड्रिड
सभा करके उन्हे अपने हाथ से नोबेल-पुरस्कार प्रदान किय
और गालडोज, वैलेरा, तथा मेण्डेनेज़ पालायो के भाषण हुए
ये तीनों साहित्यिक किसी समय इशेगरे की रचनाओं के तीव्र
तम आलोचक थे। इस अवसर पर पालायो ने कहा था कि
तीस वर्ष तक इशेगरे ने विभिन्न क्षेत्रों में अत्यन्त सफलता
पूर्वक कर्तव्य-सम्पादन दिया है, जो असाधारण प्रतिभावा
पुरुष के लिये ही सम्भव है। उनकी यह प्रतिभा साहित्यि
क्षेत्र में भी इसी प्रकार चमकी है। फ्रास में भी उनका बड़
आदर हुआ और उन्हे दूसरा विक्टर ह्यूगो कहा गया।

इशेगरे ने अनेक छोटे नाटक—प्रहसन—भी लिखे
हैं जिनमें 'आलवेज़ रेडिकुलस' में एक लड़की की व्यंग
श्लेष और उत्सुकतापूर्ण बातें बड़े सौन्दर्य के साथ व्यक्त की
गयी हैं। षोड़शी कन्या सस्पीरो, कोलेटो नामक पचास वर्ष के
बूढ़े भिक्षुक से बात करती है :—

कोलेटा—"तुम्हें भीख मांगना नहीं आता।"

सस्पीरो—"मुझे तो भीख मांगना आता है, पर कठि-
नाई यह है कि लोगों को देना नहीं आता। मैं कहती हूँ—

जानते हो वह कैसी बीमार थी—दो साल पहले उसका देहान्त हो गया। इसपर मुझे कुछ नहीं मिलता। फिर कहती हू—'खुदा के लिये एक पैसा दो। मेरी माँ अस्पताल मे है—मरियम के नाम पर दो। मेरे दो छोटे भाई है।' फिर भी कोई कुछ नहीं देता।"

कोलेटा—"नहीं देता? अच्छा आज रात को कितने भाई हैं, कहकर भीख माँगोगी?"

सस्पीरो—"ओह। महाशय कोलेटा। 'मेरे दो भाई हैं' कहने पर तो किसी ने कुछ दिया नहीं। कल रात को मैंने 'चार भाई है,' कहा था, तो छः पैसे मिले। आज रात को 'पाँच भाई है,' कहकर देखूँगी कि लोग क्या देते हैं। कुछ न मिला तो माँ थप्पड मारेगी।"

कोलेटा—"और वास्तव मे तुम्हारे है कितने भाई।"

सस्पीरो—"वास्तव मे दो थे, पर मेरी असली माँ की तरह वह भी मर गये। मेरी सौतेली माँ उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार करती थी जैसा मेरे साथ। दो-तीन डालर हो गये तो मैं जाटिवा भाग जाऊगी और वहाँ अपनी चाची के साथ रहूँगी।"

७२ वर्ष की अवस्था मे इशेगरे को नोवेल-पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके पूर्व भी उन्हे अपने देश में पर्याप्त ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। उनकी गम्भीरता और अन्तर्दृष्टि को लोग टालसटाय के टक्कर की मानते है। टालसटाय की तरह इशेगरे ने भी आध्यात्मिक स्वतन्त्रता के लिये कष्ट-सहन का महत्त्व दिखलाया है। इस प्रसंग का वर्णन इशेगरे के 'पागल या साधु'

में सुन्दर रूप में हुआ है। इशेगरे ने समाज को ऐसा सन्देश दिया है जिसमें आदर्शवाद की सर्वत्र झलक है।

अन्त मे १४ सितम्बर १९१६ ई० को इशेगरे इस संसार से उठ गये।

जैसिन्टो वेनाविन्ते

१९२२ ई० का नोवेल-पुरस्कार जैसिण्टो वेनाविन्ते को मिला था। यह स्पेन के नवीन पीढी के नाटककार माने जाते हैं क्योंकि इनकी रचनाओं मे नूतनता का समावेश है।

वेनाविन्ते का जन्म १८६६ ई० में स्पेन की राजधानी मैड्रिड में हुआ था। उनके पिता एक प्रसिद्ध चिकित्सक थे। वेनाविन्ते ने कानून को अपना पेशा बनाना चाहा था और उसका कुछ अध्ययन भी किया था। किन्तु बाद में वे लेखन और रंग-मंच की ओर झुके। उनको शुरू से ही नाटक और सरकस के प्रवन्ध का कुछ ज्ञान था और वे अभिनय करनेवालों तथा दर्शकों की आवश्यकताओं को समझते थे। उनकी पहली रचना १८९३ ई० मे कविता के रूप मे प्रकाशित हुई। और उसके दूसरे ही साल "तुम्हारे भाई का घर"* नामक नाटक मुद्रित हुआ। किन्तु इस प्रकार की रचनाओं से जनता का ध्यान इनकी ओर आकर्पित नहीं हुआ। १८९६ ई० में 'समाज मे'† नामक नाटक निकला और उसके दो वर्प बाद

---

*Thy Brother's House †In Society

'जंगली जानवरों का भोज'* नामक नाटक प्रकाशित होनेपर सर्वसाधारण का ध्यान इनकी ओर गया। उन्हीं दिनों स्पेन और अमेरिका के युद्ध के बाद अपने देश में समाज-सुधार का आन्दोलन उठाकर ये उसके नेता बन बैठे।

वेनाविन्ते स्पेन-फ्रास और रूस के बहुत-से समकालीन लेखकों की अपेक्षा कम मौलिक हैं। वे परम्परा से घृणा नहीं करते, किन्तु उसके साथ वहीं तक चलते हैं जहाँ तक उसका जीवन और कला से सम्बन्ध है। उनकी रचनाओं में अमीरों के प्रति व्यंग और किसानों के प्रति सहानुभूति के भाव भरे हैं। वह अपने पाठकों और दर्शकों को इस बात के लिए बाध्य कर देते हैं कि वे विचार करें। इनकी 'सत्य'† 'पतझड के गुलाब'‡ 'एक घण्टे का जादू'§ और 'एर्मिन का भूखंड'|| आदि रचनाओं मे भावावेश पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

१९१३ ई० में वेनाविन्ते स्पेनिश एकैडमी के सदस्य चुने गये। शिक्षा सम्बन्धी राजनीतिक और साहित्यिक मामलों में उनकी रचनाये खूब उद्धृत की जाती हैं। उनका स्वतन्त्रता सम्बन्धी आदर्श वर्त्तमान स्पेन और समस्त यूरोप के आदर्शों से ऊंचा है। उन्होंने खूब देशाटन किया है और जहाँ-जहाँ

---

*The Banquet of Wild Beasts
†The Truth
‡Automnal Roses
§The Magic of An Hour
||The Field of Ermine

गये है वहाँ-वहाँ अपने नाटकों को अभिनीत होते देखा है। विशेष करके रूस, इंगलैंड, दक्षिण अमेरिका और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की यात्रा उन्होंने सफलतापूर्वक की है। 'आसक्ति पुष्प'* उनका एक ऐसा दुखान्त नाटक है जिसमें किसानों के जीवन का भावपूर्ण चित्रण किया गया है। अमेरिका में उनकी इस विख्यात् कृति का फ़िल्म भी बन गया है, जिसमें नैन्सी ओनील नामक अभिनेत्री ने काम किया है। 'ब्याजी तमस्सुक'† नामक उनका नाटक न्यूयार्क के नाटकघरों मे अच्छी ख्याति प्राप्त कर चुका है। उनके नाटकों में प्राय: गम्भीर विषयों की चर्चा नहीं की गई है। इनके 'एलहोमोब्रेसिटो' नामक नाटक में नेव नामक नायिका का चित्रण बहुत सुन्दर किया गया है और बहुत-से लोग उसकी तुलना इब्सन के 'पुतलियों का घर' (डाल्स हाउस) नामक नाटक से करते हैं। वेनाविन्ते का विश्वास था कि नाटक का गूढ़ार्थ पाठकों और दर्शकों के भावावेश के साथ प्रकट होना चाहिए। इनके 'गवर्नर की स्त्री'‡ 'पुस्तकों का कीड़ा राजकुमार'§ 'शनिवार की रात्रि'§ 'दूसरी प्रतिष्ठा'¶ में आकर्षण और प्रेम का वर्णन विशद रूपसे किया गया है।

---

* The Passion Flower

† The Interest Bond

‡ The Governor's Wife

§ The Prince Who Learned Everything Out of Books

§ Saturday Night ¶ The Other Honour

वेनावेन्ते के पात्र प्रायः क्षणस्थायी होते हैं, और वे उनके उद्देश्य की पूर्ति करने के वाद सहसा लुप्त हो जाते हैं। 'ब्याजी तमस्सुक' नामक पुस्तक मे भी यही बात है। और 'एक घंटे का जादू' मे भी मरवीरियस और इन्काएवुल नामक ऐसे ही पात्र रक्खे गये हैं जो जीवन, प्रेम पुस्तकों और पुष्प तथा कविता एवं संगीत के सम्बन्ध में लेखक के विचार प्रकट करके लुप्त हो जाते है। इस छोटे से नाटक में लेखक ने अपने उस आदर्शवाद को बुन दिया है जो दुर्बल मनुष्यता और परकीय निजस्व के अंतर को प्रकट करता है। इस आदर्श का सर्वापेक्षा गह्वर सम्बन्ध प्रेम से है। उन्होंने जो सैकडों नाटक लिखे है उनमे विभिन्न स्थलों और अंतर्दृष्टि का वर्णन किया गया है। इन्हीं स्फुट विचारों के कारण वे नोवेल-पुरस्कार प्राप्त करने के अधिकारी हुए है। उनके नाटकों में विभिन्न-विषय-प्रसंग पाये जाते है। उनके बाद के लिखे हुए नाटकों में 'जूते का जोडा या संदिग्ध गुण'* नामक नाटक बडा ही मनोविज्ञान-पूर्ण है। जान गैरेट अण्डरहिल ने कहा है कि वेना-विन्ते उच्चतम कोटि के आदर्शवादी है और उनके तत्त्वज्ञान का परिचय 'राजकुमारियों का स्कूल'† और 'एर्मिन क्षेत्र'‡ नामक नाटकों से मिल सकता है।

---

* A Pair of Shoes or Doubtful Virtue

† The School of Princess

‡ The Field of Ermine

ईट्स

(आयरिश कवि)

१९२३ ई० का नोबेल-पुरस्कार आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध कवि और नाटककार विलिम बटलर ईट्स को प्राप्त हुआ था। इनका जन्म १५ जून, १८६५ ई० को सैण्डी माउण्ट (डबलिन) में हुआ था। इनके पिता जॉन बटलर ईट्स एक विख्यात् चित्रकार थे। इनके पितामह धर्म-प्रचार का काम करते थे और इनके नाना स्लीगो के एक प्रसिद्ध व्यापारी और जहाज के मालिक थे। बालक ईट्स ने अपना समय इन दोनों (पितामह और नाना) के साथ समुद्र तटपर स्थित उपर्युक्त नगर में बहुत दिनों तक व्यतीत किया था। जब बालक ईट्स की अवस्था स्कूल जाने योग्य हो गयी तो वह

अपने माता-पिता के साथ लन्दन मे रहने और गोडोल्फ़िन स्कूल (हैमरस्मिथ) में पढने लगे। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में वे डबलिन वापस आये और इरेसमस स्मिथ स्कूल में पढने लगे। इन दिनों वे अपने स्लीगो के सम्बन्धियों के यहाँ रहने लगे थे। इनकी 'दि सेल्टिक टिव्लाइट' और 'जॉन शेरमैन' नामक रचनाओं में उनके बाल्यकाल का परिचय अच्छी तरह मिलता है। 'जॉन शेरमैन' के चरित-नायक की तरह ईट्स भी लन्दन के जीवन से तंग आगये थे और वे स्लीगो के वायुमण्डल में श्वास लेने के लिये विकल हो रहे थे। वहाँ की परिचित गलियाँ और कुटीरों की पंक्तियाँ उनके मानस-चक्षु के सामने घूमा करती थीं। वहाँ की दन्तकथाएँ भी उनके लिये पर्याप्त आकर्षण रखती थीं। अपनी कविताओं में ईट्स ने पथरीली चट्टानों से टक्कर लेनेवाली इन्सफ्री द्वीप की लहरों और सूर्यास्त के समय अद्भुत शोभा देनेवाली सुदूरवर्ती पहाडियों का स्मरण बड़े ही आकर्षक ढंग से किया है।

ईट्स के पिता को यह आशा थी कि उनका लडका चित्रकारी सीखकर उन्हीं का कार्य सँभालेगा। ईट्स ने कुछ दिनों तक चित्रकारी सीखी भी, किन्तु उसमे उनका मन नहीं लगा। उन्हे पुस्तकालयों में गेलिक* कहानियों और कविताओं के अनुवाद पढ़ने का बडा शौक था। उन्हे ग्रामीणों के पास

* आयलैंयड के निवासी गेलिक और सेल्टिक सस्कृतियों के हैं।

वह भी स्वर्ग पहुँच जाय। उसे 'टीग' नामक एक आदमी मिलता है, जो उसकी तरह स्कूल में शिक्षाप्राप्त नहीं है, वरन् जंगलों में शिक्षित हुआ है। वहाँ 'वाइज मैन' को विश्वास होता है कि उसने मनोवाञ्छित व्यक्ति प्राप्त कर लिया है। लेखक ने इस पुस्तक के संस्करणों में अद्भुत गैलिक छन्दों का समावेश किया है।

ईट्स की कविता स्वप्नदर्शी कवियों की सी नहीं है। उन्होंने एक स्थल पर कहा है कि यदि कवियों का स्वप्न सच निकले तो काव्य-रचना की आवश्यकता ही न हो। उनके 'दि सेल्टिक ट्विलाइट' और 'दि सैक्रेट रोज' में इनके कल्पना का सौन्दर्य पूर्णतः विकसित हुआ है। 'वाइंडिग आफ़ दि हेयर' उनकी इस प्रकार की कविताओं में सर्वोत्कृष्ट समझी जाती है। 'दि विंग एमंग दि रीड्स' 'इन दि स्क्रीन वुड्स' 'दि वाइल्ड स्वान्स ऐट कूल' और 'रिस्पासिबिलिटीज' में प्रेम और सेवा के स्वप्न देखे गये हैं। इनका पृथक् संग्रह मैकमिलन कम्पनी के 'वर्क्स' में प्राप्त हो सकता है। कीट्स और विलियम ब्लैक की तरह ईट्स पर भी आलोचकोंने यह आक्षेप किये हैं कि वे मनुष्य के सम्पर्क में कम रहते थे। उन्होंने मानव जाति की भावनओं की अपेक्षा वायु के झकोरों, समुद्र की लहरों और वृक्षों का वर्णन अधिक किया है। उन्होंने 'अपनी प्रेयसी के प्रति कवि के उद्गार'* में आसक्ति-प्रदर्शन का वर्णन अत्यन्त उग्र रूप में

* A Poet to His Beloved

किया है। कुछ आलोचक इनकी रचनाओं की तुलना शैली की कविताओं से करते है।

'आयर्लैण्ड में आदर्श'* नामक पुस्तक में उसकी सम्पादिका श्रीमती ग्रेगरीने लिखा है कि अंग्रेजी के 'Æ' मिले हुए अक्षर का पुनरुद्धार करनेवालों में ईट्स मुख्य थे। उन्हे पक्का आदर्शवादी कहा जा सकता है। उन्हे अनेक आलोचकों ने सत्य-शोधक उच्चाभिलाषी और आदर्शवादी कहा है। जार्नसन, मिस्ट्राल, रवीन्द्रनाथ, मैटरलिंक, सेल्मा लेजरलाफ़, हीडनस्टाम और रोम्या रोला आदि को इसी आदर्श के कारण पुरस्कार मिले थे। संसार के परिष्कृत रुचि के पाठकों ने ईट्स को भी इसी श्रेणी में रक्खा है। श्रीमती ग्रेगरी ने उनकी कविताओं की सुन्दर समीक्षा करके उन्हे और भी चमका दिया है। 'आयर्लैंड में आदर्श' नामक पुस्तक मे ईट्स ने अपने देश के साहित्यिक आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास भी लिखा है। उसमें उन्होंने बतलाया है कि आयर्लैण्ड के ग्राम्य गीतों का उद्धार होने पर उससे उसके आध्यात्मिक और सामाजिक विकास मे सहायता मिलेगी। यह पुस्तक सन् १८६६ ई० मे लिखी गई थी। इतने दिनों के बाद ईट्स महोदय का उपर्युक्त कथन क्रियात्मक रूप में सत्य प्रमाणित हुआ। आयर्लैण्ड मे ईट्स ही सर्वप्रथम विद्वान थे जिन्होंने ग्राम्य गीतों के सौन्दर्य की परख की, और उसमें वर्णित प्रेम और वीरता की कद्र

* Ideals in Ireland

की। आयर्लैण्ड के ग्राम-गीतों में युद्ध-प्रेम तथा साधुओं की कथाओं का सुन्दर वर्णन है। ईट्स के गानों और नाटकों में जो सौन्दर्य और रहस्य-पूर्ण शृंखला पाई जाती है तथा उसमें हास्य और आनन्द के सम्मिश्रण का जो विशिष्ट गुण पाया जाता है, वह आयर्लैण्ड के किसी भी पूर्व लेखक मे नहीं था। उनके 'हवा का मेजबान'* 'चुराया हुआ शिशु'† और 'दी फ़िडलर आफ डूनी' नामक रचनाओं से उक्त बात का पता चल सकता है।

ईट्स महोदय ने अपने नाटकों के प्रत्येक संस्करण में श्रीमती ग्रेगरी की सहायता के लिए उनका आभार माना है और श्रीमती ग्रेगरी की लिखी हुई 'परमात्मा और लड़ाकू आदमी'‡ की बड़ी प्रशंसा की है। ईट्स ने यह बात स्वीकार की है कि ग्राम-गीतों के लिखने में वे श्रीमती ग्रेगरी की रचनाओं से बहुत कुछ अनुप्राणित हुए है।

---

* The Host of the Air

† The Stolen Child

‡ Tde Gods and Fighting Men

सीनकीविज़ और रेमॉण्ट

[पोलैण्ड के प्रसिद्ध कलाकार]

सन् १९०५ ई० का नोबेल-पुरस्कार हेनरीक सीनकीविज को मिला था। इशैगरे और वेनाविन्ते की तरह हेनरीक सीनकीविज और लेडिसला रेमॉण्ट भी एक ही देश के निवासी थे। पोलैंड जैसे छोटे देश को पुरस्कारदाताओं ने काफी महत्त्व दिया, क्योंकि यूरोप के बड़े राष्ट्रों मे वह अज्ञात-सा है। यद्यपि इस देश की उपेक्षा कला की दृष्टि से बहुत दिनों से की जा रही थी, किंतु इसने कला और साहित्य के भण्डार भरने मे कसर नहीं रक्खी। कवि सीनकीविज और स्लोंवाकी के सम्बन्ध मे लीजूट ने बहुत-कुछ लिखा है। इसी प्रकार रॉय डिवेस्यू ने 'पौलैंड का पुनर्जन्म'* नामक पुस्तक में उस

* Poland Reborn

देश की शिक्षा और साहित्य-सम्बन्धी उन्नति की चर्चा करते हुए कहा है कि पोलैंड का नाम हेनरीक सीनकीविज ने पश्चिमी यूरोप में अपनी साहित्यिक योग्यता से विख्यात् कर दिया है।

सीनकीविज को नोबेल-पुरस्कार मिलने पर यूरोप के समालोचकों को बड़ा आश्चर्य हुआ और रूसी साहित्यिकों पर भी वज्रपात-सा हुआ था; पर पीछे जब सब ने इनकी रचनाएँ पढ़ीं तो शान्त हो गये।

हेनरीक सीनकीविज़ का जन्म लिथुआनियाँ प्रदेश के वोला ऑकरेजेंस्का नामक स्थान मे १८४६ ई० में हुआ था। उनका जन्म एक कुलीन घराने में हुआ था और उन्होने वारसा विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त की थी। १८६३ ई० में जब पोलैंड में राज्यक्राति हुई तो उनका परिवार रूस चला गया। रूस जाकर उन्होंने सेण्ट पीटर्सबर्ग में एक पत्रिका का सम्पादन करना आरम्भ किया। उनकी इच्छा संसार देखने की थी, इसलिए उन्होंने जिप्सी या बोहेमियन ढंग की यात्रा आरम्भ की। कोई विशेष लक्ष्य न रखकर वे कमाते-खाते एक देश से दूसरे देश को जाने लगे। पहले दक्षिणी यूरोप का भ्रमण करके सन् १८७६ ई० में अमेरिका पहुँचे। वहाँ वे लॉस एञ्जलिस में ठहरकर अपना यात्रा-विवरण लिखने लगे; जिसमें से 'संगीतज्ञ जाको* और' पुराना घंटेवाला†' नामक दो

* Janko, the Musician.
† The Old Bell Ringer

निबंधात्मक यात्रा-विवरण और कई स्फुट लेख विभिन्न पत्रों मे प्रकाशित हुए।

१८८० ई० में वे उपर्युक्त यात्रा से पोलैंड वापस आये। उस समय तक उनकी स्त्री का देहान्त हो चुका था। इसके पश्चात् वे पोलैड की ऐतिहासिक कहानियों का अध्यन करने में लग गये। उन्होंने यह नियम बना लिया कि जाड़े के दिनों मे वे वारसा के पुस्तकालयों मे अध्यन किया करेंगे और गर्मियों मे कारपाथियान की पर्वतमालाओं पर। इसका परिणाम बडा सुन्दर हुआ, क्योंकि इसके पश्चात् उन्होंने कई कल्पनापूर्ण और ऐतिहासिक-तथ्य-युक्त लम्बी कहानियाँ लिखीं। 'आग और तलवार'* एक ऐसी कहानी है कि जिसमें पोलैंड की सन् १६४७ से १६९१ ई० तक की घटनाओं का विशद एवं अलंकारपूर्ण वर्णन है। इसी प्रकार उन्होंने 'दि डेल्यूज'† नामक दूसरी कहानी भी लिखी, जिसमें १६५२ से १६५७ ई० तक की ऐतिहासिक घटनाओं का समावेश है। 'पैन माइकेल'‡ नामक तीसरी कहानी भी उसी समय की रचनाओं मे से है, जिसमे टर्की के आक्रमण का चित्रण किया गया है। इसका कथा-काल १६७० से १६७४ ई० तक है। इसमे सीनकीविज के साहित्यिक-कौशल का भली भाति विकास

* With Fire and Sword

† The Deluge

‡ Pan Michael

हुआ है । विशेषतः पहली और तीसरी कहानी में तो वार्त्तालाप बहुत ही स्वाभाविक रक्खा गया है । लेखक ने पोलैंड-निवासियों को भली भाँति समझा है और वहाँ के निवासी विपत्ति, भय, प्रेम, संघर्ष और अभिलाषा के समय अपने भाव किस प्रकार व्यक्त करते है, इसका ज्वलन्त चित्र खींच दिया है । रचनाओं मे प्रतिष्ठा, देश-भक्ति और विश्वास का वर्णन बडी ओजस्वी भाषा मे किया गया है । कज्जाकों, स्वीडन-निवासियों और तुर्कों के आक्रमण से पोलैंड की जैसी अवस्था हुई थी उसका क्रमिक वर्णन भी इन पुस्तकों मे है । वास्तव में सीनकीविज ने पोलैड-निवासियों मे आदर्श के भाव भरे है और उन्हे आशा का संदेश सुनाया है ।

आधुनिक पोलैड पर उनकी दूसरी पुस्तके "सिद्धान्तहीन"* और 'संतान'† है जिनमें से पहली दुखान्त है । इसमें एक अमीर का वर्णन है, जो अपनी चचेरी बहन अनीला पर आसक्त हो जाता है । उससे पोलैंड के आधुनिक समाज पर काफी प्रभाव पड़ता है । बहुत वर्षों तक सीनकीविजने ईसाई मत का आरम्भिक इतिहास और उसकी विरोधी शक्तियों का हाल पढा था । सन् १८९६ ई० मे उन्होंने अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति "को वाडिस"‡ नाम से लिखी । यह पुस्तक युग-प्रवर्तक

---

* Withaut Dogmas

† Children of the Soil

‡ Quo Vadis

रचनाओं में से है, और सीनकीविज को नोवेल-पुरस्कार मिलने के पहले ही इसका प्रचार अच्छी तरह हो चुका था। इसके अतिरिक्त उनकी दो पुस्तकें 'हम उनका अनुकरण करें'* और 'हानिया' भी प्रकाशित हुई। 'को वाडिस' मे यह दिखलाया गया है, कि किस प्रकार ईश्वरीय शक्तिने मूर्त्ति-पूजकों पर विजय प्राप्त की। यह उपन्यास ऐसा है जिसे धार्मिक और ऐतिहासिक कह सकते हैं। इसके पात्र अत्यंत सजीव हैं जिनमे से पॉल पेट्रोनियस, उरसस, चिलो और कैदी लडकी लिगिया वहुत आकर्षक है। इसमे लेखकने नीरो का चरित्र-चित्रण किया है। सीनकीविजने 'किधर को ?'† नामक शीर्षक देकर वर्त्तमान जगत् से, जो अशान्ति के पंजे मे जकडा हुआ है, पूछा है कि तुम कहाँ जारहे हो ? जिस अंश मे रोम-सम्राट् नीरो का चरित्र-चित्रण किया गया है वह कोई विशेष सफल नहीं कहा जा सकता, क्योंकि नीरो के सम्वन्ध में लेखकने कोई भी नवीन और आधुनिकतापूर्ण दृष्टिविन्दु नहीं रक्खा है, किंतु जिस भाग मे लेखकने आजकल के संतप्त जगत् के मनुष्यों से उपर्युक्त प्रश्न किया है, वह पाठक के मन पर गहरी छाप छोड जाता है। इसमे सहानुभूति और अध्यात्मवाद भरा हुआ है। इनकी 'क्रॉस के शूर'‡ में भी उपर्युक्त गुण है।

---

* Let Us Follow Them

† Whither Goest Thou ?

‡ Knight of the Cross

इसमें उन्होंने ट्यूटनों के विरुद्ध पोलैण्ड और लिथुआनियाँ निवासियों को लड़ाया है। 'रोटी के पीछे'* नामक एक दूसरी पुस्तक में उन्होंने अमेरिका-प्रवासी पोलैण्ड-वासियों का जीवन चित्रित किया है। इस पुस्तक का दूसरा नाम 'रोटी के लिए' और 'देशान्तरवासी किसान' भी है। 'यश के मैदान मे'† भी इनकी एक रचना है। इनकी सब रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित होचुका है। कर्टिन, वीनियन और सीजन्स ने भी इनके ऐतिहासिक और धार्मिक उपन्यासों की प्रशंसा की है। 'चमकीले तट पर'‡ 'जंगल और रेगिस्तान'§ 'तीसरी स्त्री'|| और 'व्यर्थ'¶ ये सब सीनकीविज की सुन्दर रचनाएँ हैं।

सीनकीविज का देहान्त १९१६ ई० में हुआ और मरते समय तक वे अपनी शक्ति-शाली लेखनी चलाते रहे। उनका आदर्श था कि उपन्यास में जीवन, सचेतनता परिवर्द्धन-शक्ति और उत्तमता-पूर्ण नवीनता होनी चाहिए और जहांतक हो उनमे बुराई का वर्णन कम होना चाहिए।

---

* After Bread.

† On the field of Glory

‡ On the Bright Shore.

§ Desert and Wilderness

|| The Third woman

¶ In Vain

लेडिसलॉ स्टेनिसलॉ रेमॉण्ट

१६२४ ई० का नोबेल-पुरस्कार लेडिसलॉ रेमॉण्ट को प्राप्त हुआ था। हेनरीक सीनकीविज के ऐतिहासिक और धार्मिक उपन्यास लिखने के बाद पोलैण्ड में कोई भी विख्यात लेखक नहीं हुआ था। रेमॉण्ट के प्रादुर्भाव ने नयी पीढ़ी का गौरव बढ़ाया और पोलैण्ड को पुनः संसार के समक्ष मान प्राप्त हुआ। पुरस्कार की घोषणा के कुछ सप्ताह पूर्व ही रेमॉण्ट के 'किसान'* नामक उपन्यास के पूर्वार्द्ध का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित हुआ था जिसका नाम 'पतझड़'† रक्खा गया था। अनुवादक माइकेल जिविकी थे, जो उन दिनों क्रैकाउ विश्वविद्यालय के

---

* The Peasants

† Autumn

अध्यापक थे। जबतक नोबेल-पुरस्कार की घोषणा नहीं हो गयी, इस पुस्तक की ओर लोग आकर्षित नहीं हुए थे।

रेमॉण्ट का परिवार मध्यवित् श्रेणी का था। उनके पिता एक चक्की के मालिक थे और कोबियाला वीलका (जो उन दिनों रूसी पोलैण्ड में था) मे रहते थे। रेमॉण्ट का जन्म १८६८ ई० मे हुआ था। रेमाण्ट खेती और पशु-पालन में घरवालों को सहायता भी देते थे और गाँवके स्कूल में पढ़ने भी जाते थे। इस प्रकार उनका आरम्भिक जीवन चरवाहों और गाँव के खिलाड़ी लड़कों के साथ व्यतीत हुआ। वे पशुओं के एक बड़े झुण्ड को चराया करते थे। उनके पिता ऑर्गन बाजा बजाने में गाँव मे सबसे कुशल समझे जाते थे। वे रेमॉण्ट हाई स्कूल की व्यायामशाला मे भी भर्ती हुए। इन्होंने रूस के इस नियम का कि स्कूल मे पोलैण्ड की भाषा नहीं बोलनी चाहिए, अनेक बार उल्लङ्घन किया। इसके कारण उन्हे एक बार स्कूल से निकाल भी दिया गया था।

कई तरह के काम करने और व्यापारादि का कुछ अनुभव प्राप्त करलेने के कारण रेमॉण्ट अपनी कई कहानियों में अपने इस ज्ञान का अपयोग भी कर सके हैं। स्कूली शिक्षा समाप्त करने के वाद वे कुछ दिनोंतक एक दुकान मे क्लर्क रहे। इसके बाद रेलवे में काम करने लगे और कुछ ही दिनों पश्चात तार का काम सीखकर टेलीग्राफ़ ऑपरेटर (तार-यंत्र-संचालक) वन गये। उनकी यात्रा करने की इच्छा बहुत

प्रबल थी। 'स्वप्नदर्शी'* में उनकी वह इच्छा पूर्णतः प्रकट हुई है और उन्होंने इस पुस्तक के नायक को यात्रा का अपना ही सा अभिलाषी बनाया है। कुछ समय तक उन्होंने एक कम्पनी में अभिनय का काम भी किया था जिसके अनुभवका वर्णन उन्होंने अपने 'दि कमेडिन ऐण्ड लिली' नामक रचना मे किया है। कुछ दिनों तक वे एकाध जगह काम सीखते और इस प्रकार उम्मेदवारी भी करते रहे थे। 'प्रतिज्ञाभूमि'† मे उन्होंने पूँजीपतियो और भूस्वामियों के विरुद्ध जो कुछ लिखा है, वह इन्हीं दिनों के अनुभव के आधार पर लिखा गया है। 'किसान' मे रेमॉण्ट ने कृषकों और ग्राम-जीवन का सच्चा चित्र खींचा है। टामस हार्डी और जार्ज मिरेडिथ की तरह रेमॉण्टने भी अपनी कहानियों और उपन्यासों में प्रकृति को सब से अधिक महत्त्वपूर्ण उपकरण बनाकर लिखा है। उपर्युक्त पुस्तक मे रेमॉण्ट ने 'याग्ना' का चरित्र-चित्रण बहुत ही सुन्दर किया है।

पोलैण्ड के किसानों का वर्णन साहित्य मे लाना अकेले रेमॉण्ट का ही काम नहीं था। उनके अतिरिक्त लेडिसलों आर्कन, जान फैसप्रोविज और स्टेनिसलॉ ने भी इस प्रकार की रचनाएँ की हैं।

'किसान' नाम उपन्यास मे उन्होंने गहन भावनाओं से पूर्ण दृश्य भी भरे हैं। इसे पौलैड की लोकोक्तियों का खजाना

---

* The Dreamer

† The Promised Land

भी कह सकते है। प्रेम, घृणा और परिशोध तथा लगातार मदिरा पीने के कारण दासतापूर्ण मानसिक वृत्ति एवं भूस्वामियों का भय आदि बड़े ही सुन्दर ढंग से चित्रित किये गये है। साथ ही यह भी दिखाया गया है कि इन सब के पीछे क्राति की भावना किस प्रकार सोरही है। प्राकृतिक वर्णनमें खलियान और जंगल की सोंधी सुगंध, सुरभित हरियाली और मनोहर सूर्यास्त तथा भयानक तूफान आदि के वर्णन अत्यंत आकर्षक हैं। "पतझड"* के अंतिम परिच्छेद में अत्यंत काव्यात्मक और आदर्श-पूर्ण अंश वह है जब विश्वासपात्र फ्यूबा की आत्मा उसके बहुत दिनों तक कष्ट सहन और सेवा करने के पश्चात शरीर से पृथक् होती है।

पाठकों की जानकारी के लिए उपर्युक्त वर्णन का कुछ दृश्य नीचे उद्धृत किया जाता है—

"और वह और भी ऊँचाई पर उड़ती गई यहाँ तक कि उड़ते-उड़ते एक जगह जाकर उसे रुकना पडा।

"वहाँ न तो करुणापूर्ण क्रन्दन सुनाई देता है और न शोक-संतप्त आहें।

"वहाँ केवल कुमुदिनी अपने प्राण-पद सौरभ का प्रसार करती है; वहाँ पुष्प वाटिकाएँ अपनी मधु-मय सुगध से वायुमंडल को भर देती है, वहाँ उज्ज्वल नदियो की धाराएँ अगणित रंगो से आवृत पिण्ड पर प्रवाहित होती है; वहाँ निशा का आगमन कभी नहीं होता—"

---

* The Autumn

इस उपन्यास मे बहुत से भावना-पूर्ण और काव्यात्मक अश अत्यंत सुन्दर हैं। किंतु वे अंग्रेजों की रुचिके अनुकल नहीं हैं। रेमॉण्ट ने इस उपन्यास मे पोलैण्ड के कृषक जीवन के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाला है। इसमें मनोविज्ञानिक अन्तर्दृष्टि, यथार्थवाद और दृढ आदर्श-वाद का पूर्ण सम्मिश्रण है। इसकी दो जिल्दों* मे जिन घटनाओं का वर्णन है वे अधिक सबल और सजीव है। रेमॉण्ट मे यह दोष अवश्य है कि वह वर्णन को सक्षिप्त रूप मे नहीं लिख सके। प्रोफेसर रोमन डिबास्कीने अपने "आधुनिक पोलिश साहित्य"† नामक पुस्तक के तीसरे परिच्छेद मे रेमॉण्ट की काफी समालोचना की है और उन्हे सीनकीविज की अपेक्षा नीचे दर्जे का लेखक माना है। जो हो, प्रेम, घृणा, यंत्रणा और आह्लाद का वर्णन रेमॉन्टने जैसा किया है वह किसी भी पोलिश लेखक के वर्णन से निम्न श्रेणी का नही है और एक बार पढकर पाठक उसे भुला नहीं सकते।

१९२४ ई० मे नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करने के पश्चात वे विशेप कुछ नहीं लिख सके और ५ दिसम्बर (सन् १९२५ ई०) को उनका देहान्त हो गया।

---

* इस पुस्तक में कुल चार जिल्दें हैं।

† The Madern Polish Literature

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ

१६२५ ई० में नोबेल-पुरस्कार को २५ वर्ष पूरे होने के उपलक्ष में उत्सव मनाने का समारोह हुआ। इस वर्ष के पुरस्कार प्राप्त-कर्त्ता आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध नाटककार जार्ज बर्नार्ड शॉ हुए। अभी तीन वर्ष पहले ही आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध कवि और नाटककार विलियम बटलर ईट्स को यह पुरस्कार मिल चुका था, इसलिए आयर्लैण्ड की इस पुनरावृत्ति पर बहुत-से आलोचकों ने कटाक्ष किया।

जिस समय बर्नार्ड शॉ के पास पुरस्कार की सूचना भेजी गई, उसके एक सप्ताह बाद तक स्वीडिश एकैडमी को उन्होंने कोई जवाब नहीं भेजा, जिससे लोगों ने यह अनुमान लगाना आरम्भ कर दिया कि बर्नार्ड शॉ यह प्रतिष्ठा नहीं

ग्रहण करेंगे। कुछ पत्रों ने बर्नार्ड शॉ के इस विलम्ब के कारण उनकी भर्त्सना भी की। स्वीडन के एक दैनिक पत्र ने तो यहाँ तक लिखा कि शॉ महोदय शहर से बाहर जाकर कहीं एकांत मे इस बात का विचार कर रहे होंगे कि उन्हे पुरस्कार ले लेना चाहिए या नही। उस पत्र ने इस बात की भी सम्भावना प्रकट की कि शायद बर्नार्ड शॉ के मित्र उन्हे पुरस्कार ले लेने के लिए राजी करने मे लगे होंगे। यद्यपि अंत मे शॉ महोदय ने पुरस्कार स्वीकार कर लिया, किन्तु साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि मुझे और कीर्ति की आवश्यकता नहीं है। पुरस्कार में जो धर्म प्राप्त हुआ है उसका उपयोग स्वीडन और बृटिश द्वीपों के बीच साहित्यिक सामञ्जस्य को प्रोत्साहन देने में किया जाय।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ का जन्म २६ जुलाई सन् १८५६ ई० मे डबलिन मे हुआ था। वह अपने पिता कार शॉ की तीसरी संतान और एकमात्र पुत्र थे। उनके पिता अपनी कुलीनता की डींग बहुत हाँका करते थे। किन्तु पुत्र बर्नार्ड शॉ मे यह गुण या दुर्गुण नहीं आया। अपने पिता से बर्नार्ड शॉ ने हास्य-प्रियता का गुण अवश्य ही ग्रहण किया।

बर्नार्ड शॉ की माँ अपने पति से २० वर्ष छोटी थीं। इनका नाम था लुसिण्डा एलिजाबेथ गर्ली। बर्नार्ड शॉ का ननिहाल एक गाँव मे था। इनकी माँ संगीत का अच्छा ज्ञान रखती थीं। जॉर्ज ली नामक एक संगीत-शिक्षक का माता

और पुत्र दोनों ही पर प्रभाव पडा था। बर्नार्ड शॉ बचपन से ही बड़ी स्वतंत्र प्रकृति के थे। बादमें इनकी माँ लन्दन के किसी स्कूल में संगीत की शिक्षा देने लगी थीं और सत्तर वर्ष की अवस्था तक उन्होंने यह कार्य जारी रक्खा। 'कैण्डिडा' नामक नाटक में बर्नार्ड शॉ ने अपनी माँ का आंशिक चरित्र-चित्रण किया है। और "तुम कदापि नहीं बता सकते"* में उन्होंने श्रीमती क्लैण्डन को अपनी माता के रूप में पूर्णतः चित्रित किया है।

अपनी व्यंग और विद्रुप पूर्ण रचना में उन्होंने अपने बाल-जीवन का स्मरण किया है और उसे "बेकारी और शैतानी की अवधि" कहा है। उनके चाचा डबलिन में एक शिक्षक थे। इन्होंने बर्नार्ड शॉ को लैटिन भाषा का व्याकरण पढ़ाया था। किंतु बालक बर्नार्ड शॉ ने १४ वर्ष की अवस्था में ही स्कूल छोड़ दिया। उसके बाद ५ वर्ष तक वे क्लर्की करते रहे। १६ वर्ष की अवस्था के बालक के लिए यह कार्य कठिन ही था, किंतु बर्नार्ड शॉ ने काफ़ी योग्तता और अध्यवसाय का परिचय दिया।

१८७६ ई० से १८८५ ई० तक बर्नार्ड शॉ को विभिन्न परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। उन्हे बहुधा कठिन परिश्रम करने के बदले बहुत थोड़े पैसे मिलते थे, और अपनी अभिलाषाओं को दबाकर रखना पडता था। उन दिनों वे

---

* You Never Can Tell

जो-कुछ लिखकर कहीं भेजते थे, वह प्रायः बिना छपे ही वापस आजाता था। इन असफलताओं के बाद बर्नार्ड शॉ ने सामाजिक समस्याओं का अध्ययन आरम्भ कर दिया और इस कार्य मे अद्भुत साहस का परिचय दिया। बादमे चलकर उन्होंने अपने बचपन की पाँच कृतियों की खिल्ली उडाई है और पहली कहानी के सम्बन्ध में लिखा है कि वह इतनी बुरी थी कि उसे चूहों ने भी कुतरने से इन्कार कर दिया।

बर्नार्ड शॉ के आलोचकों ने लिखा है कि उनकी रचना में आदर्श जैसी कोई वस्तु नहीं है और उनके पुरस्कार मिलने पर भी यह प्रश्न उठाया गया, किन्तु यह कोई नई बात नहीं थी। अनातोल फ्रास और नट हैमसन के सम्बन्ध में भी ऐसी ही आपत्ति की गई थी। किंतु बर्नार्ड शॉ की कई रचनाओं मे आदर्शवाद की झलक मिलती है। 'मनुष्य और असाधारण मनुष्य'* 'कैण्डिडा' और 'श्रीमती वारेन का पेशा'† तथा 'मेजर बारबरा'‡ की कितनी ही पंक्तियों से उपर्युक्त बात का प्रमाण मिलता है। 'शस्त्र और मनुष्य'§ और 'फैनी का पहला खेल'|| इस दृष्टि से पढ़ी जा सकती हैं। बर्नार्ड शॉ की रचनाओं मे व्यंग और विद्रूप का बाहुल्य है। उनका हास्य

---

* Man and Superman

† Mrs Warrens Profession

‡ Major Barbara

§ Armas and Man,

|| Fanny's First Play

बड़ा प्रगाढ़, और विनोद मनुष्यतापूर्ण होता है। समाज पर जैसी चुटकी वे लेते हैं वह अपने ढंग की अपूर्व है। "सेब की गाड़ी"* नामक उनका नाटक बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है। उन्होंने अपने सम्बन्ध में स्वयं लिखा है कि जब मैं अपनी रचनाओं के सम्बन्ध मे गम्भीर बात करता हूँ तो लोग हँसते है और जब मैं विनोद करता हूँ तो मुझे महान दूरदर्शी समझते है।

बर्नार्ड शॉ की आदते विचित्र है। ७० वर्ष से अधिक अवस्था हो जाने पर भी वे नित्य कई मील सुबह और कई मील शाम को टहलते और घण्टों पानी में तैरा करते है। इस अवस्था में भी वे जवानों को मात करनेवाला स्वास्थ्य रखते है। बहुत-से लोग उन्हे अक्खड़-मिजाज साहित्यिक कहते है, क्योंकि ये प्रायः किसी से मिलना-जुलना कम पसन्द करते हैं। आयर्लैण्ड के निवासी होते हुए भी आप प्रायः इंग्लैण्ड मे ही रहा करते है। आपने अपने निवासस्थान पर यह वाक्य लिखकर टाँग रक्खा है:—

"लोग कहते है। क्या कहते है ? कहने दो।"†

इसका सारांश यह है कि दुनिया के कहने-सुनने की पर्वाह मत करो।

---

*The Apple Cart

†They say. What they say ? Let them say

अभी हाल मे बर्नार्ड शा के उपन्यासों के प्रति लोगों की रुचि बढ़ी है—विशेषकर इनके "युक्तिहीन ग्रन्थि "* "कलाकारों मे प्रेम"† और "कैशल बॉयरनका पेशा"‡ अधिक प्रसिद्ध हुए है। इनमे से अन्तिम उपन्यास का नाटक बनाकर रंगमंच पर खेला जा चुका है। यद्यपि इन उपन्यासों मे अद्भुतता का सामजस्य पर्याप्त रूप से है, पर मे किसी न किसी आर्थिक और सामाजिक प्रश्न को लेकर लिखे गये है। इनमे से अन्तिम उपन्यास को पढकर स्टिविसनने विलियम आर्चर को लिखा था—"यह (उपन्यास) उन्माद और माधुर्य से परिपूर्ण है। लेखक मे स्कॉट और डूमा की भाँति शौर्य की रुचि तो है ही, साथ ही इसमें समाजसत्तावाद§ की पुट भी है। मेरा विश्वास है कि वे (लेखक) अपने हृदय में सोचते होंगे कि यथार्थवाद रूपी ठोस स्फटिक की खान खोदने का परिश्रम कर रहे है।" 'चैप-बुक' नामक पत्रिका के प्रतिनिधि से भेंट करने पर बर्नार्ड शॉने नवम्बर सन् १८९६ ई० मे यह अहम्मन्यता-पूर्ण वक्तव्य दिया था कि मेरे भाग्य में लन्दन को सुशिक्षित बनना लिखा था, किंतु मैं अपने अनुगामियों को न तो अच्छी तरह समझ ही सका, न उन्हे अपने विचार समुचित रूप से समझा ही सका।

* Irrational Knot

† Love Among the Artists

‡ Cashel Byron's Profession

§ Socialism

जिस समय वे "पालमाल गजट" के समालोचकों में नियुक्त किए गये, उसी समय से उनके साहित्यक-जीवन मे एक अनोखा परिवर्त्तन आरम्भ होगया। यह स्थान उन्हे विलियम आर्चर की सहायता से प्राप्त हुआ था। इसके पश्चात् इन्हे एडमण्ड ईट्स के द्वारा "दी पर्ल" और "दी स्टार" नामक पत्रिकाओं में भी स्थान मिला। उन्होंने संगीत-नाटक और चित्रकला की समालोचनायें लिखीं और सामाजिक तथा आर्थिक प्रश्नों पर भी अनेक निबंध लिखे। इन्ही दिनों उनकी मित्रता क्लेमेन्ट शार्टर, डवल्यू० ई० हेनली और विलियम से होगई। सामाजिक प्रसंग को लेकर उन्होंने अपनी लेखनी में कार्ल मार्क्स सिडनी वेब, एनी वीसेण्ट का प्रभाव दिखलाया और सार्वजनिक सभाओं मे वोलने का भी अभ्यास किया, यद्यपि इस अंतिम कार्य में उन्हे बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा और उन्होंने फैवियन सोसाइटी मे प्रति सप्ताह वक्तृता देने का नियम-पालन किया। १८८६ ई० मे उन्होंने समाजसत्ता-वाद पर फेवियन सोसाइटी द्वारा प्रकाशित निबंध-माला का सम्पादन किया। बाद मे चलकर उनके विचार साम्यवाद के विरुद्ध हो गये और इन्होंने खुद लिखा कि मैं अब परिवर्तित हो चुका हूँ और सच-मुच मैं एक अद्भुत मनुष्य हूँ।

अपने व्याख्यानों, निबंधों और उपन्यासों मे उन्होंने कला, संगीत, विज्ञान और समाज के सम्बन्ध में अपना विशेष अनुभव प्रकट किया है। अनेक स्थल पर उन्होंने ऐसे गर्व

के साथ अपने विचार प्रकट किए हैं जिसके कारण आलो-चकों ने उनपर बड़े ही व्यंग-पूर्ण आक्रमण किए हैं। 'दि रिव्यू आफ रिव्यूज' नामक पत्रिका के १६१६ ई० के अंकों मे जो व्यंगचित्र प्रकाशित हुए हैं उन्हे देखकर हँसी रोकनी कठिन हो जाती है। इन व्यंगचित्रों का आलेखन मैक्स बीर-बॉन ने किया है। इनमे एक स्थल पर उन्होंने बर्नार्ड शॉ की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि शॉ-महोदय का ऐसा आकर्षक व्यक्तित्त्व है कि वह लगभग सब पर अपना प्रभाव डालदेते हैं। वे अपने सम्बन्ध में कही गई प्रत्येक बात बड़े मनोयोगपूर्वक सुनते है। उनमें अहम्मन्यता का जो भाव प्रचुर मात्रा मे पाया जाता है उसका कारण यह भी है कि वे इसके द्वारा लोगों को बनाने की चेष्टा करते है, क्योंकि इस प्रकार वे उन लोगों को, मन मे चुभनेवाली बातें कह आनन्दित होते हैं, जिनमे रसिकता का अभाव होता है। उनका गर्व उनकी रचनाओं मे भी कभी-कभी फूट निकलता है—'आचार वादियों के लिये तीन नाटक'* की भूमिका में यह स्पष्ट रूप से व्यक्त हुआ है। आप लिखते है—"अधिकाश नाटककार अपनी रचनाओं की भूमिका स्वय इसलिये नहीं लिखते कि वह लिख ही नहीं सकते, क्योंकि नाटककारों मे आध्यात्मिक चेतनता और दार्शनिकता का अभाव होता है। मेरा यह कहने का अभिप्राय यह है कि मैं अपनी प्रशंसा करवाने के लिये

* Three Plays for Puritans

दूसरे लेखक से भूमिका क्यों लिखवाऊँ जब कि मैं स्वयं अपनी प्रशंसा कर सकता हूँ और मैं उसे लिखने के लिये अपने को अयोग्य नहीं पाता। आलोचना करने मे मैं सभी समालोचकों को छकाने की भरपूर शक्ति रखता हूँ। रही दार्शनिकता, सो तो मैंने ही इन आलोचकों को पढ़ाई है जो मेरी ही भरी बन्दूक लेकर मुझपर निशाना लगा रहे हैं। वे लिखते हैं कि मैं इस प्रकार लिखता हूँ जैसे मनुष्यों में बुद्धि बिना इच्छा-शक्ति या हृदय के ही हो। मैं कहता हूँ कि 'इच्छा शक्ति' और 'बुद्धि' का अन्तर समझने की ओर उनका ध्यान बर्नार्ड शॉ ने ही आकर्षित किया है—शोपेनहॉरने नहीं—।" इसी भूमिका में आपने अपने उस आरम्भिक दिन का भी स्मरण किया है जब हाइड पार्क में आपने पहले-पहल ब्रिटिश जनता को अपना व्याख्यान सुनाया था। इसी भूमिका मे आपने लिखा है कि मैं स्वभावतः ही साहसी और सब पर प्रभाव जमालेनेवाला पैदा हुआ हूँ।

'रँडुओं के घर'* नामक पुस्तक उन्होंने १८६२ ई० में विलियम आर्चर के सहयोग से लिखी थी। यह इनकी नाट्य-रचना की आरम्भिक सफलता थी। इस रचना से साम्य-वादियों में बडी प्रसन्नता फैली क्योंकि इसमे कपटाचारी जमीं-दारों के प्रति काफ़ी उद्गार प्रकट किये गये है। १८६८ ई० में 'प्रिय और अप्रिय नाटक'† प्रकाशित हुआ जिससे शॉ-महोदय

* Widower's Houses

† Plays, Pleasant and Unpleasant

हास्य, व्यंग, दर्शन और साहसपूर्ण विचारों के उत्तम लेखक मान लिये गये। पीछे जब 'दि फिलेण्डरर' 'श्रीमती वारेन का पेशा' 'कैण्डिडा' 'शस्त्र और मनुष्य' 'भाग्यवान पुरुष'* और 'आप कभी नहीं बतला सकते' आदि नाटक छपे तो इनके नाट्यकला-ज्ञान की धाक जम गयी। इसके तीन वर्ष पश्चात् 'आचारवादियों के तीन नाटक' 'शैतान का शिष्य'† 'कैसर और क्लियोपाट्रा' और 'कप्तान बॉसबाउण्ड का धर्म-परिवर्तन'‡ आदि रचनाए प्रकाशित हुई। 'शैतान के शिष्य' मे शॉ-महोदय ने डिक डजियन नामक एक अद्भुत पात्र की सृष्टि की है। इसमे क्रूरता और दार्शनिकता से पूर्ण चरित्र भी चित्रित किये गये है। 'भाग्यवान पुरुष' और 'कैसर और क्लियोपाट्रा' में मे दोनों ही अपेक्षाकृत घटिया श्रेणी के नाटक है।

'मनुष्य और असाधारण मनुष्य'§ १६०५ ई० में रंगमंच पर अभिनीत हुआ था। इसमें वार्तालाप लम्बा है और नाटकीय भाव कम है। 'जानबुल का दूसरा द्वीप' की तरह यह भी एक विचार-प्रधान नाटक है। 'मनुष्य का नया पतन'|| 'मेजर बरबारा' 'आलोचकों को प्राथमिक सहायता का निबन्ध'¶ और

* The Man of Destiny
† The Devil's Disciple
‡ Captain Brassbounds Conuersion
§ Man and Super Man
|| A New Fall of Man
¶ Essay as First Aid to Crities

हास्य, व्यंग, दर्शन और साहसपूर्ण विचारों के उत्तम लेखक मान लिये गये। पीछे जब 'दि फिलेण्डरर' 'श्रीमती वारेन का पेशा' 'कैण्डिडा' 'शस्त्र और मनुष्य' 'भाग्यवान पुरुष'* और 'आप कभी नहीं बतला सकते' आदि नाटक छपे तो इनके नाट्यकला-ज्ञान की धाक जम गयी। इसके तीन वर्ष पश्चात् 'आचारवादियों के तीन नाटक' 'शैतान का शिष्य'† 'कैसर और क्लियोपाट्रा' और 'कप्तान बॉसबाउण्ड का धर्म-परिवर्तन'‡ आदि रचनाएं प्रकाशित हुईं। 'शैतान के शिष्य' मे शॉ-महोदय ने डिक डजियन नामक एक अद्भुत पात्र की सृष्टि की है। इसमे क्रूरता और दार्शनिकता से पूर्ण चरित्र भी चित्रित किये गये है। 'भाग्यवान पुरुष' और 'कैसर और क्लियोपाट्रा' मे से दोनों ही अपेक्षाकृत घटिया श्रेणी के नाटक है।

'मनुष्य और असाधारण मनुष्य'§ १९०५ ई० मे रंगमंच पर अभिनीत हुआ था। इसमे वार्तालाप लम्बा है और नाटकीय भाव कम है। 'जानबुल का दूसरा द्वीप' की तरह यह भी एक विचार-प्रधान नाटक है। 'मनुष्य का नया पतन'|| 'मेजर बरबारा' 'आलोचकों को प्राथमिक सहायता का निबन्ध'¶ और

---

* The Man of Destiny

† The Devil's Disciple

‡ Captain Brassbounds Conuersion

§ Man and Super Man

|| A New Fall of Man

¶ Essay as First Aid to Crities

भी मानी जा सकती हैं। उन्होंने सोवियट रूस के सम्बन्ध में भी ऐसी ही निन्दात्मक बातें लिखी है। जिन लोगों से उनकी अधिक घनिष्ठता है उनके प्रति समय पर दयालुता और सहृदयता दिखाने में भी ये नहीं चूकते। कला-कौशल के प्रत्येक क्षेत्र में काम करनेवाले सच्चे और उत्साही कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहन देने मे कभी नहीं हिचकते। अपने घरपर वे लोगों का अच्छा आगत-स्वागत करते हैं। उन्होंने ४० वर्ष की अवस्था में विवाह किया था और उनकी स्त्री बड़े ही संयत स्वभाव की और घरेलू मामलों में कोमल व्यवहारवाली है। अर्नेस्ट ब्वायड का कथन है कि बर्नार्ड शॉं को अपनी जन्मभूमि आयर्लैण्ड से लन्दन भाग आने मे अधिक लाभ हुआ है क्योंकि यहाँ उन्हे अधिक स्वतन्त्रता मिल गयी है और उनके अन्दर एक ऐसी निर्पेक्षता आ गयी है कि वह अपने शत्रु की भी प्रशंसा कर देते है, आयर्लैण्ड में रहकर वह ऐसा नहीं कर सकते थे। देशभक्ति के भावों से शॉं-महोदय द्रवित नहीं होते और अपने विचार के अनुसार ही अनुकूलता या प्रतिकूलता ग्रहण कर लेते है।

विलियम लॉयन फेल्प्स ने कहा है कि समाज-विज्ञान और सामाजिक इतिहास के विद्यार्थियों के लिए बर्नार्ड शॉं के नाटकों का अध्ययन अनिवार्य है।

ग्रेज़िया डेलेड्डा

[इटली की कहानी लेखिका]

१९२६ ई० का नोबेल-पुरस्कार सार्डीनिया (इटली) की विख्यात् कहानी-लेखिका ग्रेजिया डेलेड्डा को मिला। यह दूसरी स्त्री थी जिन्हे नोबेल-पुरस्कार पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, क्योंकि १९०९ ई० मे सेल्मा लेजरलाफ को भी यह पुरस्कार मिल चुका था। इटली को यह नोबेल-पुरस्कार दूसरी बार मिला, क्योंकि इसके पहले १९०६ ई० मे कवि कार्डुकी को भी यह सम्मान मिल चुका था। पुरस्कार प्राप्त होने के पहले ही ग्रेजिया की बहुत-सी कहानियों का अनुवाद स्कैण्डेनेवियन भाषा मे चुका था, किंतु जबतक उन्हे पुरस्कार नहीं मिला तबतक अन्य देशों मे उनका नाम नहीं हो पाया था।

स्टॉकहोम-स्थित नोबेल-पुरस्कार के निर्णायकोंने पुरस्कार प्रदान करने के दो वर्ष पहले ही सर्डीनिया की इस लेखिका की रचनाओं का पूरा परिचय प्राप्त कर लिया था और उन्हे पुरस्कार के योग्य भी मान लिया था। ग्रेजिया डेलेड्डा का जन्म-स्थान नूरो था। ग्रेजिया के पिताने क़ानून का अध्ययन किया था, किंतु उन्होंने कृषि और व्यापार की ओर ही अपना मन लगाया। वे तीन बार अपने शहर नूरो के मेयर बने। वे कभी-कभी स्वान्तःसुखाय काव्य-रचना कर लिया करते थे। उनके घर अच्छे-अच्छे किसानों, पुरोहितों, कलाकारों और धर्माचार्यों का जमघट लगा रहता था और उनके पास एक सुन्दर पुस्तकालय भी था। ग्रेजिया को सार्डीनिया की साधारण लड़कियों की अपेक्षा अच्छी शिक्षा दी गई थी और उन्होंने हाई स्कूल में इटैलियन भाषा का अध्ययन किया था। जब वह १२ वर्ष की थीं उसी समय 'ट्रिब्यूना' नामक पत्रिका में एक सुन्दर लेख लिखने के कारण उन्हे ५० लीरा का एक चेक मिला। इसके बाद उनके परिवारवालोंने उन्हे उच्च शिक्षा की स्वीकृति दे दी।

ग्रेजिया ने अपने सम्बन्ध में स्वयं लिखा है कि मैं सदा लोगों से अपनी अवस्था अधिक बतलाया करती थी। उदाहरण के लिए जब मैं तेरह वर्ष की थी तो अपने को सोलह वर्ष की इसलिए बतलाती थी कि लोग मुझे निरी बालिका न समझें। ग्रेजिया ने केवल सत्रह वर्ष की अवस्था में "सार्डीनिया का फूल"*

* Flower of Sardinia

नामक पुस्तक लिखी जिसने बाहर के लोगों को भी अपनी ओर आकर्षित किया। इसके बाद "एनीम ओनेस्ट" (साधु आत्मा) नामक उपन्यास लिखा, जिसकी भूमिका 'रोजी रो बोंधी" नामक प्रसिद्ध इटैलिन साहित्यिकने लिखी। ग्रेजिया ने लिखा है कि यदि मैं इस पुस्तक का अधिकार दूसरे प्रकाशक को न देकर स्वयं छपवा लेती, तो मुझे लाखों की आमदनी होती।

आरम्भ मे उन्होंने कुछ संक्षिप्त कहानियाँ और कविताएँ लिखी थीं और इसके बाद बड़े उपन्यास लिखे। उनकी रचनाओं मे 'हवा मे सरकंडे के फूल"* उन्हे सबसे अधिक प्रिय है। इस पुस्तक मे प्रतिपादित किया गया है कि मनुष्य का जीवन हवा मे स्थित सरकंडे के फूल के सदृश है जिसके भाग्य का निर्णय हवा के रुखपर निर्भर है। उनकी दूसरी कहानी जिसमें इनके भावों का काफ़ी समावेश है। "मिस्र मे उड़ान"† है। गद्य और पद्य दोनों ही मे, ग्रेजियाने सार्डीनिया-निवासियों का सुन्दर चित्रण किया है। सार्डीनिया के सम्बन्ध मे ग्रेजिया ने स्वय लिखा है—"मैं सार्डीनिया को अच्छी तरह जानती और उससे प्रेम करती हूं। इसके निवासी मेरे निजी आदमी है। इसके पर्वत और इसकी घाटियाँ मेरे ही अंग है। जब नाटक के सभी उपकरण हमारे निकट आँख खोलते ही मिल जाते है

* Reeds in the Wind
† Flight into Egypt.

तो हम उन्हें ढूँढ़ने के लिए दूर के छितिज पर दृष्टि क्यों डालें। वास्तव में हमें उन्हीं विषयों को ग्रहण करना चाहिए जो हमारे अनुभव में आ चुके हैं।"

जब तक ग्रेजिया ने विवाह नही किया तब तक वे सार्डीनियाँ छोड़कर और कहीं नहीं गईं। पीछे जब लोम्बार्डी-निवासी महाशय मदेसानी के साथ उनका विवाह हो गया तो उन्हे अपने पति के साथ रोम जाना पड़ा, क्योंकि वहाँ मदेसानी-महोदय को सेना-विभाग में सरकारी नौकरी मिल गई थी। रोम में इनका मकान शहर से बाहर देहात में है जहाँ यह दम्पति अभी भी निवास करता है। इनके दो पुत्र विश्व विद्यालय से ग्रेजुएट होकर निकले हैं। ग्रेजिया ने अभी तक जितनी पुस्तकें लिखी है उनका हिसाब लगाने पर एक साल में एक पुस्तक का औसत पड़ता है। स्टेनिस रूइना नामक व्यक्ति से ग्रेजिया ने एक बार कहा है कि मैंने लिखना शौक से शुरू किया था और अब भी शौक से ही लिखती हूं। सार्वजनिक प्रशंसा और आर्थिक सफलता ये सब बाद की चीजें है। जिस समय मैं कोई उपन्यास लिखने बैठती हूँ तो उसका अन्त पहले से नहीं सोच रखती। ग्रेजिया का कहना है कि उनका ईश्वर पर दृढ़ विश्वास है और वे यह मानती है कि ईश्वर सदा दुर्वृति को पराजय देता है। कुछ समय के लिए यह भ्रम हो सकता है कि दुर्वृति और पाप की विजय हो रही है, किन्तु यह भ्रम क्षणिक होता है। उनकी कहानियों में दुःखान्त की प्रधानता है। इसका कारण यह है कि

ग्रेजिया ने बचपन ही से दुःख और विपत्ति के भयानक दृश्य देखे थे। उनके पिता चूँकि मेम्बर थे इसलिए बहुत-से दुखी लोग इनके घर आकर बहुत-सी गाथाएं सुनाया करते थे। बालिका ग्रेजिया के कोमल मनोभावों पर उनका स्थायी प्रभाव पड़ा था।

डाकुओं और चोरों द्वारा त्रस्त और खून-खराबी के शिकार बने लोगों के प्रति ग्रेजिया की रचना में गहरी सहानुभूति है। इनकी "माता"* 'नोस्टाल्जिया' और "राख"† में ऐसे ही भावावेश प्रकट और गुप्त रूप में हैं। इनमें से 'माता' नामक उपन्यास इनकी सारी रचनाओं की अपेक्षा अधिक विख्यात् है। 'नोस्टाल्जिया' में भी मानवता की गहरी छाप है। 'राख' नामक कहानी में विषाद की गहरी छाप है। इसके अँगरेज़ी अनुवाद की भाषा बड़ी सरल है। उसमें यह दिखलाया गया है कि सार्डीनिया के एक युवक के हृदय पर रोम के नैतिकताशून्य वातावरण का कैसा प्रभाव पड़ता है। यह युवक एक किसान का गैर-कानूनी पुत्र होता है और नगर-निवास तथा विश्वविद्यालय के जीवन से आकर्षित होकर रोम में रहने की अभिलाषा करता है। वहाँ वह नैतिक और सामाजिक संघर्षों से घिर जाता है। चूँकि उसका व्यक्तित्त्व आकर्षक और चरित्र दुर्बल होता है, इसलिए उसे अनेक

---

* The Mother

† Ashes

दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ता है । जब उसकी माँ सार्डीनियाँ से चलकर उससे रोम मे मिलने के लिए आती है तो उस युवक को यह देखकर बड़ी लज्जा आती है कि उसकी नागरिक स्त्री के सामने उसकी माँ कैसी सीधी-सादी और अज्ञान-पूर्ण है। कहानी दुःखान्त-पूर्ण है क्योंकि अन्त में वह युवक इन दोनों ही स्त्रियों (माँ और स्त्री) का विश्वास खो बैठता है और इस प्रकार खाक में मिल जाता है। इस कहानी का चित्रपट भी बन गया था और अमेरिका में सफलतापूर्वक दिखलाया गया है। ग्रेजिया की आरम्भिक रचनाओं में से कुछ हार्पर्स-मेगजीन में प्रकाशित हो चुकी है। उनका 'घृणा' नामक नाटक रंगमंचपर सफलता-पूर्वक खेला जा चुका है। उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से "चमत्कार"* मुख्य है जो 'संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ†' नामक पुस्तक में प्रकाशित हो चुकी है। अपने देश इटली में इनका बड़ा सम्मान है और वे १९२६ ई० में इटली के राष्ट्र-नायक मुसोलिनी द्वारा स्थापित इटैलियन 'एकैडमी आफ इम्मार्टल्स' नामक संस्था के सदस्यों में चुनी गई है। मुसोलिनी ग्रेजिया के परम प्रशंसक हैं। किन्तु यह सब सम्मान प्राप्त होते हुए भी ग्रेजिया सामाजिक सम्मेलनों में कम भाग लेती हैं और एकान्त जीवन ही अधिक पसन्द करती है।

---

* Two Miracles

† The Best Short Stries of The World.

ग्रेजिया को भली-भाँति समझने में सार्डीनिया और रोम के लोगों ने बहुत भूल की है। 'ट्रिब्यूना' नामक पत्रिका के समालोचक को एक पत्र लिखते हुए ग्रेजिया ने अपने आरम्भिक दिनों को इस प्रकार याद किया है—"मैंने आरम्भ मे ही सार्डीनियन चित्र-चित्रित किया था जिसे केवल सार्डीनियन ही होने के कारण बहुतों ने पसन्द नहीं किया। उस समय मेरी अवस्था केवल १३ वर्ष की थी। मैंने समझा था कि मैं यह लिखकर अपने देशवासियों को प्रसन्न कर सकूंगी, किन्तु मेरी सारी अभिलाषाओं पर तुषारपात हुआ और बहुत-से लोग मुझसे इतने अप्रसन्न हो गये कि पुस्तक प्रकाशित होने पर मैं पिटते-पिटते बची।"

इसी पत्र मे आगे चलकर ग्रेजिया ने लिखा है जो पुरुष मेरी उस रचना के कारण अप्रसन्न हुए थे, वे स्त्री को द्वन्द युद्ध के लिए न ललकार सकने के कारण मुझसे और तरह से बदला लेने की सोचने लगे और मुझे दुर्वाक्य कहकर, चोट पहुंचाकर तथा यह कहकर भी कि मैं दूसरों से लिखवा-कर अपने हस्ताक्षर कर दिया करती हूँ, मुझसे बदला लेने लगे। फिर भी मैं हिम्मत नहीं हारी और गद्य-पद्य दोनों ही लिखती गयी।"

पद्य की अपेक्षा ग्रेजिया की गद्य-रचना अधिक सुन्दर है, यद्यपि उनकी पद्य-रचना में भी कहीं-कहीं सुन्दर पंक्तियाँ देखने में आती है।

उनके उपन्यासों में "तलाक के बाद" का अँगरेज़ी अनुवाद अब अप्राप्य हो गया है। यद्यपि इसके कथानक और चरित्र-चित्रण में अनेक त्रुटियाँ है फिर भी इसमें आकर्षण काफ़ी है। इसमें दिखलाया गया है कि इवा नामक एक स्त्री के पति को राजनीतिक अपराध में सत्ताईस वर्ष की जेल हो जाती है और बाद मे सार्डीनिया में एक क़ानून घोषित होता है कि जिन स्त्रियों के पति राजनीतिक अपराध में सजा भोग रहे है वे दूसरे पुरुषों से विवाह कर लेने में स्वतंत्र है। इसके विरुद्ध ग्रेजिया ने उपन्यास की नायिका इवा से यह कहलाया है—"यह कैसे विचार है ? भला ईश्वर के अतिरिक्त कोई शादी को भी रद्द कर सकता है।"

इस पुस्तक मे गिवोवनी का चरित्र बड़ा ही मार्मिकता-पूर्ण है। वह निराशा से अपना सिर हिलाती और हताश हो खिड़की-रहित कमरे में बैठी गोधूलि बेला में सुदूरवर्ती एकमात्र तारे को निरखती है, जिसकी क्षीण और पीली किरणों की चमक उसकी दृष्टि मे पहुँचती है। दूसरा आकर्षक चरित्र ब्राण्टू का है जिसके लिये संसार मे दो ही प्रेम की वस्तुएँ है—एक मदिरा और दूसरी परम सुन्दरी गिवोवनी जो उसके लिये मदिरा से भी अधिक नशा करनेवाली है। ऑण्ट मार्टिना गिवोवनी के प्रति उसके प्रेम को और भी उकसाती है, किन्तु गिवोवनी को उसकी माँ और उसका जेल-वासी पति—कासटैण्टिनो—ब्राण्टू से प्रेम करने को मना करते है और कहते है

कि ऐसा करना पाप है। किन्तु परिस्थिति से वाध्य होकर गिवोवनी का पतन होता है और उसे ब्राण्टू से एक दूसरा बच्चा पैदा होता है, यद्यपि गिवोवनी को अब भी कांस्टैण्टिनो से प्रेम है। इसके बाद जब कास्टैण्टिनो जेल से छूटकर आता है, तो वह पहले तो कहीं भाग जाना चाहता है, पर अन्ततः अपनी स्त्री के प्रेम से आकर्षित होकर विदेश नहीं जाता, यद्यपि उसकी स्त्री परायी हो चुकी होती है। वह अपनी विषय-वासना को तृप्त करने के लिये एक दूसरी अर्द्ध-विक्षिप्त लड़की मैंटिया से प्रेम करने लगता है। पीछे वह गिवोवनी से मिलकर कहता है—"मैं प्रतिदिन तुम्हारी प्रतीक्षा करता हूँ; पर जब तुम देखती भी हो, तो मुझपर शिकार की चिड़िया की तरह दृष्टिपात करती हो।"

इधर ब्रॉण्टू एक वर्ष के लिये बाहर चला जाता है और वापस आने पर मरणासन्न हो जाता है। स्थानीय परम्परा के अनुसार मदर बैचीसिया कास्टैण्टिनो से कहती है:—"कहावत है कि परमात्मा शनिवार को मरनेवाले को मुक्ति नहीं देता—बेचारा ब्राण्टू आज मर रहा है।" कहानी यद्यपि दुःखान्त है, फिर भी अन्त मे उसका वातारण इस प्रकार सुन्दर बना दिया गया है— "वसन्त का सुखद, सुन्दर और कोमल दिवस है। ऊपर सुनील नभ-मण्डल शोभा दे रहा है। (नीचे) गाँव के चारों ओर अनाज के खेत ऐसे लहरा रहे है जैसे हरे जल से परिपूर्ण सागर मे वायुवेग से लहरें उठ रही हों।"

ग्रेजिया डेलेड्डा की १८९१ ई० से १९३१ ई० तक कुल चवालीस पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिनमें से अधिकाश उपन्यास हैं। उनकी रचनाओं में से अधिकाश का अनुवाद, स्कैंडेनेवियन, जर्मन और फ्रेंच भापाओं मे हो गया है, परन्तु अँगरेजी मे उनकी बहुत थोड़ी पुस्तकों का अनुवाद हुआ है। इसीलिये यहाँ उनकी सभी रचनाओं का परिचय कराने में हम असमर्थ है। प्रायः उनकी सभी कथाओं का घटनास्थल सार्डीनिया है। फ्रेडरिक मिस्ट्राल की तरह ग्रेजिया ने भी अपनी रचनाओं मे किम्वदन्तियों, रीति-रिवाजों और इतिहास का आधार लिया है और उन्हे अपने द्वीप की ही भापा में लिखा है। जिस प्रकार फ्रेडरिक मिस्ट्राल ने प्रावेन्स का, कार्ल स्पिटलर ने स्विट्जर-लैण्ड का और ईट्स ने आयर्लैण्ड का चित्रण किया है और जिस तरह सिग्रिड अण्डसेट ने मध्यकालीन नार्वे का गुण-गान किया है, उसी प्रकार ग्रेजिया ने भी उच्च आदर्श और मानवता से प्रेरित होकर सार्डीनियन भापा और अपने देश की परम्परा का जीर्णोद्धार किया है। अन्य देशवालों से भी अधिक ग्रेजिया की रचनाओं की प्रशंसा खास इटली निवासियों ने ही की है। उनकी रचनाओं में नोबेल-पुरस्कार के आदर्शानुकूल गुण है— तथ्यवाद होते हुए भी उनमे आदर्शवाद और मनुष्य जाति की भलाई का पूर्ण समावेश है। गत तीस वर्षों में यूरोपीय साहित्य में नयी धारा बहानेवाले साहित्यिकों मे ग्रेजिया का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

एक इटैलियन समालोचक ने उस देश की एक पत्रिका में ग्रेजिया के सम्बन्ध मे लिखा है कि उनकी साहित्यिक शैली सुबोधिनी है किन्तु उनके पात्र साधारण पाठकों की समझ मे आजाते है। उनकी रचनाओं पर विदेशी साहित्यिकों का प्रभाव नहीं पड़ा मालूम होता। उन्होंने न तो किसी विशिष्ट साहित्यिक की शैली का अनुकरण किया है, न दूसरे लेखकों के वर्णन को ही अपनाया है। उनकी साहित्यिक चेतना अपने-आप जाग्रत हुई है और उन्होंने अपनी निराली शैली को साद्यन्त अक्षुण्ण रक्खा है। उनकी रचनाएँ यद्यपि आधुनिक है, पर उनमे मनोवैज्ञानिकतापूर्ण प्राचीनता का आभास मिलता है। उनकी कविताओं को इनकी मातृभूमि मे जैसा आदर मिला है वह भी अपने ढंग का विलक्षण है। इनकी 'इपोपे' शीर्षक कविता तो सार्डीनिया मे अत्यधिक विख्यात् हो गयी है। लीगी पिरंडेलो नामक इटैलियन ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा है कि वर्तमान इटली में 'ला माद्रे' (माता) जैसी कोई भी कहानी नहीं लिखी गयी।

ऐसी असाधारण लेखिका की समस्त रचनाएं यदि अंग्रेजी भाषा मे अनूदित हो गयी होतीं, तो आज सारा साहित्यिक जगत् उनके उद्देश्य और आदर्श को ग्रहण करके लाभान्वित होता। यद्यपि यह मानना पड़ेगा कि सारे पात्र और घटनास्थल सार्डीनियन होने के कारण पाठकों को उन्हें सम्यक् रूपसे समझने मे कठिनाई होती, फिर भी जो कुछ

जानकारी प्राप्त होती उससे साहित्यिकों को लाभ ही होने की सम्भावना थी।

अर्नेस्ट बॉयड का कहना है कि ग्रेजिया डेलेड्डा में कहानी का वर्णन करने का अद्भुत कौशल है और उनमें पूर्ण सजीवता है। इटली के विख्यात् आलोचक डिनो मैण्टोवनी ने इस प्रकार लिखा है—"ग्रेजिया ने डोस्टोव्स्की और गोर्की का अध्ययन अच्छी तरह किया है और उनके कतिपय पात्रोंके वार्तालाप में उसकी झलक भी आगयी है। वर्णन में भी जहा उन्होंने दुखियों के क्लेशपूर्ण जीवन का चित्रण किया है वहाँ उक्त लेखकों की हल्की छाया का आभास मिलता है। ग्रेजिया ने जो मनोविज्ञानात्मक वर्णन किया है, वह अंश उतना सुन्दर नहीं हुआ है जितना होना चाहिए। किन्तु वाह्य जगत् का जैसा सुन्दर और तद्रूप वर्णन उन्होंने किया है, वह अत्यन्त शुद्ध और प्रभावोत्पादक है। वह पाठकों में यौवनावास्था की ऐसी सनसनी भर देता है जो हमें लिवोपार्डी और टॉलसटॉय की रचनाओं में ही मिल सकती है।"

हेनरी बर्गसन

[विचारक और उपदेष्टा]

१६२७ ई० मे नोबेल-पुरस्कार हेनरी बर्गसन नामक प्रसिद्ध दार्शनिक, विचारक और उपदेष्टा को मिला। १६०८ ई० में यूकेन महोदय को भी इन्हीं गुणों के कारण पुरस्कार मिल चुका था। बीस वर्ष बाद पुनः उसी प्रकार की योग्यता के दार्शनिक को यह सम्मान प्राप्त हुआ। इन दोनों ही महानुभावों ने मौलिक और रचनात्मक विचारों की सृष्टि करके मनुष्य जाति के ज्ञान का भण्डार बढ़ाया है और दोनों ही ने जडवाद का विरोध किया है।

हेनरी बर्गसन का जन्म १८ अक्तूबर १८५६ ई० मे पेरिस मे हुआ था। उनके पूर्वज पोलैण्ड के प्रसिद्ध यहूदी परिवारों

में से थे। उनकी माँ ने वचपन में ही उन्हे अंग्रेज़ी पढ़ाई थी और पढ़ने-लिखने में काफी प्रोत्साहन दिया था। नौ वर्प की अवस्था में वे स्कूल में बैठाये गये। उन दिनों गणित की ओर उनकी विशेप रुचि थी और उन्हे गणित की योग्यता के लिये पुरस्कार भी मिला था। यह पुरस्कार 'एनल्स-डि-मैथेमेटिक्स' में प्रकाशित एक सवाल को हल करने के लिये प्रदान किया गया था। "इकोल नार्मल सुपीरियर" नामक पाठशाला में उनपर रैविसाँ का वहुत अधिक प्रभाव पड़ा और वाद मे उन्होंने "फ्रेंच एकैडमी आफ़ मॉरल ऐण्ड पोलीटिकल साइंस" नामक संस्था में व्याख्यान देते समय रैविसाँ को 'कलाकार या कवि की आत्मा' तक कह डाला है।

ग्रेजुएट होने के पश्चात् पहले उन्होंने ऐंगर्स, क्लेमाण्ट और अन्य स्थानों पर दर्शन के आचार्य का कार्य किया और फिर वे इकोल नार्मल सुपीरियर मे अध्यापक नियुक्त होकर आगये। १६०० ई० में वे कालेज-डी-फ्रास में अध्यापन-कार्य कर रहे थे। दूसरे ही वर्ष ये इन्स्टीयूट के लिये चुन लिये गये और १६१४ ई० में फ्रेंच एकैडमी के सदस्य बन गये। उनके शिष्य उनकी अध्यापकीय योग्यता के परम प्रशंसक हुए और उनकी अध्यापन-शैली की उत्तमता की चर्चा फैल गयी। उनके कालेज के लेक्चर बड़े चाव से सुने जाते थे, और बाद में उनके श्रोताओं में पर्याप्त वाद-विवाद और आलोचनाएँ हुआ करती थीं।

एडविन ई० स्लोसन-महोदयने 'मेजर प्राफेट्स आफ टुडे' नामक पुस्तक में बर्गसन के तत्त्वज्ञान और उपदेश का विश्लेपण करते हुए लिखा है कि उनके स्वर मे संगीत भरा है और उनके शिष्योंने तो उनकी उपमा लवा पक्षी से दी है, जो, जितना ही ऊपर उडता है, उतना ही मधुरता के साथ गाता है। अध्यापक के रूप मे उनके आकर्पक प्रभाव की प्रशंसा भी स्लोसन-महोदय ने खूब की है। उनका उनके शिष्यों पर स्थायी और मधुर प्रभाव पडा है। वे चाहे पेरिस मे हों या ग्रीष्म के दिनों मे अपने स्विट्जरलैण्ड स्थित मकान मे हों, उनके यहाँ सदा मिलने-जुलने के लिये आनेवालों का ताँता लगा रहता है और उनका समस्त परिवार आगतों का यथेष्ट सत्कार करता है। वे व्याख्यान देने के लिये अनेक बार अमेरिका से आमंत्रित होकर वहाँ गये हैं और वहाँ उनका बड़ा आदर हुआ है।

उनके दार्शनिक सिद्धान्त मुख्यतया विकासवाद सम्बन्धी है, यद्यपि उनमें अनेक विषयों का समावेश है। आरम्भ मे वह एक जडवादी और निर्द्धारित विज्ञान के परम भक्त थे। वे यंत्रों की ओर बहुत आकर्पित हुए थे और हर्बर्ट स्पेंसर के तत्त्वज्ञान को आगे बढाने के अभिलाषी थे। उन्होंने यान्त्रिक सिद्धान्तों का अध्ययन करके जब उन्हे सृष्टि की व्याख्या पर लागू करने की चेष्टा की, तो उन्हे अपर्याप्त पाया,—उदाहरणार्थ उन्होंने भौतिक विज्ञान मे 'काल' के विचार को विवादयुक्त माना। उनकी धारणा है कि वास्तविक 'काल' 'स्थूल व्यवधान'

की तरह मापा नहीं जा सकता। घड़ी या पञ्चाग से उसकी माप नहीं हो सकती;—हमारी चेतनता के अनुसार उसमे विभिन्नता हो सकती है। निर्दिष्टवादी (Determinist) से वह उदारतावलम्बो (Libertanion) होगये और अपने इस परिवर्त्तन की सफ़ाई मे उन्होंने 'काल और पुरुषकार' (Time and Free Will) तथा 'भौतिक पदार्थ' और स्मृति, (Matter and Memony) नामक पुस्तकें लिखी।

इस प्रकार के आरम्भिक निर्णय के द्वारा वह इस सिद्धान्त पर पहुँचे कि मन पंचभूत से भिन्न वस्तु है और उसपर आंशिक रूप से निर्भर करता है। इसके बाद जब उन्होंने मानसिक धारा और इन्द्रियों का अध्ययन किया तथा संस्कार एवं सहज बुद्धि पर विचार किया तो उन्हे 'सृष्टि-विकास' (Creative Evolution) नामक दूसरी पुस्तक लिखनी पड़ी। कहने की आवश्यकता नहीं कि उन्होंने ये पुस्तकें अपनी मातृभाषा फ्रेंच में लिखी थीं और उनका अंग्रेजी अनुवाद बाद में प्रकाशित हुआ था। अनुवाद बर्गसन की आज्ञा से आर्थर मिचेल ने किया था। लेखक ने इस पुस्तक में प्रोफ़ेसर विलियम जेम्स के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित की है, क्योंकि उन्हे उनसे अनुवाद में बड़ी सहायता मिली है। कई स्थलों पर विलियम जेम्स ने अन्धकारमय विषयों पर प्रकाश डाला है और कुछ ऐसे शब्दों और वाक्यों का प्रयोग किया है जिनका कि अंग्रेजी में मिलना कठिन था। होरेस मेयर केलेन ने

'विलियम जेम्स और हेनरी बर्गसन—उनके जीवन के व्यतिरेकात्मक मत का अध्ययन'* नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमे उन्होंने उन दोनों के दार्शनिक मतों मे विशेष भिन्नता का दिग्दर्शन कराया है। और दोनों को भली भाँति समझाकर उनकी व्याख्या की है।

'सृष्टि विकास' मे बर्गसन ने दार्शनिक परम्पराओं की प्रयोजनीयता को स्वीकार किया है और आधुनिक ढंग की वाक्यावली और शैली का प्रयोग किया है। उन्होंने प्लेटो और अरस्तू से लेकर डेस्कार्टिस, स्पिनोजा लाइबनित्ज़, स्पेंसर और कैंट तक के प्रधान दार्शनिक तत्त्वों की खोज की है। उनके अन्तर्निहित विचारों का विकास, जड़वाद से अध्यात्मवाद की ओर इस प्रकार प्रकट किया गया है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि वे जडवाद के विरोधी है—अर्थात् उनका कहना है कि भौतिक पदार्थ एक और सूक्ष्म मूलतत्त्व अथवा स्पन्दन के साथ आवेष्ठित है, क्योंकि जहाँ तक निष्क्रिय जड़ पदार्थ का सम्बन्ध है, हम कोई भी भीषण भूल किये बिना उसकी प्रवाहशीलता की उपेक्षा कर सकते हैं। हम कह चुके है कि जड पदार्थ रेखागणित के बोझ से दबा है। और जड़ पदार्थ का अस्तित्त्व, उसकी अधःपतित अवस्था मे, वास्तविकता का रूप तभी धारण करती है जब उसका उसकी

---

* William James and Henri Burgson A Study in Contrasting Theories and Life

ऊर्ध्वगति के साथ सम्बन्ध हो। परन्तु जीवन और चेतनता ही ऊर्ध्वगति हैं।*

हेनरी वर्गसन के गम्भीर और प्राण-प्रद विचार ऐसी स्पष्ट भाषा में व्यक्त किये गये है कि उनकी रचनाओं को पढ़कर आनन्द मिलता है। उन्होंने दृष्टान्त दे-देकर अपने विचारों को पाठकों के लिये ऐसा बोधगम्य बना दिया है कि पाठकों की कल्पना और तर्क शक्ति एक साथ काम करती है। इस दृष्टि से वर्गसन, यथार्थवादी विलियम जेम्स से बहुत मिलते-जुलते हैं। फ्रांस में वर्गसन की ऐसी धाक जम गयी है कि उनकी शैली जिस किसी कला या साहित्य में पायी गयी, उसे वर्गसोनियन कला या वर्गसोनियन साहित्य कहने लगे हैं— यही नहीं, धार्मिक और श्रमजीवी क्षेत्र में भी वर्गसन का नाम इतना हो चुका है कि 'वर्गसोनियन प्राचीन ईसाई' और 'वर्गसोनियन मजदूर आन्दोलन' कहकर इनका नाम उससे सम्बद्ध किया जाता है। वर्गसन के कट्टर शिष्यों में एडवर्ड-ली-रॉय का नाम लिया जा सकता है जो एक कैथोलिक है और जिन्होंने वर्गसन के तत्त्वज्ञान में धार्मिक-प्रकाश का

---

* इसका तात्पर्य यह है कि आध्यात्मिक जीवन चैतन्य से सम्बन्ध रखता है जिसकी ऊर्ध्व गति होती है और जड इस ऊर्ध्व गतिशील चैतन्य के साथ सन्वन्ध रखकर ही अपना अस्तित्व रख सकता है।

—लेखक

आभास पाया है, यद्यपि बर्गसन ने सीधे रूप में न तो धर्म की ही शिक्षा दी है न आर्थिक आन्दोलन पर ही कुछ लिखा है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि उप-रचनाएं भी मुख्य कृतियों के समान मूल्यवान और चित्ताकर्षक होती है। 'स्वप्न'* और 'हास्य'† नामक दो साहित्यिक-कृतियों की उपरचनाएँ भी ऐसी ही है। इनमे से पहले का अनुवाद एडविन-स्लॉसन ने किया है। इसमे बतलाया गया है कि स्वप्न भी चेतना का अंश है और निद्रा प्रत्याहार की अवस्था है। इसमे स्वप्न के कारणों और पुनरावृत्तियों पर भी विचार किया गया है, और उसकी यथासाध्य व्याख्या करने की चेष्टा की गई है। वर्गसन ने सुपरिचित और प्रबल उपमाओं का व्यवहार किया है। उदाहरणार्थ नीचे उनका उपमालङ्कार देखियेः—"हमारी स्मृतियाँ एक दबाव से उसी प्रकार दबी रहती है, जैसे ब्वॉयलर में वाष्प। हमारी स्मृतियाँ इस प्रकार ठूस-ठूस कर भरी हुई है जैसे ब्वायलर में वाष्प ठुसी होती है। अत्यधिक दबाव से ब्वायलर के फटने का डर होने के कारण एक छोटा-सा द्वार बना रहता है जिनमें से उपयुक्त सीमा से अधिक वाष्प निकल जाती है। इसी प्रकार स्मृतियों के अतिरिक्त दबाव को कम करने के लिए स्वप्न की आवश्यकता है।

मनोविज्ञान के पूर्ववर्त्ती आचार्यों ने जो कुछ खोज की है उसको सहृदयतापूर्वक स्मरण करते हुए और पुस्तकों तथा

---

*Dreams †Laughter

क्रियात्मक प्रयोगों की प्रचुर व्याख्या करते हुए बर्गसन पूछते है कि क्या साधारणतः स्वप्न के द्वारा नये विचार की सृष्टि हो सकती है ? साथ ही वे अठारहवीं शताब्दी के वाद्य-विशेषज्ञ तारतिनी-जैसों को असाधारण मानते हैं, जिन्हे स्वप्न में ऐसी रागिनी सुनाई पड़ी थी जिसकी स्वरलिपि उन्होंने जागकर बनाई और जिसका नाम 'शैतान का संगीत' रक्खा। स्वप्न स्मृतियों से उत्पन्न होते हैं। स्मृतियाँ प्रायः अदृश्य छाया की अवस्था में रहती है,—पर कुछ (स्मृतियाँ) ऐसी भी होती हैं जो रूप और वाणी का आश्रय लेकर स्थूल रूप में प्रकट होने का प्रयत्न करती है और इस कार्य में वे ही सफल होती हैं जो दृश्यमान ढंग के अणुओं के साथ अपने को मिला सकती हैं और जो उन वाह्य और आन्तरिक इन्द्रियानुभूतियों के साथ—जिनकी हम उपलब्धि करते है—सम्बन्ध रखती है।

बर्गसन ने भावी मनोविज्ञान के लिए, मानसिक अन्तर्विनिमय का समाधान तथा स्वप्न और चेतनता के अधःस्तर के अन्य रहस्यों पर उसके प्रभाव को सुलझाने के लिए छोड दिया है।

'हास्य' का अनुवाद रूसी, पोलिश, स्वीडिश, जर्मन, हंगेरियन और अंग्रेजी भाषाओं मे हो चुका है और यह पुस्तक बहुत व्यापकरूप में पढ़ी गई है। इसमे हास्य का अर्थ समझाने के लिए निबंध लिखे गये हैं। इसका उपयुक्त अंग्रेजी अनुवाद क्लाउड्स्ली ब्रेरटन और फ्रेड रादरेल ने किया है। बाद में

इसका लेखक ने स्वयं संशोधन किया है । इसमे हास्यपर जितु
तीन लेखों का संग्रह है वे 'दि रच्यू-डि-पारी' मे पहले प्रकाशित
हुए थे । इसमें तीन परिच्छेद इस प्रकार है—साधारण हास्य
और हास्य के तत्त्वों के रूप और गति, परिस्थितियों और
शब्दों मे हास्य तत्त्व, नैतिक चरित्र से हास्यरस का सम्बन्ध,
हास्य का अर्थ क्या है ? स्वप्न मे जो रूपरंग आदि दिखाई देते
हैं, बर्गसन का यह मत है कि आँखों के बद करने पर (विशेष
करके अंधकार मे, विभिन्न रंग के जिन सूक्ष्म अणुओं का नृत्य
दिखाई देता है) उन्हीं के परस्पर गतिशील सम्बन्ध से परिवर्त्तन-
शील रूपमे वे दीखते हैं और धारणा के साधन मे वह प्रथमस्तर
हैं । *सुखासन मे बैठकर मेरुदण्ड को सीधा रखकर अमूर्त्त की*
कल्पना की चेष्टा करते हुए अंधकारपूर्ण स्थान मे नेत्रों को बंद
करके जो विकीर्णित अणु दिखाई देते हैं, उनमे से कुछ अणु तो
ज्योतिमान हैं और कुछ ज्योति-रहित हैं । उनपर ध्यान रखकर
उनके विभिन्न प्रकार के स्पन्दन का अध्ययन किया जाता है ।

"जिस वस्तु पर हम हँसते है उसका आधारभूत तत्त्व
क्या है ?" आदि स्तम्भित करनेवाले प्रश्न है । इसमे इस बात
का समावेश भी है कि हास्य मानवीय क्षेत्र के बाहर नहीं होता,
क्योंकि कोई भूभाग या जानवर नहीं हँसता, केवल मनुष्य ही
हसता है । भावावेग हास्य का शत्रु है, क्योंकि गहरे भावों के
साथ वास्तविक हास्य कभी-कभी ही देखने मे आता है । विवेक
हास्यरस की प्रतिध्वनि है ।

जहाँ बर्गसन ने हास्य के सम्बन्ध में यह दिखाया है कि सामाजिक भाव-भंगी के रूप में उसका क्या स्थान है, वह स्थल अधिक मनोरंजक है। अपने सिद्धान्त की पुष्टि में लेखक ने मौलियर, लाबिश, डिकेन्स और मोशिए-डी-स्टाल का उद्धरण दिया है। बर्गसन ने हास्य की जो यह व्याख्या की है उसमे जार्ज मिरेडिथ-रचित हास्य रस और उसके मूल तत्त्व से कुछ समानता है। बर्गसन का यह भी कहना है कि हास्यरस ही अहंभाव की एकमात्र औषधि है। बर्गसन के हास्यरस के अध्ययन मे जो अतिम मीमासा दी गई है वह विचारणीय है। उन्होंने कहा है कि हास्य का सब से बड़ा कार्य है साम्य-स्थापना। इस विषय में भी अन्यान्य विषयों की भाति प्रकृति ने असत् का उपयोग सत् की पूर्ति के लिए किया है।

इडविन जर्मैन ने अपनी 'क्या संसार मे कोई ऐसी नयी वस्तु है ?' नामक पुस्तक के निबंधों में जो प्रश्न किए थे उनका उत्तर उन्हें 'हेनरी बर्गसन—वास्तविकता के दार्शनिक' नामक पुस्तक में मिल गया। इसी प्रकार जार्ज सन्तायन ने भी बर्गसन पर "साम्प्रदायिकता की बयार" नामक पुस्तक लिखी है जिसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि हेनरी बर्गसन जीवित दार्शनिकों मे सब से अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह सब होते हुए सन्तायन बर्गसन के दर्शन का निदान करते हुए लिखते है कि वे शब्द-प्रयोग करने में कुशल, निर्णय करने मे

समीचीन हैं और उनकी रचनाओं में भावों और रसों का आभास मिलता है, किन्तु इसपर भी उनकी विद्वता में कठिन प्रयास की झलक पायी जाती है। संतायन ने उनकी ऐसी प्रशंसा करते हुए भी उनकी तीक्ष्ण आलोचना की है। इस प्रकार उन्होंने उनकी न्याय-विरोधिनी तर्कना शक्ति, ऐतिहासिक निर्णयों में भ्रम और रहस्यवाद तथा सृष्टि-विकास की उलझनों में पडने की भूलें बतायी है। संतायन का यह भी कहना है कि जब बर्गसन गणित और पदार्थ-विज्ञान छोडकर काल्पनिक और आध्यात्मिक विचारों पर लिखते है तो ज्ञात होता है कि ये समझते तो हैं पर भय से कापते है—अमानुपीय विचारों से वे डरते हैं।

पहले कहा जा चुका है कि हेनरी बर्गसन के सबसे बडे प्रशंसक, भक्त और शिष्यमोशिये ली० रॉय है। ली० रॉय महोदय ने 'हेनरी बर्गसन का नवीन दर्शन'* नामक पुस्तक लिखकर बर्गसन के दार्शनिक विचारो को समझाने की चेष्टा की है। इसमे उन्होंने दार्शनिक विचारों को समझाने की चेष्टा की है। साथ उन्होंने दर्शन की प्राचीन और अर्वाचीन पद्धति पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार भी किया है। हेनरी बर्गसन के अनेक अनुयायी है। टेन और रेनन की तरह उनके विचारों का प्रभाव बहुत व्यापक हुआ है। उपर्युक्त दोनों दार्शनिकों के अपेक्षाकृत जड़तावादी और असत्वादी विचार होने के कारण नयी

* The New Philosophy of Henry Burgson.

पीढ़ी के लोग उनसे ऊब चुके है। इसलिए लोग बर्गसन को ओर शीघ्रतापूर्वक आकृष्ट हुए है। महासमर के पश्चात् उनके विचारों का प्रभाव जनता पर अधिक पडा और इनकी ख्याति बहुत बढ़ गई। इसीलिए उन्हे पुरस्कार भी कुछ शीघ्र मिल गया। पुरस्कारपत्र में ये शब्द लिखे गये है कि उनके मूल्य-वान जीवनप्रद विचारों तथा उस सुन्दर कला के लिए उन्हे यह पुरस्कार दिया गया जिसमें उन्होंने वे विचार व्यक्त किये हैं और साहित्यिक कौशल को पूर्णतः निभाया है। विलियम जेन्स ने हेनरी बर्गसन् से मतभेद रखते हुए भी यह लिखा है—"यदि कोई वस्तु कठिन को सरल बना सकती है तो वह बर्गसन की शैली है। उनके प्रत्येक पृष्ठ में एक नया क्षितिज खुलता है। जो कुछ किताबी कीड़े—प्रोफेसर—दुहराते है, उसे ही कहने के बदले वे हमें वास्तविकता के सच्चे रूप की ओर ले जाते हैं।"

सिग्रिड अण्डसेट

[नार्वे की उपन्यास-लेखिका]

१६२८ ई० मे नोबेल-पुरस्कार नार्वे की सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखिका सिग्रिड अण्डसेट को प्रदान किया गया था। पुरस्कार दिये जाने के पहले ही साहित्यक जगत् मे उनका नाम हो चुका था और साहित्यिकों मे यह चर्चा थी कि उन्हे शीघ्र ही विश्व-विख्यात् पुरस्कार मिलेगा। पाठकगण अण्डसेट की प्रतिभा से पहले ही स्तम्भित हो चुके थे, क्योंकि वे उनके मोटे-मोटे उपन्यास भी चरित्र-चित्रण की विचित्रता के कारण बड़े चाव के साथ पढते थे और उसमें एक अद्भुत सजीवता का अनुभव करते थे। उन उपन्यासों का कथा-काल चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी और घटनास्थल नार्वे होने पर भी उनमे

सार्वजनिक मनोरंजकता कम नहीं थी। इस रमणी के अद्भुत चरित्र-चित्रण पर मुग्ध होकर पाठक उत्सुक हो उठे और उनके मनमें स्वभावतः यह जिज्ञासा हुई कि यह चमत्कारपूर्ण रमणी है कौन और उसके उपन्यासों में उसका व्यक्तित्व और उसकी भावनाए कहां तक छिपी हुई है।

सिग्रिड अण्डसेट का जन्म डेन्मार्क के कैलेण्डबोर्ग-नामक नगर मे १८८२ ई०मे हुआ था। उनके पिता इंगवाल्ड मार्टिन अण्डसेट प्रसिद्ध पुरातत्त्वविद थे। उन्होने बचपन से ही नार्वे का इतिहास पढ़ा था और उसे हृदयंगम कर लिया था। उनकी माँ डेनिश थीं। सिग्रिडने ओसलो के महिला महाविद्यालय में शिक्षा पायी थी। कहानियां लिखने की रुचि उन्हे विद्यार्थी जीवन से ही थी, पर उन दिनों उनकी कोई विशेप ख्याति नहीं थी। इनके सम्बन्ध में लिखे गये लेखों से यही प्रतीत होता है कि वे अकस्मात् एक अत्यन्त प्रकाशमान नक्षत्र की भांति साहित्यिक नभ-मण्डल पर उदय हुई और जब १९२८ ई० मे उन्हे नोबेल-पुरस्कार प्राप्त हुआ तो लोग उनका विशेप परिचय प्राप्त करने की चेष्टा करने लगे। उनके आरम्भिक उपन्यास 'फ्रू मर्था आउली' (१९०८ ई०) और 'हैप्पी एज' (आनन्दा-वस्था) है। इसके बाद १९११ ई० में उनकी पहली कहानी 'जेनी' प्रकाशित हुई जिसने पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। इसके कुछ ही समय पश्चात् उन्होंने ए० सी० स्वार्सटेड नामक एक चित्रकार से शादी करली और दाम्पत्य

एवं मातृत्व का आनन्दोपभोग करते हुए भी उपन्यास-लेखन जारी रक्खा। १९२१ ई० से वे लीलेहैमर नामक स्थान मे रहने लगीं और फिर प्रकाशक भी उनकी पुस्तकों की माँग करने लगे। यद्यपि वे लिखती बहुत धीरे-धीरे रहीं, पर लिखने का क्रम बराबर जारी रहा। वे अपने पात्रों के चरित्र के साथ तल्लीन-सी हो जातीं और उनके सम्बन्ध में सदा विचार करती रहतीं थीं—इसलिये यद्यपि उन्होंने लिखा बहुत थोडा, पर जो-कुछ लिखा उसमें जीवन और वास्तविकता की गहरी छाप है। उनके पात्रों के अकृत्रिम सुख तथा उनके मानसिक एवं आध्यात्मिक द्वन्द्व का चित्र पाठकों के मन पर खिंच जाता है। उनकी आरम्भिक रचनाओं से उनकी पर्यवेक्षण और वर्णन शक्तियों का पता लगता है। बाद मे उन्होंने मध्यकालीन नार्वे के कथानक लेकर जो उपन्यास लिखे हैं उनमे उन्होंने जीवन का निश्चित आयोजन और सिद्धान्त स्थापित कर लिया था। इनका साधारण झुकाव दुखान्त की ही ओर है—जब किसी पात्र ने जाति-बन्धन और नैतिक विधान का उल्लङ्घन किया है तो ग्रीक नाटकों के पात्रों की तरह उसका परिणाम दुखद हुआ है और अन्तिम दृश्य परिताप या परिशोधयुक्त हुआ है। उनके बाद के उपन्यासों में उन्होंने आध्यात्मिक क्लेश का शमन शान्तिपूर्ण धार्मिक मठों मे और गिरजाघरों की क्रियात्मक और आत्म-बलिदानयुक्त सेवा करने मे बतलाया है। उनकी रचनाओं से मानवीयता के प्रति उनकी कल्याणेच्छा प्रतिबिम्बित होती है।

सिग्रिड ने नार्वे के मध्यवर्ती श्रेणी के लोगों का चरित्र-चित्रण किया है। कथानक चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी का है। किसानों, और बाजार में काम करनेवाले अन्य श्रमजीवियों, के घरेलू और अल्प-विस्तृत जीवन का इस लेखिका ने ऐसा सजीव चित्रण किया है कि पाठक उनके छोटे स्वार्थों और बड़ी समस्याओं में भाग लेने लगता है। इनके पात्रों में वह शक्ति है कि उनके परिचय के साथ तत्कालीन वातावरण भी आँखों के सामने आजाता है। वातावरण का वर्णन सिग्रिड ने छोड़ा नहीं है, बल्कि उन्होंने उसे इतने सूक्ष्म विवरण के साथ किया है कि उसके द्वारा पात्रों का चरित्र प्रकाश में आजाता है। सिग्रिड अण्डसेट ने इस कौशल के साथ चौदहवीं सदी के ग्रामीण नार्वे का दृश्य समुपस्थित किया है कि पाठकों के लिये वह वैसा ही सुगम-ग्राह्य है जैसा बीसवीं सदी का दृश्य। इन्होंने गद्य के साथ-साथ तत्कालीन गाने और धर्माचार्यों के थोड़े-बहुत दार्शनिक उपदेश भी अपनी रचनाओं मे सम्मिलित कर लिये हैं।

किन्तु ऐतिहासिक उपन्यासों में हाथ लगाने के पूर्व अण्डसेट ने वर्तमान समाज के युवक युवतियों और उनके संघर्षमय और असन्तोपजनक विवाह-सम्बन्ध आदि सामाजिक समस्याओं का सफल वर्णन करने के लिये 'अपरिचत'*

---

*A Stranger जो अब The Happy Age नामक पुस्तक का एक अग बनगया है।

नामक उपन्यास लिखा। किन्तु उनके ऐतिहासिक उपन्यासों की सफलता के बाद भी इनका 'जेनी' नामक उपन्यास जिस चाव के साथ पढ़ा गया वैसा अन्य कोई नहीं। इसका कारण है उसकी साहित्यिक कला और करुणा रस-प्रधानता। इसका कथानक आधुनिक है और उसमे एक ऐसी गुणवती और कोमल स्वभाव की स्त्री का चित्रण किया गया है जो नार्वे छोडकर कला-कौशलका अध्ययन करने रोम चली जाती है। किन्तु अट्ठाईस वर्ष की अवस्था मे उसके हृदय मे एक नई आकाञ्छा का उदय होता है और वह (हृदय) प्रणय तथा प्रणयी की कामना करता है। हेल्ज, जो उसके अभिलाषापूर्ण स्वभाव को जाग्रत करता है, जेनी से मानसिक और नैतिक साहस मे दुर्बल है—वह उसके प्रति ऐसा स्नेह रखती है जिसमे पत्नी और मातृ-प्रेम का सम्मिश्रण होता है। वह जब नार्वे अपने घर लौटकर आती है तो उसे निराशा होती है। अन्त मे वह पुनः रोम जानेको तैयार होजाती है और कलामें पुनः अपने को तल्लीन करके प्रेमकी निराशा भुला देना चाहती है, किन्तु फिर भी वह अपनी असफलता को कुछ दिनों तक सहन करती है और अन्त में जाकर उसका दुःखद अन्त होता है। इसका अन्तिम दृश्य ऐसा दुःखद है कि सहृदय पाठक का हृदय द्रवीभूत होकर आहे भरे विना नहीं रह सकता। इसके कथानक मे करुणा-रस का पूर्ण विकास हुआ है। जेनी ने गनार-हेगेन से कुछ ही शब्दों मे उन स्त्रियों की दशा का

वर्णन किया है जिन्हें कोई प्रेम नहीं करता और जो द्वन्द्वपूर्ण स्वभाव की हो जाती हैं।

जेनी के पश्चात् सिग्रिड अण्डसेट ने विवाहित स्त्रियों की कहानियाँ लिखी और यह दिखलाया कि प्रेम करने में उन्हें संघर्ष और अड़चनों का सामना करना पड़ता है। उनके 'वसन्त' नामक उपन्यास का अंग्रेजी अनुवाद अभी तक नहीं प्रकाशित हुआ है, अतः उसके सम्बन्ध में हम कुछ लिखने में असमर्थ है। उनके 'दि स्प्लिटर आफ़ दि ट्राल मिरर' मे कई कहानियों का संग्रह है।

सिग्रिड अण्डसेट ने कितनी ही छोटी कहानियाँ भी लिखी है जिनका संग्रह 'पुअर फेट्स' नामक एक जिल्द मे हुआ है। इसमें से 'साइनसेन' नामक कहानी को 'नार्वे की सर्वोत्तम कहानियाँ'* मे स्थान मिला है। 'बुद्धिमती किशोरी'† में स्त्री के आत्मबलिदान की भावना काव्यमयी भाषा में व्यक्त की गयी है। लेखिका की सब से प्रसिद्ध कहानी है 'क्रिस्टिन लैवरा-सडैटर'। अपनी कहानियों में लेखिका ने बहुधा डेनिश माता का ही चित्रण किया है। वास्तव में लेखिका को माता भी डेनिश—डेन्मार्क की—थीं। उनके पात्र-पात्री प्रायः मध्यम श्रेणी के तथा शिथिल स्वभाव के हुआ करके हैं, किन्तु होते ऐसे हैं कि उन्हे परिश्रम करना ही पड़ता है।

---

* The Best Short Stories of Norway.

† Wise Virgins.

सिग्रिड अण्डसेटने आधुनिक जीवन का उपन्यास लिखते-लिखते मध्यकालीन उपन्यास लिखना क्यों शुरू कर दिया, यह प्रश्न हो सकता है। किन्तु प्राचीन कथानकों और प्राचीन गीतों का उनका प्रेम नया नहीं था—उन्होंने आधुनिक उपन्यासों मे भी प्राचीन गीतों का समावेश करना पहले ही से आरंभ कर दिया था। १९०९ ई० मे ही उन्होंने 'विगो-जॉट और विवाडस' नामक उपन्यास नार्वे के प्राचीन कथानक पर लिखा था। १९१५ ई० मे उन्होंने सम्राट् आर्थर और उनके मुसाहबों की कहानी लिखी।

क्रिस्टिन लारेण्डेटर की कहानी लिखते समय अण्डसेट के मस्तिष्क मे दो बातें जम गयी थीं—एक यह कि चौदहवीं शताब्दी के स्त्री-पुरुष बीसवीं शताब्दी के मानवता-युक्त स्त्री-पुरुषों से मिलते-जुलते थे, दूसरी यह कि सही और ग़लत, पाप और उसके परिणाम, उदारतावाद के आधुनिक विचारों और क्रियाओं की प्रवृति से घटाये नहीं जा सकते। इस सिद्धान्तकी कि 'प्रत्येक बात को समझने का अर्थ है उसका त्याग देना' उन्होंने बडी निन्दा की है और कहा है कि यह उन कायरों के लिये एक शरणस्थल है जो अपने आदर्शों के अनुकूल जीवन नही व्यतीत कर सके है। १९१९ ई० मे इनका 'एक स्त्री का दृष्टिविन्दु'* नामक अपना निबन्ध संग्रह प्रकाशित कराया जिसमे यह सिद्ध करने की चेष्टा की

* A Woman's Viewpoint

कि मध्यकाल मे प्रेम का विवेचन तीन रूप मे किया जाता था—"उच्च परन्तु ध्वंसक वासना, नीच और भीरुतापूर्ण क्रियाओं का प्रलोभन और सामाजिक शक्ति।" अण्डसेट की राय में प्रेम के सम्बन्ध में आधुनिक विचारकों ने कोई भी नई बात नहीं मालूम की है।

सिग्रिड अण्डसेट के उपन्यासों और उनकी कहानियों का विषय-प्रसंग प्रधानतः स्त्रीत्व ही रहा है। उन्होंने अपनी आरम्भिक कहानियों में स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ चित्रित किया है। अपने एक कथानकमे उन्होंने नायिका—क्रिस्टि न लावरेंसडेटर—के बचपन,परिक्वावस्था और अन्तिम दिनोंका वर्णन इस ढंग से किया है कि वह पाठकों के हृत्पटल पर आकर्षक रूप से जम जाता है। क्रिस्टिन के साथ उसकी माँ रैनफ्रिडका भी चित्रण किया गयाहै, किन्तु उसका व्यक्तित्व 'वधु-माल'* के अन्तिम दृश्य तक आगे न लाकर पीछे ही रक्खा गया है। इस अन्तिम दृश्य में रैनफ्रिड अपनी बेटी क्रिस्टिन का विवाह हो जाने पर उसके पति से अपने जीवन के अनुभव बतलाती है और कहती है कि उसके जीवन में क्या छुपा हुआ था और उसने भावावेशमे तथा पति के लिये क्या-क्या कष्ट उठाये हैं। क्रिस्टिन की माँ की अपेक्षा उसके पिता का चरित्र अधिक योग्यतापूर्वक चित्रित किया गया है। लावरेंस जार गल्फसन नार्वे के प्रतिष्ठित घराने के ग्रह-स्वामी

---

* The Bridal Wreath

चित्रित किये गये है और उन्होंने अपनी मध्यकालीन परम्परा को ठीक तौर से निभाया है तथा ख्रिष्टान्न धर्म की दीक्षा पाकर उनमे और भी कोमलता और धैर्य का समावेश हो गया है। उनका पत्नी और पुत्री-प्रेम, उनका अपने दामाद एर्लेण्ड के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, लगातार स्थिर रहा है और उसने एक वीर पिता की तरह कर्त्तव्य-पालन किया है। आधुनिक रचनाओं मे ऐसे प्रभावशाली अंश कुछ ही मिलेंगे जिनमे वेसा प्रभाव और सौन्दर्य हो जैसा पिता के अपनी पुत्री क्रिस्टिन के साथ पर्वत को जाने के वर्णन मे मिलता है। जिस समय वह अपने पालतू घोड़े—गुल्डूस्टवीमिन—पर चढता है तो उसका वर्णन लेखिका इन शब्दों मे करती है—"घोडा मजबूती और और तेजी के कारण सारे देश मे विख्यात् था, पर अपने मालिक के सामने वह मेमने—भेडके बच्चे—के सदृश नम्र बन जाता था और लावरेंस कहा करता था कि वह घोडा उसे छोटे भाई के सदृश प्यारा है। सात वर्ष की लडकी क्रिस्टिन भी अपने पिता के साथ उसी घोड़े पर चढ़कर यात्रा के आनन्द और उत्ताप का अनुभव करती है। घाटियों और गुलाबी फूलो के सौन्दर्य और हवामें भरे हुए पहाडी घासों के सौरभ का वर्णन बडी ही सजीव भाषा मे किया गया है। लडकी के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए लेखिका ने लिखा है—"छोटी लड़की कुमुदिनी-सी मालूम होती है और उसके चेहरे से ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी शूर की लड़की है।" पुस्तक मे

वह प्रकरण और भी सुन्दर है जहाँ गुल्ड्सवीनन के साथ क्रिस्टिन के महोद्यम का वर्णन किया गया है और एक ठिंगनी लड़की के सम्बन्ध में उसकी कल्पना का विस्तार दिखाया गया है।

क्रिस्टिन और एर्लेण्ड के विवाह के समय जो भोज दिया जाता है उसका वर्णन काव्यात्मक परम्परा और सुन्दरता से गुँथा हुआ है। यह युगल जोड़ी प्रकाश के पीछे छिपे हुए अन्धकार की भाँति वासना के पीछे छिपी हुई सन्तान-लालसा रखते हैं और समझते हैं कि यह बात उन्हों-ने अपने मेहमानों और पड़ोसियों से छिपा ली है। एर्लेण्ड साहसी और आकर्षक युवक है—वह महोद्यमी है और उसे तो अपने कृत्यों से आनन्द मिलता है साथ ही क्रिसिन को भी, पर कभी-कभी उन्हे पश्चाताप भी होता है। दूसरी जिल्द[1] में यह दम्पति भावुकता की चरम सीमा पर पहुँच जाता है। अन्त में जब एर्लेण्ड एक राजनीतिक षड्यंत्र में फँस जाता है तो साइमन एण्ड्रसन, जिसके साथ क्रिस्टिन की एर्लेण्ड से पूर्व सगाई हुई थी, उसे उस मामले से छुडाता है, यद्यपि एर्लेण्ड को उस राज्य (हस्वी) से निकल जाना पडता है।

क्रिस्टिन में स्त्रीत्व और मातृत्व पूर्ण अंश मे है। जिस समय उसके बच्चा पैदा होता है उसी समय से उसे अपने दोनों ही कर्त्तव्यों का पूर्णतः पालन करते देखा जाता है। वह अपने

---

* The Mistress of Husaby.

अव्यवस्थित पति के प्रति भक्तिभाव रखती है और अपने उदीयमान बच्चों के प्रति वात्सल्य-प्रेम। जब उसके लड़कों का विवाह हो जाता है और एर्लैण्ड के जीवन का अन्त हो जाता है, तो क्रिस्टिन संसार के झंझटों से छुट्टी लेकर एक मठ मे निवास करती है और इस प्रकार जन्म-भर दूसरों की सेवा करते हुए अन्त मे परलोकगामिनी होती है।

अण्डसेट ने मानवीय भावनाओं—आह्लाद और शोक—का मिश्रण सुन्दर रूप मे किया है। भावो की उच्चता और शब्दों की सरलता एवं सामजस्य उनकी विशेपता है। कई आलोचकों का कहना है कि उनकी बाद की रचनाएँ—विशेपतः 'हेस्टविकेन के स्वामी'* जिसके अन्तर्गत 'कुल्हाडी'† 'साँपकी बिल'‡ 'अरण्य में'§ और 'प्रतिशोधक का पुत्र'|| हैं—उपर्युक्त रचना की अपेक्षा अधिक प्रौढ़ और भावापन्न हैं। किन्तु थोड़ी-बहुत सूक्ष्म त्रुटियों के होते हुए भी इनके उपन्यासों में सजीवता और मानवीय समस्याओं का समावेश प्रशसनीय ढंग से किया गया है। इनमें मध्यकालीन इतिहास की दन्त कथाओं का आकर्पक सन्निवेश है और इन्हे क्रमपूर्वक पढ़कर पाठक लेखिका के कौशल की सराहना किये बिना नहीं रहेगे।

---

* The Master of Hestviken

† The Axe.

‡ The Snake Pit

§ In the Wilderness

|| The Son at Avenger

'हेस्टविकेन के स्वामी' मे ओलेव ऑडेन्सन नामक व्यक्ति नायक है। उसकी स्त्री का नाम है इनगन। इनगन का चरित्र क्रिस्टिन से बिल्कुल भिन्न है—उसके व्यक्तित्व और साहस में क्रिस्टिन के व्यक्तित्व और साहस से बड़ा पार्थक्य है। जिस प्रकार लावरेंस को भूखण्ड से प्रेम था वैसे ही ओलेवको समुद्र से प्रेम है। उसकी जीवन-गाथा नार्वे के व्यापारिक महोद्योगों से भरी हुई है। ओलेव के चरित्र को विकसित करने के लिये उसके साथ दूसरा पात्र ईरिक रक्खा गया है जो इनगन के पहले पति टीट से पैदा हुआ पुत्र है। ओलेव ने टीट को मारकर इनगन को प्राप्त किया था। बहुत दिनों तक आलेव अपने कुत्यों पर झॅझलाकर बेचारे दुर्बल और विक्षिप्त युवक ईरिक से घृणा करता रहा, किन्तु धीरे-धीरे समय बीतता गया और वह स्थिति आगयी जब ओलेव को पक्षाघात (लकवा) की बीमारी हो गयी और एकाकी और रुग्णावस्था मे उसके हृदय में ईरिक के प्रति स्नेह उत्पन्न होने लगा। ईरिकने ओलेवकी सेवा-शुश्रूषा करने के कारण अपनी सौतेली बहन सेसीलिया को भर्त्सना भी की थी। सेसीलिया का चरित्र लेखिका ने उसकी माँ इनगन के विपरीत चित्रित किया है। कुमारी-अवस्था में सेसीलिया को उसका बाप "प्रभात के ओसकण के समान शीतल और शुद्ध तथा सन्मार्ग से विचलित न होनेवाली" समझता था। किन्तु स्त्रीत्व प्राप्त करने और अपने पति जॉरण्ड तथा प्रणयी

एस्लाक से आकर्षित होकर उसमे वासना की आग ऐसी धधक उठती है कि वह पिता के प्रति अपने कर्त्तव्य को भूलने लगती है और प्रेम, घृणा एवं कर्त्तव्य के संघर्ष मे उसका चेहरा परिवर्तित और शोकाकुल हो जाता है। वह न कभी अपने बच्चों को खिलाती और न हँसती-बोलती है, उसके नेत्रों का सौन्दर्य जाता रहता है।

अण्डसेट के उपन्यासों मे गार्हस्थ जीवन का सुन्दर चित्रण है। गृहस्वामी, स्त्री-बच्चे, नौकर-चाकर सभी का चरित्र-चित्रण सुन्दर एवं स्वाभाविक है। सभी परिवार और समाज की भलाई के लिये कार्य करते दिखलाये गये हैं। ओलेव जब समुद्र-यात्रा करके लन्दन से लौटता है तो वह वहाँ की अपेक्षा अपने घरके सीधे-सादे जीवन मे अधिक शान्ति का अनुभव करता है। अण्डसेट के उपन्यासों मे दैनिक जीवन का विवरण अधिकता से पाया जाता है—हरे-भरे खेतों और पर्वतावलियों का वर्णन भी उनकी रचनाओं में प्रायः आता है। उनकी रचनाओं मे घटना-विकास बहुत धीरे-धीरे होता है और उन्हे धीरे-धीरे अधिक समय मे पढ़ने मे ही आनन्द आता है। उनमे आध्यात्मिकता और गिरजाघरों को काफ़ी महत्त्व दिया गया है। उनके पात्रों ने कुकृत्यों के लिये पश्चात्ताप भी खूब किये हैं। फिर भी लेखिका का यह विचार मालूम होता है कि संसार मे निष्पाप जीवन हो ही नहीं सकता, क्योंकि उन्होंने ईरिक के मुँह से एक जगह

कहलवाया है कि विना पाप किये कोई मनुष्य जीवन व्यतीत कर ही नहीं सकता।

नोबेल-पुरस्कार प्राप्त करनेवाली दोनों लेखिकाओं—सेलमा लेजरलाफ और सिग्रिड अण्डसेट में पूरा वैपरीत्य है। १९३० ई० में जब इन दोनों लेखिकाओं की दो रचनाएं—जिनके नाम क्रमशः 'लावन्सकोल्ड्स की अँगूठी' और 'प्रतिशोधक का पुत्र'—प्रकाशित हुई तो इनकी तुलनात्मक आलोचना विख्यात पत्र-पत्रिककाओं ने की—'प्रतिशोधक का पुत्र' मानवीय भूल, कष्ट-सहन, पारिवारिक प्रेम और क्षमाशीलता की कहानी है तो 'लावन्सकोल्ड्स की अँगूठी' प्रमोदमय, उत्कट कल्पनापूर्ण और आशावाद की गाथा है।

ऐतिहासिक उपन्यास लिखने मे सिग्रिड अण्डसेट ने जो सफलता प्राप्त की है, वह केवल कुछ ही लेखकों को प्राप्त होसकी है। उन्होंने दिखा दिया है कि बीसवीं शताब्दी के लोग सात सदी पहले के लोगों की भावनाओं और समस्याओं को समझने की योग्यता रखते हैं। अण्डसेट मे यह योग्यता यों ही नहीं आगयी—उन्होंने पन्द्रह वर्ष तक मध्यकालीन इतिहास का अध्ययन करके तब इस विषय पर लेखनी उठायी थी। वह यथार्थवादी और भावना-प्रवण महिला हैं और उन्होंने ऐतिहासिक चरित्र-चित्रण और तत्कालीन वातावरण का दिग्दर्शन कराने मे अपनी अद्भुत क्षमता का परिचय दिया है। अपने इन्हीं गुणों के कारण अण्डसेट को बीसवीं शताब्दी के

सर्वश्रेष्ठ लेखकों में स्थान मिला है। उनकी उन्नति आकस्मिक रूप मे और यकायक न होकर क्रमवद्ध रूप मे हुई है, यद्यपि उनकी आरम्भिक रचनाओं मे 'फ्रू मर्था आउलिन' और 'जेनी' में भी उनकी प्रतिभा झलकनी है। कुमारी लार्सेन ने उनकी प्रशंसा मे कहा है कि अण्डसेट ने जीवन-युद्ध और उसके परिवर्तनों का सुन्दर अनुभव किया है।

उनकी आधुनिककाल के विषय-प्रसंग पर की गयी रचनाओं में 'दि वाइल्ड आर्चिड' को उच्च स्थान प्राप्त है। इसके परिशिष्ट के रूप मे उन्होंने 'वर्निंग वुश' लिखी है जो उनकी नवीनतम पुस्तक है। अण्डसेट अब भी अपनी चमतकारपूर्ण लेखनी से नयी रचनाएं संसार के सम्मुख रखनेमें प्रयत्नशील है।

थामस मैन

१६२६ ई० का साहित्यिक नोबेल-पुरस्कार जर्मन लेखक थामस मैन को मिला था। यह पुरस्कार उन्हे केवल उनके एक उपन्यास पर मिला था जिसका नाम 'वुडेन ब्रुक्स' है। पुरस्कार-प्राप्ति के बहुत पहले ही यह रचना सामयिक साहित्य मे उच्च स्थान प्राप्त कर चुकी थी। इस प्रकार नोबेल-पुरस्कार के इतिहास में चौथी बार यह पारितोषिक जर्मन विद्वान को मिला। थामस मैन की प्रतिष्ठा जर्मनी के पहले तीन नोबेल-पुरस्कार-विजेताओं की अपेक्षा स्वदेश और विदेश के साहित्यिकों—आलोचकों, प्रगतिशील और पुराने लेखकों—में विशेप रूप में थी। युद्ध के वाद जर्मन भापा और साहित्यकी और यूरोप

पाठशाला मे पढ़ते समय थामस मैनकी गणना प्रायः मन्द बुद्धि के विद्यार्थियों में हुआ करती थी। उन्होंने संगीत और किम्वदन्तियों के प्रति शुरू से ही विशेप अनुराग प्रदर्शित किया था। कुत्ते पालने का शोक भी उन्हे था। पुतलियों का खेल भी इन्हे वहुत प्रिय था। उन्होंने अपनी रचनाओं—विशेपतः वुडेनव्रुक्स—में अपनी इन बाल-प्रवृतियों और अपने सुन्दर वर के चित्रण अच्छे ढंग से किये है।

जिस समय वे ल्युवेक के स्कूल मे पढ़ ही रहे थे, तभी से उन्होंने पाठशाला की मासिकपत्रिका के लिये पॉल थामस के नाम से लेख लिखकर अपनी उर्वर कल्पना-शक्ति का परिचय दिया था। १८६३ ई० से उन्होंने अपने नाम—थामस मैन—से लिखना आरम्भ किया था। उनकी पहली कविता लिपजिग की 'जेसिलशाफ्ट' नामक पत्रिका में १८६४ ई० में छपी थी। उपन्यासकार वन जाने पर भो उन्होंने कविता का लिखना बिल्कुल बन्द कभी नहीं किया।

वालक थामस की अवस्था जब पन्द्रह वर्ष की हुई तभी उनके पिता का देहान्त होगया। इसके बाद उनकी आर्थिक अवस्था पूर्ववत् सम्पन्न नहीं रही। जब वे उन्नीस वर्प के होगये तो अपनी माता के साथ म्यूनिच चले गये और वहीं रहने लगे। पारिवारिक परम्परा के अनुसार उनका व्यापारिक क्षेत्र में पड़ना आवश्यक था, किन्तु उन्होंने उस ओर कभी उत्साह नहीं प्रदर्शित किया। फिर भी धैर्य के साथ वे दिन में

अपने आग के बीमावाले आफ़िस में आधे-मन से काम करते रहे। रात को या जब कभी समय मिलता वे अध्ययन करने या लिखने में लग जाते थे। धीरे-धीरे उन्होंने शुभ-संयोग प्राप्त किया और १८९४ ई० मे पहला उपन्यास 'जेफालेन' नाम से प्रकाशित किया जिसमे इन्हे पर्याप्त आर्थिक लाभ भी हुआ। इसके बाद उन्होंने बीमे का काम छोड दिया और वे उत्सुकता-पूर्वक इतिहास, साहित्य और कला के अन्वेपण मे लग गये। इसके पश्चात् वह समय आगया जिसका स्वप्न थामस मैन देखा करते थे और जो एक अप्राप्य कल्पना-सी मालूम होती थी— यह स्वप्न था इटली देश का दर्शन। एक वर्ष तक वे इटली में आनन्द प्राप्त करते हुए अपनी कल्पना शक्ति को विवर्द्धित करते रहे। इसके बाद उनके अन्दर अपनी माता की तरह मातृभूमि-प्रेम जाग्रत हुआ और वे उत्तरी यूरोप के आकाश और समुद्र की याद करने लगे। उनकी माता उनके बचपन मे जिन दृश्यों का वर्णन किया करती थीं वे इनके लिये बड़े ही आकर्पक और सुखप्रद सिद्ध हुए। अपने पारिवारिक इतिहास के अध्ययन के फल-स्वरूप ही उन्होंने 'बुडेनब्रुक्स' लिखा। इसके बाद थामस मैन ने अपना साहित्यिक भविष्य बना लिया। 'बुडेनब्रुक्स' के जर्मन-भापा मे पचास संस्करण दस वर्प के अन्दर होगये थे और अवतक सौ संस्करण से भी अधिक हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इसके अनुवादों के भी अनेक संस्करण हो चुके हैं। इस पुस्तक का कुछ अंश इटली

में लिखा गया था। दक्षिण के सौन्दर्यमय दृश्यों को देखकर थामस मैन ने इस रचना मे उसका जो समावेश किया है, वह साहित्यकी एक स्थायी वस्तु बनगयी है। इसमे एक जर्मन परिवार की तीन पीढ़ियों का वर्णन है। इन पीढ़ियों के भावों तथा आर्थिक परिवर्तनों के संघर्ष का वर्णन बहुत ही सफल हुआ है। लगभग सत्तर वर्ष के परिवर्तन का मनोविज्ञानात्मक वर्णन थामस मैन की इस रचना में है। इसमें वर्णित प्रत्येक पात्र मे ऐसी सजीवता और विशेषता है कि किसी एक को लेकर उसकी आलोचना करना व्यर्थ है—सारी की सारी पुस्तक वर्णन-चातुर्य से पूर्ण है। पुस्तक लम्बी और घटना-विकास की न्यूनता से युक्त होते हुए भी वर्णन में सजीवता और आकर्षण से शून्य नहीं है—कहीं भी पाठक को इसमें शिथिलता और अवसाद दिखायी नहीं देता। 'बुडेनब्रुक्स' में क्रिश्चियन के शब्द स्मरणीय हैं। वे पाठकों के हृदय-पटल पर अङ्कित-से होजाते हैं। पुस्तक की दूसरी जिल्द में विगत पीढ़ी के व्यक्तियों में बड़े दिन का त्यौहार किस प्रकार मनाया जाता था, इसका रोचक वर्णन है। इसमे थामस बुडेनब्रुक की विधवा गर्डा की उस अवस्था का वर्णन पाठकों के हृदय में करुणा उत्पन्न करता है जब वह अपने पति और पुत्र से विहीन होकर अपने वृद्ध पिता के घर लौटती है। गर्डा के चरित्र को इस प्रकार का चित्रित किया गया है जिससे वह जर्मन-परिवार के लिये उपयुक्त और अनुकूल नहीं जान पड़ती।

थामस मैन की दूसरी उल्लेखनीय रचना 'कौनिगलिशे होहीट' है जिसका अंग्रेजी अनुवाद 'रायल हाईनेस' के नाम से हुआ है। इसमे जर्मन-दरबार के जीवन का सुन्दर चित्रण है। सारी पुस्तक मे सैनिक वातावरण है। इसके मुख्य पात्र क्लाज हीनरीच को प्रायः परम्परागत बातों का विरोध करना पड़ता है। इनकी साधारण रचनाओं में 'एक आदमी और उसका कुत्ता' (A Man and His Dog) विशेप उल्लेखनीय है। इसका जर्मन से अंग्रेजो मे अनुवाद १९३० ई० मे हर्मन जार्ज शेफार ने किया था। यह कुत्ते पर लिखी हुई सर्वश्रेष्ठ कहानी है। कुत्ते का नाम बाशन है जो छोटे बालो वाला सुन्दर और शिकारी श्वान है।

थामस मैन की नौ कहानियों का संग्रह 'बच्चे और मूर्ख' (Children and Fools) नाम से प्रकाशित हुआ है जिनका अनुवाद हरमैन जार्ज शेफार ने १९२८ से १९३० ई० तक किया है। इनमे पहली कहानी 'विकृति और सन्ताप' (Disorder and Sorrow) मे पारिवारिक जीवन का सुन्दर चित्रण किया गया है। इसमे पिता और बच्चों के सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध का वर्णन बड़ा ही आकर्षक है। युद्ध के पूर्व का जर्मनी संघर्ष और कठिनाइयों मे पड़कर किस प्रकार परिवर्तित हुआ है, इसका चित्र इस पुस्तक द्वारा पाठकों के सम्मुख उपस्थित हो जाता है।

थामस मैन ने अपनी सर्वोत्कृष्ट पुस्तक—The Magic Mountain (जादू का पर्वत) लिखने के पहले जीवन-

चरित्र और तत्त्वज्ञान पर निबन्ध लिखे थे। उनके 'गेटे और टाल्सटाय' नामक निबन्ध का अनुवाद १९२९ ई० मे एच० टी० लो-पोर्टर ने किया था। उन्होंने गेटे, शिलर, टॉल्सटॉय और डोस्टोव्स्की का तुलनात्मक अध्ययन करके सुन्दर निबन्ध लिखे थे।

समालोचकों ने उनके 'जादू का पर्वत' की तुलना 'पिल्ग्रिम्स प्रोगेस' और रोम्यां रोलाँ के 'जीन क्रिस्टोफ़' से की है। इसमें नागरिक सभ्यता से दूर पर्वत के अन्तराल मे विभिन्न स्त्री-पुरुषों की अवस्थाओं का वर्णन है। जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में इन लोगों के विचारों का प्रभावोत्पादक वर्णन पुस्तक मे मिलता है। हैंस कैस्टार्प नामक व्यक्ति, जो अपने एक रिश्तेदार से मिलने के लिये आल्प्स (पर्वतमाला) की यात्रा करता है और मानसिक तथा शारीरिक वाधाओं के कारण वहीं रुक जाता है, और सात दिन, सात सप्ताह, या सात मास नहीं—सात वर्ष तक नहीं लौट पाता।

लेखक ने यात्रा में आनेवाले दृश्यों का वर्णन जैसी मधुर भाषा मे किया है वह सहृदय पाठकों को मुग्ध किये बिना नहीं रह सकती। हैंस कैस्टार्प भाग्य पर भरोसा करके अपने साथियों के स्वार्थों की ओर अधिक ध्यान देने लगता है। एक असावधान युवक से हैंस एक महान विचारक बन जाता है। वह विभिन्न व्यक्तियों—वैज्ञानिक, दुरात्मा (Cynic), मानव स्वभाव के पारखी (Humanist), और

इन्द्रिय-परायण (Sensualist) की बातें सुनता है और उनके आधुनिक विचारों का सम्मिश्रण और सन्तुलन करता है।

थामस मैन प्रायः अपने म्यूनिच के घर मे ही रहते हैं और उनकी स्त्री अपने सद्गुणों द्वारा उन्हे अधिकाधिक लिखने की प्रेरणा किया करती हैं। कला और साहित्य के साथ ही उनका आधुनिक अर्थशास्त्र का ज्ञान भी बहुत विस्तृत है।

नोबेल-पुरस्कार की घोषणा हो जाने पर जिस समय थामस मैन उसे प्रथानुसार लेने के लिये स्टॉकहोम गये, तो उन्होंने अपने सलज्ज स्वभाव और देशभक्ति का परिचय दिया। उन्होंने अपने भाषण मे सम्राट् तथा अन्य उपस्थित सम्भ्रान्त व्यक्तियों को सम्बोधन करते हुए कहा कि वह कोई व्याख्यान-दाता नहीं हैं। उन्होंने यह भी कहा कि उन्हे जो पुरस्कार प्राप्त हुआ है उसे वे अपने देश और देशवासियों के चरणों मे अर्पित करते है।

हाल मे थामस मैन की कुछ और कहानियों का अंग्रेजी अनुवाद 'मेरिओ और जादूगर' (Mario and the Magician) नाम से हुआ है। यह एक कुबड़े और एक जादूगर की अनोखी कहानी है। इसमे मनोविज्ञान और नाटकीय कला का पर्याप्त सम्मिश्रण है। एक सम्मोहिनी विद्या-विशारद (Hypnotist) मेरिओ पर अपनी विद्या का प्रयोग करके उसे एक घृणित जीव से प्रेम करने के लिये विवश करता है। कहानी का अन्त दुःखपूर्ण है। इसमे व्यंग का भी

विश्लेषण है। इस कहानी का घटना-स्थल इटली है। इसमें रोमन अमीरों के चरित्र भी उत्तम रीति से चित्रित किये गये हैं।

थामस मैन ने कहानी के बहाने युद्ध के पूर्व पाश्चात्य संस्कृति की दुरवस्था और पाश्चात्यों के मस्तिष्क और आत्मा की बीमारी का मार्मिक ढंग से वर्णन किया है।

सिंकलेयर लुई

(प्रथम अमेरिकन पुरस्कार-विजेता)

अमेरिकन-साहित्य के तीन समय-विभाग किये जा सकते है—पहला वह जो औपनिवेशिक है और विद्रोह से संबंध रखता है, किन्तु जो अब बहुत अल्प परिणाम मे प्राप्य है, दूसरा वह जिसे साहित्यिक मध्यकाल का ठोस साहित्य कह सकते है और तीसरा समय-विभाग उसे कहा जा सकता है जो उन्नीसवीं सदी के अन्तिम तथा बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक दस वर्षों में लिखा गया है। इस अन्तिम अवधि मे अधिकाधिक लेखकों का प्रादुर्भाव हुआ है। यह बात नहीं है कि इस अन्तिम काल मे केवल लेखकों की संख्या ही बढ़ी हो, प्रत्युत् अभूतपूर्व लेखकों और समालोचकों ने इसे पूर्व की अपेक्षा अधिक प्रख्यात् बना

दिया है। इस अन्तिम श्रेणी के लेखकों में सिकलेयर लुई का एक खास दर्जा है। तीस वर्ष से नोबेल पुरस्कार का प्रचलन होते हुए भी अमेरिका के इस विख्यात् लेखक को १६३० ई० में पुरस्कार इसलिये प्रदान किया गया कि इस अद्वितीय लेखक की ओर समस्त संसार—विशेपतः पश्चिमी यूरोप—का ध्यान पूर्णतः आकर्पित हो गया था, और इनकी रचनाओं के अनुवाद भी अनेक भाषाओं में हो चुके थे।

सिंकलेयर लुई का जन्म सॉक सेण्टर (मिनेसोटा) में ७ फर्वरी १८८५ ई० में हुआ था। सॉक सेण्टर अमेरिका के मिडिल वेस्ट प्रदेशान्तर्गत एक गाव है जिसकी जन-संख्या ढाई हजार से अधिक नहीं है। लेखक की 'मुख्य मार्ग' (Main Steet) नामक पुस्तक में इस गाँव का वर्णन सुन्दर रीति से हुआ है। सिकलेयर लुई विशुद्ध अमेरिकन वंश के हैं। उनके पूर्वज कृषि, व्यापार और चिकित्सा आदि विभिन्न कार्य करते थे। उनके पिता भी उनके नाना की भाँति देहाती चिकित्सा का कार्य करते थे। उनके चाचा और भाई भी चिकित्सा का ही पेशा करते थे। बचपन में वे अपने पिता के साथ देहात मे घूमा करते थे और चिकित्सा-कार्य मे उनके सहायक बनकर औज़ार आदि ले जाने का कार्य करते थे।

स्कूल में उन्होंने लावेल और लागफ़ेलो की रचनाओं को पढ़ाये जाने का विरोध किया। साथ ही उन्होंने फ्रेंच और बाइबिल के जोना और ह्वेल जैसे 'सत्य' के पढ़ाये जाने का

भी कम विरोध नहीं किया। उन्होंने अन्य विद्यार्थियों की तरह आँख मूदकर वहीं पढ़ने के बदले मिनेसोटा विश्वविद्यालय मे भर्ती होने का निश्चय कर लिया और कुछ लोगों का विरोध करने पर भी दाखिल हो गये।

बाद मे पिता की आज्ञा लेकर सिकलेयर 'एल' चले गये, जहाँ वह एक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन करने लगे। वे सर्वत्र अपने सहपाठियों और साथियों से पृथक् व्यक्ति मालूम होते थे। प्रायः सभो विषयों मे उनका सब से मतभेद रहता था और उनमें समालोचना की विशेष प्रवृत्ति देखी जाती थी। ग्रेजुएट होने के पश्चात् सिकलेयर लुई ने अपने मित्रों और सहपाठियों से कहा था कि उनकी इच्छा अमेरिकन जीवन का परिचायक एक सुन्दर उपन्यास लिखने का है। ग्रेजुएट होने के पूर्व ही उन्होंने इसके लिये ज्ञान-सम्पादन आरम्भ कर दिया था। इन्होंने उपटन सिंकलेयर द्वारा सचालित हेलिकन (न्यू जर्सी) स्थित समाजसत्तावादी उपनिवेश मे भाग लिया। सचालकों ने उसे 'स्वर्ग' का नाम दे रक्खा था। किन्तु सिंकलेयर को इस सस्था से संतोष और आशातीत अनुभव नहीं प्राप्त हुआ और वे इसे छोडकर अपने एक साहित्यिक मित्र के साथ मैनहैटन मे रहने लगे। उन्होने 'लाइफ़' और 'पक' नामक पत्रिकाओं के लिये हास्यात्मक लेख लिखे जो गद्य और पद्य दोनों ही मे थे। कुछ समय तक वे 'ट्रास एटलाण्टिक टेल' नामक पत्रिका के सहकारी सम्पादक रहे। इसके पश्चात् उन्होंने जहाज द्वारा

पनामा की यात्रा करने का निश्चय किया। इसके पूर्व उन्होंने जानवरों को लेजानेवाले जहाजों पर कालेज की छुट्टियों के दिनों में इंग्लैण्ड की यात्रा की थी। उन्होंने पनामा नहर पर कोई नौकरी प्राप्त करने की चेष्टा की थी, किन्तु काम न मिलने पर 'एल' वापस आ गये। १६०८ ई० मे वे ग्रेजुएट हो गये थे।

सिंकलेयर लुई की अभिलाषा उच्च कोटि का लेखक बनने की थी। उन्होंने वाटरलू, आइवा, सेन फ्रांसिस्को और वाशिंगटन मे अनेक स्थानों पर सम्पादन-कार्य किया; पर अधिक समय के लिये वे कहीं भी नहीं ठहरे। केलीफ़ोर्निया मे वे छः मास तक विलियम रोज बेनेट के साथ रहे और उनके साथ लेखन-कार्य करते रहे, किन्तु दर्जनों कहानियों में से वे केवल अपनी 'जज' नामक आख्यायिका का स्वत्वाधिकार बेच सके और फिर न्यूयार्क लौटकर वहाँ अपनी साहित्यिक सफलता के लिये चेष्टा करने लगे।

सब से अधिक समय के लिये सिंकलेयर लुई फ्रेडरिक ए० स्टोक्स कम्पनी (न्यूयार्क) के सम्पादकीय विभाग में ठहरे। यहाँ वे कुल दो वर्ष रहे। आरम्भ में उन्हे साढ़े बारह डालर प्रति सप्ताह वेतन मिलता रहा। १६१२ ई० तक वहाँ रहकर उन्होंने सब से विशेष उल्लेखनीय सफलता यह प्राप्त की कि उनकी 'हाइक और वायुयान' (Hike and the Aeroplane) पुस्तक प्रकाशित हुई। इसके लिये आर्थर हचिस ने दोरंगे चित्र भी बनाये थे और इसका समर्पण

लेखक ने अपने सबसे पुराने मित्र एडविन और इसाबेल लुई को किया था। इसमें एक सोलह वर्षीय बालक हाइक ग्रिफिन की मनोरंक कहानी सरल और स्पष्ट भाषा मे लिखी गयी है। इसमे बालकपन और युवावस्था के अनुभवों का सुन्दर चित्रण है। इस कथानक का घटनास्थल केलीफ़ोर्निया है। हाइक एक प्रसिद्ध फुटबाल खिलाडी लडका है। उसके साथी का नाम टॉरिंगटन डर्बी था जिसका स्कूली नाम 'पूडिल' या 'पूड' भी था। ये दोनों खिलाड़ी लडके, वायुयान के अर्द्ध विक्षिप्त आविष्कर्ता मार्टिन प्रीस्ट को, उसके अधूरे हवाई जहाज को लेकर आश्चर्य मे डालदेते हैं। ये दोनों उदीयमान बालक लेफ्टिनेण्ट एडलर और हवाई बेड़े के बोर्ड को आश्चर्य-चकित कर देते हैं। ,इन दोंनो लडकों ने वायुयान के उडाने मे आविष्कर्ता को जो सहायता दी और डेढ़ सौ मील प्रति घण्टा उड़ने का जो महोद्योग किया वह वास्तव में प्रशंसनीय है। इस पुस्तक मे यह भी दिखाया गया है कि हाइक-जैसे एक पराक्रमी बालक के उद्योग से विद्रोही लोगों के आक्रमण से वार्सटन के रैंचो (Rancho) की रक्षा किस प्रकार की जा सकी। हाइक हवाई जहाज उडाकर उससे पहरा देने का काम करता है।

इस पुस्तक के पश्चात् सिकलेयर लुई ने 'एडवाचर' नामक पत्रिका का सम्पादन आरम्भ-किया और फिर वे जार्ज एच० डोरान कम्पनी के विज्ञापन-मैनेजर और एक पत्र-प्रकाशन-संस्था

के सम्पादन का कार्य करते रहे। इन दिनों उन्हें आठ घण्टे से भी अधिक काम करना पड़ता था। इतना काम करते हुए भी वे रातको या बचे हुए समय में 'हमारे श्री० रेन' (Our Mr. Wrenn) नाम उपन्यास लिखते रहे, जो १९१४ ई० मे हार्पर ऐण्ड ब्रदर्स ने प्रकाशित किया। परिपक्वावस्थाके पाठकों के लिये यह उनका प्रथम उपन्यास था। लेखक के, जानवरों को लेजानेवाले जहाज मे, इंगलैण्ड जाने का अधिकाश अनुभव इस पुस्तक में आगया है। इसमे न्यूयार्क के एक मुहर्रिर और उसके परिवर्तित भाग्य का दिग्दर्शन कराया गया है। इस पुस्तक के लिखे जाने के बाद सिंकलेयर लुई ने अपना विवाह ग्रेस लिविंग्स्टन हेगर से कर लिया। 'हमारे श्री० रेन' की साधारण सफलता से उत्साहित होकर उन्होंने दूसरे वर्ष (१९१५ ई० मे) 'दि ट्रेल आफ दि हॉक' नामक उपन्यास लिख डाला। इसका कथानक भी उसी ढंग का है जैसा बच्चों के लिये लिखी गयी 'हाइक और वायुयान' का है। इसके पश्चात् उन्होंने 'नौकरी' (The Job) नामक उपन्यास लिखा जिसमे न्यूयार्क की स्त्रियों के व्यापारिक जीवन का सफल चित्रण है।

सिंकलेयर लुई के जीवन का महत्त्वपूर्ण समय १९१५ ई० का ग्रीष्म-काल है जब वह पत्रकार और पुस्तक-सम्पादक से एक स्वतंत्र लेखक बन गये। छुट्टी के दिनों में जब वे अपनी स्त्री के साथ केप कोड का पैदल भ्रमण कर रहे थे उन्हीं

दिनों एक संक्षिप्त कहानी लिखकर उन्होंने उसे 'सैटर्डे इवनिंग पोस्ट' को, जो अमेरिका का सर्वश्रेष्ठ साप्ताहिक समझा जाता है, भेजने का निश्चय किया। उन्हे आश्चर्य हुआ, क्योंकि पहले की भाँति उपर्युक्त पत्र ने छापने से इन्कार न करके उसे छाप दिया। यही नहीं, जार्ज होरेस लॉरीमर ने उनसे और भी ऐसी कहानियाँ लिखने का अनुरोध किया। इसपर सिंक्लेयर लुई ने तीन और कहानियाँ लिख भेजीं जो तीन मास के अन्दर स्वीकृत हो गयीं। इसपर उन्होंने पत्रों और पुस्तक-प्रकाशकों के दफ्तरों मे काम करना विल्कुल वन्द कर दिया। उपर्युक्त पत्र मे ही उन्होंने धारावाहिक रूप मे 'स्वतंत्र वायु' (Free Air) नामक उपन्यास लिखना आरम्भ किया जिसमे महोद्योग की वातें प्रचुरता-पूर्वक भरी हुई है। इसमे व्यंग और श्लेप का भी अभाव नही है। इस कहानी का नायक गैरेज (मोटर किराये पर रखने का घर) किराये पर चलाता है। इसमे लेखक ने अपने उस जीवन के अनुभव का चित्रण किया है जव वे नौकरी के उम्मेदवार होकर इधर-उधर मारे-मारे फिरते थे।

जिन दिनों सिंक्लेयर लुई अपनी स्त्री के साथ भ्रमण कर रहे थे, उन्हीं दिनों उनके मन मे औपन्यासिक वनने की प्रवल अभिलापा जाग्रत हो रही थी। जाड़े के दिन उन्होंने वाशिंगटन मे काटे। यहीं ठहरकर उन्होंने 'मुख्य मार्ग' नामक उपन्यास के प्रधान अंश लिख डाले थे। अव से पन्द्रह वर्ष पूर्व कालेज

को छुट्टियों में ही उन्होंने इस उपन्यास का कथानक सोच लिया था। इसका मुख्य पात्र उन्होंने एक वकील को चुना था जिसका नाम गुई पोलक था। इस उपन्यास का दूसरा नाम उन्होंने 'दि विलेज वीरस' भी चुना था। इस कथानक का मसविदा उन्होंने तीन बार लिखा और बराबर इसके सम्बन्ध में सोचते रहे। इसके सम्बन्ध मे निरन्तर यही निश्चय करते रहे कि उन्हे यह उपन्यास अवश्य लिखना है। उन्होंने यद्यपि इस पुस्तक की अधिक बिक्री की आशा नहीं की थी; किन्तु फिर भी इसे वे अपनी उन्नति का सोपान समझते थे। एक वर्ष तक उन्होंने इसके लिखने और विकसित करने में पूर्ण परिश्रम किया। १६२० ई० के अक्टूबर मास में यह उपन्यास प्रकाशित हो गया। 'मुख्य मार्ग' (Main Street) का नायक आकर्षण और उत्सुकता का केन्द्र बन गया। दो ही मास में इसकी ५६,००० प्रतियाँ बिक गयीं—दो वर्ष में इसकी ३,६०,००० प्रतियाँ बिकीं और जर्मन, डच, स्वीडिश और फ्रेंच भाषाओं में इसके अनुवाद भी प्रकाशित हो गये।

'मुख्य मार्ग' सिंक्लेयर लुई का प्रथम महत्त्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। इसमें उन्होंने अपनी लेखन-शैली को विकसित किया है और वातावरण उपस्थित करने के लिये आवश्यक वर्णन विस्तारपूर्वक किया है। फिर भी चूँकि पुस्तक में समय-समय पर अनेक परिवर्तन और परिवर्द्धन किये गये है और यह एक बड़े अर्से के बाद तैयार हो पायी है, इसलिये इसके

ढाँचे में त्रुटियाँ रह गयी है। प्रसिद्ध समालोचक डाक्टर हेनरी सीडेल कैनबी का कहना है कि पुस्तक के ढाँचे मे अनेक स्थल कमजोर है और इसकी प्रधान नायिका के चरित्र में भी ऐसी ही त्रुटियाँ पायी जाती हैं। फिर भी अमेरिकन कस्बे का वातावरण जिस उत्तमता के साथ इसमे उपस्थित किया गया है वह पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करने की विशेप क्षमता रखता है।

इसके पश्चात् सिकलेयर ने देश के बाहर जाकर 'वैबिट' (Babbitt) लिखा। साधारणतः साहित्यिकों का इसके प्रकाशन-काल से अब तक यही मत रहा है कि 'वैबिट' ही लेखक की सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसका कथानक 'मुख्य मार्ग' के कथानक से अधिक ठोस और दृढ़ है तथा इसके सम्वाद और चरित्र-चित्रण मे भी पहले की अपेक्षा अधिक प्रगतिशीलता पायी जाती है। इस उपन्यास द्वारा लेखक ने पाठकों की क्षमता की भी परीक्षा ले डाली है, क्योंकि इसमे वर्णित व्यग और हास-परिहास सब की समझ मे नहीं आ सकते। इस पुस्तक के प्रकाशित होते ही सिकलेयर लुई का नाम देश-विदेश मे सर्वत्र फैल गया। इंग्लैण्ड के साहित्यिकों ने इनको डिकेंस, थैकरे और बालजक के जोड का लेखक माना। कुछ समालोचकों ने 'वैबिट' को 'अत्यधिक अमेरिकन' कहकर उसके चरित्र-चित्रण मे अत्यधिक स्थानीयपन होने का दोषारोपण भी किया, और यह कुछ अंशों मे ठीक भी है, क्योंकि अमेरिकन

रीति-रिवाज और स्थिति से नितान्त अनभिज्ञ पाठक, लेखक के अति-विस्तृत स्थानीय वर्णन से अवश्य उकता जायँगे—किन्तु इससे पुस्तक के महत्त्व में कमी नहीं आती—हाँ, यह अवश्य कहा जा सकता है कि यदि पुस्तक में स्थानीय वर्णन इतना अधिक न होता तो शायद अन्य देशों मे इसका और भी अधिक व्यापक रूप मे प्रचार होता।

'वैबिट' के बाद सिंकलेयर ने 'ऐरोस्मिथ' की रचना की। 'वैबिट' में जहाँ लेखक ने उसके मुख्य पात्र मि० बैबिट के साथ समय-समय पर सहानुभूति दिखायी है, वहाँ 'ऐरोस्मिथ' मे मार्टिन ऐरोस्मिथ के प्रति वे निश्चित रुख नही रख सके है। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के सामाजिक जीवन और चिकित्सकों के पेशे के प्रति भी निर्धारित मत नही प्रदर्शित कर सके है। इसमे १९२० ई० के संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का सजीव चित्रण पाया जाता है।

विदेशों का भ्रमण करके तथा सयुक्त राष्ट्र की छब्बीसों मुख्य रियासतों मे भ्रमण करने के पश्चात् सिंकलेयर लुई ने किसी छोटे नगर में बस जाने का निश्चय किया। उन्होंने हार्टफ़ोर्ट में देहात से मिलता हुआ एक मकान ले लिया और वहाँ परिचय बढ़ाने लगे—विशेपतः मजदूरों से उन्होंने बड़ी घनिष्टता करनी शुरू कर दी। दूसरा उपन्यास लिखने की इच्छा उन्हे थी, किन्तु एक विशेप प्रेरणात्मक घटना तक वे रुके रहे। एक दिन न्यूयार्क जाते हुए अपना उपन्यास लिखने का उपकरण उन्हे मिल

गया—वह एक ऐसे आदमी से मिले जिसके ढंग का प्रधान नायक वे अपने नये उपन्यास मे रखना चाहते थे। उनके इस प्रधान का नाम डाक्टर पॉल-डि-क्रूफ था। महायुद्ध के दिनों मे इस डाक्टरने अमेरिकन सेना मे डाक्टर का काम किया था। इसने गैस (विषाक्त वायु) सम्बन्धी कुछ खास आविष्कार किये थे और बाद मे रॉकफेलर इन्सटीट्यूट मे भी कई आविष्कार करने मे सफलता प्राप्त की थी। लेखक ने जिस व्यक्तित्व की कल्पना अपने मन मे की थी उसकी पूर्ति डाक्टर क्रूफ द्वारा होती थी। इसीलिये उपर्युक्त डाक्टर की सहायता से लेखक ने महामारी की चिकित्सा का वर्णन अत्यन्त सफलता के साथ किया है। इसके विभिन्न अंश क्रमशः लन्दन और फाण्टेन-ब्ली मे लिखे गये थे। इसके लिखने मे लेखक ने दिन-रात परिश्रम किया। इसकी आवृति लेखक ने तीन बार की। अन्त मे मार्ग मे जहाज पर ही वह समाप्त हुई और १९२५ ई० मे जाड़े के दिनों मे वे अमेरिका वापस गये। 'ऐरोस्मिथ' मे चरित्र-चित्रण सुन्दर हुआ है। इसमे आधुनिक धूर्त्तता का श्लेपात्मक वर्णन किया गया है और वैज्ञानिक अन्वेपण के मार्ग मे आनेवाली कठिनाइयों पर आक्रमण किया गया है। चरित-नायक की सबसे बडी अभिलाषा वैज्ञानिक उन्नति की ओर है। इन सब गुणों के होते हुए भी इस उपन्यास मे नाटकीय गुणों की प्रौढ़ता का अभाव है। इस उपन्यास मे शैल्पिक उपयोग मे आनेवाले वैज्ञानिक अन्वेषणों का जो विरोध किया गया है,

बहुत-से वैज्ञानिकतापूर्ण मस्तिष्क रखनेवाले पाठक उसे पसन्द नहीं करते। अन्तिम दृश्य में 'ऐरोस्मिथ' के वर्षों के अन्वेषण का वाह्य दुखान्त प्रदर्शित किया गया है।

'एलमर जेण्ट्री' नामक इनका बाद का उपन्यास समाज के लिय एक फोड़े के चीरने के सदृश है और वह भी कोमल अंग के फोड़े के समान। पुस्तक क्या है समाज पर भीषण प्रहार है। इस पुस्तक के लिखने के पश्चात् सिंक्लेयर की 'डाड्स्वर्थ' नामक रचना प्रकाशित हुई। इसमें सैम डाड्स्वर्थ का चरित्र चित्रित किया गया है। डाड्स्वर्थ का चरित्र बैबिट से अधिक परिष्कृत चित्रित किया गया है। वह पचास वर्ष की अवस्था में मोटर के व्यापार मे धन कमाकर अवकाश ग्रहण करके यूरोप की प्राचीन संस्कृति का आनन्द लेने का निश्चय करता है। उसके साथ उसकी स्त्री फ्रान भी होती है। उसकी स्त्री उसकी अपेक्षा दस वर्ष कम अवस्था की और पुंश्चली युवती है—साथ ही वह कुछ मन्द-बुद्धि और स्वार्थ-परायणा भी है। दोनों पति-पत्नी में प्रायः वाग्युद्ध हुआ करता है। उनके वार्तालाप से उनकी शिक्षा और परिष्कृति का पता चलता है। यूरोप के नगरों और वहाँ के समाज पर भी सिंक्लेयर ने व्यंग किया है। कई समालोचकों ने इस उपन्यास की तुलना १९३१ ई० मे प्रकाशित रट्रदर्स बर्ट के 'त्योहार' (Festival) नामक उपन्यास से, जिसमें अमेरिकन व्यापारी का चरित्र-चित्रण बडी सफलतापूर्वक किया गया है, को है। सिंक्लेयर

की अन्य कहानियों में 'मैण्ट्रप और 'कूलिज को जाननेवाला मनुष्य' (The Man Who Knew Coolidge) अधिक प्रसिद्ध हैं। ऊपर जिन चार प्रसिद्ध उपन्यासों का वर्णन किया गया है वे एक प्रकार से सामाजिक इतिहास कहे जा सकते है। इनमे सामाजिक विषयों का विश्लेषण सुन्दर रीति से किया गया है। अमेरिका की भौतिक पदार्थों की उपासना को इनमें व्यंगात्मक ढंग से चित्रित किया गया है। इन सब मे 'मुख्य मार्ग' की प्रशंसा 'बैबिट' से कुछ ही घटकर हुई है। फिर भी सिंक्लेयर लुई को समझने के लिये उनकी सभी रचनाओं को पढ़ने की आवश्यकता है।

इरिक ऐक्सेल कार्लफ़ेल्ट

(स्वीडन का गायक कवि)

१९३१ ई० का नोवेल-पुरस्कार प्रसिद्ध स्वीडिश कवि और गायक डाक्टर कार्लफ़ेल्ट को मिला। अब तक स्वीडिश एकैडमी ने जितने व्यक्तियों को पुरस्कार प्रदान किये थे, वे सभी जीवित थे और उन्होंने अपने जीवन-काल में ही पुरस्कार प्राप्त किया था, किन्तु डाक्टर कार्लफ़ेल्ट के देहान्त के पश्चात् उनके पुरस्कार की घोषणा हुई। यद्यपि १९२० ई०से ही उन्हे अनेक बार यह पुरस्कार प्रदान करनेका प्रस्ताव किया गया, किन्तु उन्होंने इसे लेने से साफ इन्कार कर दिया। इसका कारण यह था कि डाक्टर कार्लफ़ेल्ट स्वीडिश एकैडमी (पुरस्कार-दात्री समिति) के सदस्य और मन्त्री रह चुके

थे। ऐसी अवस्था में उन्होंने यह आदर ग्रहण करने से बराबर इन्कार ही किया। उनका शरीरान्त होते ही १६३१ ई० मे समिति ने उन्हे पुरस्कार दिये जाने की घोषणा कर दी और पुरस्कार की रकम उनके तीनों बच्चों के नाम कर दी। इस-पर साहित्यिक संसार ने एकैडमी के इस कार्य पर कुछ आपत्ति भी की और अल्फ्रेड नोबेल के उद्देश्यानुकूल पुरस्कार दिया गया या नहीं, इसे विवाद का विषय बना लिया गया और कहा गया कि नोबेल-महोदय का उद्देश्य यह था कि पुरस्कृत व्यक्ति धन पाकर अपने क्षेत्र मे मानव जाति की अधिकाधिक सेवा करने के लिये दत्तचित्त हों और इस प्रकार यह रकम उन्हे प्रोत्साहन के लिये दी जानी चाहिए, न कि मरे हुए व्यक्ति को पुरस्कार देकर भावी उन्नति की आशा से वञ्चित होना? यह भी प्रश्न हुआ कि यह पुरस्कार भूत काल मे की गयी सेवाओं के लिये ही होता है या भविष्य मे भी उत्तेजन या प्रोत्साहन देने के लिये? उत्तर-प्रत्युत्तर में यह बात भी कही गयी कि पहले जिन व्यक्तियों को बुढापे की मरणासन्न अवस्था मे पुरस्कार प्रदान किया गया था उनके द्वारा भी मानव जाति की और अधिक सेवा होने की सम्भावना नही थी।

कुछ भी हो, यह बात तो निर्विवाद है कि इरिक ऐक्सेल कार्लफेल्ट की काव्यमयी प्रतिभा प्रशंसनीय थी। दो दशाब्दी से वे स्वीडन के सर्वाग्रणी जीवित कवि समझे जाते थे। स्वीडन के १८६५ ई० के महान राजनीतिक परिवर्तन

और कृषक-समुदाय की अधिकार-प्राप्ति ने उस देश के साहित्य में जीवन फूंक दिया। प्राचीन संस्कृति की उच्चता के द्योतक अद्भुतालय खोले गये—तत्कालीन साहित्य के प्रकाशन में दिलचस्पी ली गयी और सेल्मा लेजरलाफ़, ऑस्कर लिवर-टिन तथा गस्टाफ़ फ्रॉडी ने संसार में उसकी ख्याति बढ़ाने मे अद्भुत कार्य किया। कार्लफ़ेल्ट ने भी अपने देश की प्राचीन संस्कृति और कृषक जीवन का चित्रण करने में अपनी कला का परिचय दिया है। पूर्णवर्ती स्वीडिश कवियों की भाँति उन्हे भी अपने कृषक-वंश और प्रकृति-शोभा-संयुक्त देश पर बड़ा गर्व था।

कार्लफेल्ट का जन्म २० जुलाई १८६४ ई० को फ़ोकारना मे हुआ था। स्थानीय स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् उन्होंने उपसाला-विश्वविद्यालय मे उच्च शिक्षा प्राप्त की। कुछ समय तक शिक्षक का कार्य करने के पश्चात् १९०३ ई० मे उन्होंने कृषि-इंस्टीट्यूट के पुस्तकालय मे पुस्तकाध्यक्ष का काम किया। वे बड़ी ही कोमल प्रकृति के थे और शांतिपूर्वक अपने उद्देश्य-पूर्ति के लिये कार्य किया करते थे। उन्होंने कभी भी सार्वजनिक जीवन मे ख्याति-प्राप्त बनाने की चेष्टा नहीं की। वे कई बार शिक्षा-सम्बन्धी कमीशनों मे चुने गये। १९०४ ई० के पश्चात् स्वीडिश एकैडमी के सदस्य हो गये। इस प्रकार उनका संसर्ग संसार के प्रमुख विद्वान आगन्तुकों और लेखकों से हो गया जिन्होंने उनकी कविताओं की

प्रशंसा की इससे उन्हे प्रर्याप्त प्रोत्साहन मिला, किन्तु अभी तक स्कैंडेनेविया के बाहर उनका नाम थोड़े ही पाठकों मे सुपरिचित था। उनकी रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद करने-वाले और उनके लिये दुभाषिये का काम करनेवाले चार्ल्स ह्वार्टन स्टॉर्क ने उनके काव्य और व्यक्तित्व दोनों ही की प्रशंसा की है।

उनकी पहली पुस्तकाकार रचना एक जिल्द मे 'प्रेम और अरण्य के गीत' (Songs of Love and Wilderness) उस समय प्रकाशित हुई थी जब कार्लफेल्ट की अवस्था इकतीस वर्ष की थी। इसमे उन्होंने अपने देश के गावों और उनके स्त्री-पुरुषों की गम्भीर भावनाओं का कलापूर्ण वर्णन किया है। १८९८ और १९०१ ई० मे इस पुस्तक की दूसरी और तीसरी जिल्दें प्रकाशित हुईं। स्टार्क का कथन है कि उनकी इन जिल्दों मे व्यक्तित्व की अपेक्षा सामूहिकता का विशेष चित्रण है—लेखक ने जनता के मनोभावों का अध्ययन करके उसे सुन्दर रूप मे प्रकट करने की चेष्टा की है।

दूसरी और तीसरी जिल्दे बाद मे 'फ्रिडोलिन का काव्य' (Fridolin's Poetry, or The Songs of Fridolin) नाम से सयुक्त रूप मे प्रकाशित हुईं। इस काव्य का नायक एक कृपक है जो प्रेमी, हँसोड़ तथा दयालु प्रकृति का आदमी है। कवि की भाँति नायक—फ्रिडोलिन—ने भी विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त की थी, किन्तु प्रौढ़ावस्था मे वह कृषि-कार्य करने

आती थी और उसमें पूरा आनन्द लेता था। वहाँ बाल्यावस्था की स्मृति उसे मुग्ध कर देती थी। कार्लफेल्ट ग्राम-जीवन का सादा किन्तु कवित्वपूर्ण वर्णन उनकी तुलना बर्न्स और टेनिसन से कराता है।

'प्रतीक्षा' (Time of Waiting) शीर्षक कविता का नमूना देखिए :—

प्रतीक्षा की सुमधुर घड़ियाँ।
विपुल जल-राशि-सदृश जातीं,
सुकोमल कलिका-सी भातीं,
जिन्हें विकसाती पखड़ियाँ। प्रतिक्षा की० ॥

× × ×

मई के दिन होते सुन्दर,
मनोहर आकर्षक मृदुतर;
बुरी एप्रिल की दुपहरियाँ। प्रतिक्षा की० ॥

× × ×

आर्द्र वन है अतिशय शीतल,
जुड़ाते हैं सबके हृत्तल,
वृक्ष करते है रँगरलियाँ। प्रतिक्षा की० ॥

नई पीढ़ी के कवियों की भाँति कार्लफेल्ट ने पद्य के साथ ही गद्य लिखने की चेष्टा नहीं की। उन्होंने नाटक भी नहीं लिखे। उनकी कविताओं की कुल छः जिल्दें प्रकाशित हुई है जिनमे से अन्तिम १९२७ ई० में प्रकाशित हुई है जिसका नाम 'पतझड़ की घंटी' (The Horn of Autumn)

है। उनकी अन्तिम कविता 'शीतकाल का वाद्य' मानी जाती है। अपने देशवासियों के आखेट और नृत्य-गान-प्रेम को भी उन्होंने भली भाँति प्रदर्शित किया है। उनमें आरम्भिक भावावेगों, प्रबल भावनाओं और हास्य-प्रेम का भी सुन्दर दिग्दर्शन कराया गया है। उनकी एक और कविता का नमूना देखिए:—

तुम्हारा जीवन है कैसा ?
कहो, क्या यह है झञ्झावात ?
वेदना का निष्ठुर सघात ?
बना है या यह अति दुर्ताप—
युद्ध के दारुण-दुख जैसा ? तुम्हारा० ॥

× × ×

हुआ है यह बुझती लौ-सा,
व्यर्थ-आशा के शैशव-सा,
सूर्य-से लड़नेवाले मेघ,
और उसके क्षण-वैभव-सा।
किन्तु है सुखी आज कैसा ! तुम्हारा० ॥

इनकी 'एजम्पशन आफ एलीजाह' शीर्षक कविता भी अत्यन्त सजीव भाषा मे लिखी गयी है।

विश्व-व्यापी महासमर से कार्लफेल्ट को भी वैसा ही दुख हुआ था जैसे अन्य बहुत-से भावुक कवियों को हुआ था। उनके काव्यमय गद्य का नमूना देखिए:—

"युद्ध मे व्यस्त मानव-मेदिनी पागलों का सा कार्य कर रही है। ऐसे जगत् को छोड़कर हमें वहाँ चलना चाहिए जहाँ हम एक

दूसरे से पहले मिले थे और देखना चाहिए कि वहाँ वसन्त ऋतु किस प्रकार आगे बढ़ रही है।…… ……तू वायु के ताज़े झोंके के सदृश है, मुझे वही स्नेह प्रदान कर जिसे मैं पहले प्राप्त कर चुका हूँ।…… मुझे कंजडों की भाँति स्वतन्त्र करके मुक्त भ्रमण करने दे। मुझे शोक और हास्य का वह सौख्य प्रदान कर जो जीवन और मृत्यु को शक्ति देता है।"

डाक्टर एक्सेल अपवाल ने डाक्टर कार्लफ़ेल्ट की कविताओं की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि कार्लफ़ेल्ट ने रूसी लेखक तुर्गनेव की भाति निर्जीव पदार्थों में भी जीवन डाल दिया है। पृथ्वी को उन्होंने 'पृथ्वी माता' के रूप में याद किया है। स्वीडिश कवि बेलमैन की भाँति उनकी रचना की प्रत्येक पंक्ति संगोतमय है।

'कैसिल अनरेस्ट' शीर्षक इनकी कविता का अंग्रेज़ी अनुवाद चार्ल्स व्हॉर्टन स्टार्क ने 'दि अमेरिकन-स्कैण्डेनेवियन रिव्यू' के अक्तूबर १९३१ ई० के अङ्क मे प्रकाशित हुआ था। 'पर्वतीय तूफ़ान' (Mountain Storm) शीर्षक कविता भी इसी पत्रिका मे जून, १९३१ ई० मे प्रकाशित हुई थी।

कार्लफ़ेल्ट ने चूंकि कविता के अतिरिक्त और कुछ नहीं लिखा और उनकी समस्त कविताओं का अंग्रेजी अनुवाद भी नहीं हुआ है अतः उनके सम्बन्ध मे विशेष कुछ लिखा नहीं जा सकता।

जॉन गॉल्सवर्दी

१९३२ ई० का नोबेल-पुरस्कार ब्रिटेन के विख्यात् औपन्यासिक और नाटककार जॉन गॉल्सवर्दी को प्राप्त हुआ था।

गॉल्सवर्दी का जन्म १४ अगस्त सन् १८६७ ई० को सरी के कूम्ब नामक स्थान में हुआ था। उनकी शिक्षा हैरो और ऑक्सफोर्ड मे हुई थी। ऑक्सफोर्ड के न्यू कॉलेज के भी वे सदस्य रह चुके थे। पहले उनकी इच्छा बैरिस्टर बनने की थी, किन्तु साहित्यिक आकर्पण के कारण वे उसमे सफल नहीं हुए और शीघ्र ही उन्होंने पुस्तक-लेखन आरम्भ कर दिया। तीस वर्प की अवस्था मे उन्होंने अपना प्रथम उपन्यास 'जोसिलिन' (Joscelyn) लिखना शुरू किया था;

[illegible] 'सम्पत्तिशाली' (The Man of Property) १९०६ ई० मे प्रकाशित हुआ। उस समय गॉल्सवर्दी की अवस्था चालीस वर्ष की हो चुकी थी। इसी उपन्यास के वाद साहित्यिक क्षेत्र में उनका नाम हुआ। वाद मे यह उपन्यास 'दि फॉर्सीट सागा' (The Forsyte Saga) के नाम से प्रकाशित हुआ। इसके नये संस्करण में एक ही जिल्द मे दो-तीन उपन्यास प्रकाशित हुए है जिनके नाम 'सम्पत्तिशाली,' 'इन चान्सरी' (In Chancery) और 'टु लेट' (To Let) है। इनके मध्य मे 'इंडियन समर आफ फ़ॉर्सीट' और 'अवेकनिंग' (जागृति) नामक दो एकाकी प्रहसन भी है। इस जिल्द की अब तक १, ३६,००० प्रतियाँ विक चुकी है। वास्तव मे इसी जिल्द में 'ऑन फ़ॉर्सीट चेञ्ज' भी जुड़ना चाहिए था। इस पुस्तक की भूमिका लिखते हुए जॉन गॉल्सवर्दी कहते है—"बहुत माँग और आलोचनाओं के पश्चात् मैं यह जिल्द पाठकों के हाथ मे दे रहा हूं।"

इनकी दूसरी प्रसिद्ध जिल्द 'ए मॉडर्न कमेडी' (आधुनिक सुखान्त) मे भी तीन उपन्यास सम्मिलित है जिनके नाम 'सफ़ेद बन्दर' (The White Monkey) 'चाँदी का चम्मच (The Silver Spoon) और 'हंस-गान' (Swan Song) है। उनके मध्य मे भी दो एकाकी प्रहसन 'मूक प्रेम' (A Silent Wooing) और 'बटोही' (Passersby) है। 'हस-गान' के बाद गॉल्सवर्दी ने युद्ध के पूर्व की

सामाजिक अवस्था से युक्त वर्णन लिखकर फॉर्सीट के नाटक को पूरा किया था।

१६१० ई० मे जब उनका 'न्याय' (Justice) प्रकाशित हुआ तो उनका नाम आधुनिक नाटककारों की प्रथम श्रेणी में आ गया। इंसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिया में उन्हे ऐसा पहला अंग्रेज नाटककार लिखा गया है जिनका नाटकीय सम्वाद स्वाभाविकता-पूर्ण है और जिनकी शैली बर्नार्ड शॉ की शैली से मिलती-जुलती है। किन्तु हम इंसाइक्लोपीडिया के विद्वान् सम्पादकों के इस अन्तिम कथन से सहमत नहीं है कि उनकी सम्वाद-प्रणाली बर्नार्ड शॉ की सम्वाद-प्रणाली से मिलती है। इंग्लैण्ड-जैसे प्रोपेगैण्डा-प्रधान देश मे रहकर ही जान गाल्सवर्दी ने ख्याति प्राप्त की, और इसी कारण उन्हे नोबेल-पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। अन्य देश के ऐसे लेखक को कदाचित यह पुरस्कार कभी न मिलता। गाल्सवर्दी जैसे लेखक है, उसका परिचय पाठकों को उनकी हिन्दी मे अनूदित पुस्तकें* पढकर जान सकते हैं। कुछ भी हो, जॉन गाल्सवर्दी थे एक परोपकारी वृत्ति के मनुष्य और उन्होंने अपनी उदारता का परिचय अनेक वार दिया है।

उनकी रचनाओं मे यह विशेषता अवश्य है कि उन्होंने नैतिक और चारित्रिक दृष्टिविन्दु से कभी कुछ ऐसा नहीं लिखा

---

*हिन्दुस्तानी एकैडमी प्रयाग द्वारा प्रकाशित 'हडताल' और 'चाँदी की डिबिया' नामक इनके दो अनुवाद छप चुके हैं।

पंक्ति भी आपत्तिजनक कही जा सके। १९२९ ई० ‘सर’ की उपाधि मिल रही थी; पर उन्होंने यह पदवी स्वीकार नहीं की। वास्तव में उन्हे पुरस्कार ‘फ़ॉर्सीट सागा’ के लिये मिला है जो उनकी सर्वश्रेष्ठ और उच्चकोटि के साहित्य में स्थान पाने योग्य रचना है।

इनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है :—

विलियम हीनमैन लिमिटेड (लन्दन) द्वारा प्रकाशित—

१ दि आइलैण्ड फैरिसीज (The Island Pharisees)
२ दि कंट्री हाउस (The Country House)
३ फ्रैटर्निटी (Fraternity)
४ दि पैट्रीशियन (The Patricion)
५ दि डार्क फ्लावर (The Dark Flower)
६ दि फ्री लैण्ड्स (The Free Lands)
७ बियोण्ड (Beyond)
८ फाइव टेल्स (Five Tales)
९ सेण्ट्स प्रोग्रेस (Saint's Progress)
१० दि फोर्साइट सागा (The Forsyte Saga)
११ दि माडर्न कॉमेडी (The Modern Comedy)
१२ कारावान (Coravan)
१३ कैपचर्स वर्सेज ओल्ड ऐण्ड न्यू (Coptures Verses Old and New)
१४ एड्रेसेज इन अमेरिका(Addresses in America)

१५ मेमरीज (Memories)

१६ मेड-इन-वेटिंग (Maid-in-Waiting)

१७ फ्लावरिंग वाइल्डरनेस(Flowering Wilderness)

१८ ओवर दि रिवर (Over the River)

इनके अतिरिक्त इनके सारे नाटक एक या आठ जिल्दों मे भी प्रकाशित हुए हैं जो डकवर्थ ऐण्ड कम्पनी लन्दन से प्राप्त हो सकते हैं।

आइवन अलेक्सीविच बुनिन

रूसी लेखक आइवन अलेक्सीविच बुनिन को १९३३ ई० मे नोबेल-पुरस्कार प्रदान किया गया था। सोवियट रूस के एक साहित्यिक को पहले-पहल ही यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि उसे स्विस एकैडमी ने पुरस्कार प्राप्त करने के योग्य समझा। यह बात निस्सन्देह कही जा सकती है कि रूसका साहित्य और उसके लेखकों की प्राच्य एवं पाश्चात्य विचार-धाराओं से युक्त भावनाए बहुत पहले से ही संसार में बेजोड़ रही हैं, किन्तु नोबेल-महोदय के वसीमतनामे मे 'आदर्शयुक्त' साहित्य पर पुरस्कार देने का जो उल्लेख है उसका अर्थ एकैडमी ने यही लगाया था कि जिन रचनाओं में आध्यात्मिकता और धार्मिकता की पुट न हो उन्हे आदर्शयुक्त नहीं कहा जा सकता। इसी कारण रूसकी इतने दिनों तक उपेक्षा की गयी। वैसे तो पुश्किन, टॉल्सटाय, तुर्गनेव, चेखव और

गोर्की के मुक़ाबले के लेखक संसार में उत्पन्न हुए या नहीं, यह साहित्यिकों मे विवादास्पद बात है, फिर भी उनकी रचनाओं को एकैडमी ने पुरस्कार युक्त योग्य समझा और रूस की ओर ध्यान ही नहीं दिया। रूस ही क्यों, पश्चिमी यूरोप के देशों को छोड़कर अन्य देशों को यह पुरस्कार बहुत कम मिला है। अमेरिका और भारत को यह पुरस्कार एक ही वार मिला और चीन को—जिसमे आदर्शयुक्त साहित्य उत्पन्न करने की एक विशेषता है—एक बार भी नहीं। आरम्भ मे तो पश्चिमी यूरोप के मिशनरी लेखकों का ही इस पुरस्कार पर एकाधिकार-सा रहा है। धीरे-धीरे साहित्यिक आलोचकों की आलोचनाओ के कारण इसे कुछ-कुछ असकीर्ण बनाया जाने लगा है। फिर भी ससार मे इस समय ऐसे लेखकों का समूह विद्यमान है जो पुरस्कार-प्राप्त लेखकों से आदर्शवाद, तथ्यवाद और कला की दृष्टि से कहीं आगे है।

आइवन अलेक्सीविच का जन्म १० अक्तूबर सन १८७० ई० मे वोरोनेश नामक स्थान मे हुआ था। उनकी रचनाओं मे उनकी ख्याति का कारण हैं उनकी कविताएं। अपनी श्रेष्ठ कविताओं के कारण इसके पूर्व भी उन्हे रूस का 'पुश्किन-पुरस्कार' प्राप्त हुआ था जो उस देश का सर्वोच्च साहित्यिक पारितोषिक माना जाता है।

बुनिन-महोदय को अंग्रेज़ी कविताओं से बड़ा प्रेम है। उन्होंने लागफ़ेलो, बॉयरन और टेनिसन की सुन्दर रचनाओ

ओं अनुवाद रूसी भाषा में किया है। उन्होंने कविताओं के अतिरिक्त सुन्दर यथार्थवादपूर्ण उपन्यास भी लिखे है। उनके उपन्यासों का अंग्रेजी अनुवाद हो चुकने के कारण वे इङ्गलैण्ड मे पहिले ही प्रख्यात हो चुके थे। उनके कथा-साहित्य में 'सेनफ्रासिस्को के सज्जन'(The Gentleman From San-Fransisco) 'ग्राम' (The Village) 'दि वेल आफ़ डेज' (The Well of Days) 'और पन्द्रह आख्यायिकाए'(Fifteen Tales) अधिक प्रसिद्ध हैं। इनकी समालोचकाएँ पत्रों मे प्रकाशित हुई है जिनमे इनके गुण-दोषों का विवेचन सुन्दर रीति से किया गया है।

रूस मे राज्यक्रान्ति होने के बाद से बुनिन फ्राँस में रहने लगे है। बुनिन की कविताए गीति-काव्य न होकर वर्णनात्मक है—किन्तु उनमे जीवन, सामंजस्य और सादगी इतनी अधिक है कि उनकी गणना उच्चतम कोटि की कविताओं मे हो सकती है। उनमें बारीक पर्यवेक्षण और अनुभूति पूर्णतः सन्निविष्ट है।

बुनिन के उपन्यासों में सीधे-सादे तौरपर रूसी चरित्र-चित्रण किया गया है। उनमे रूसी जीवन के दोनों—उत्तम और निकृष्ट—पहलू दिखलाये गये हैं। लगभग इनकी सभी रचनाएँ दुखान्त है। उनकी 'वसन्त का सायंकाल (An Evening in the Spring) और 'चाग का स्वप्न और अन्य कहानियाँ' भी उल्लेखनीय आख्यायिकाएँ है।

लिगी पिरांडेलो

[इटैलियन नाटककार और औपन्यासिक]

१६३४ ई० का नोबेल-पुरस्कार इटली के नाटककार एवं औपन्यासिक सिनोर लिगी पिराडेलो को मिला है।

पिराण्डेलो का जन्म २८ जून १८६७ ई० में सिसिली में गिरीगेण्टी के निकवर्ती एक गाँव में हुआ था। १६ वर्ष की अवस्था में वे रोम गये थे और १८६१ ई० तक वहीं रहकर पढ़ते रहे। १८६१ ई० में वे जर्मनी गये और वहाँ के बोन विश्वविद्यालय से तत्त्वज्ञान की डिग्री प्राप्त की। जर्मनी से वापस आकर पहले-पहल उन्होंने रोम में कन्या पाठशाला के अध्यापक के रूप में काम किया और १६२३ ई० तक वहीं कार्य करते रहे। अध्यापन-कार्य करते हुए उन्होंने कुछ

त्यिक' निबन्ध लिखे जो १८८६ ई० में 'माल जियोकोण्डो' नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हो गये।

उनका पहला उपन्यास 'लिसलुसा' इनके एक मित्र के आग्रह पर १८६४ ई० में प्रकाशित हुआ, किन्तु उसमें चूँकि कुछ कठोर-सत्य था अतः वह बहुत प्रसिद्ध नहीं हो सका। उन्होंने संक्षिप्त कहानियों का लिखना भी आरम्भ कर दिया था; किन्तु उनकी ख्याति तबतक नहीं हुई जबतक कि उन्होंने 'इल फु मटिया पास्कल' नामक उपन्यास नहीं प्रकाशित कर दिया। यह एक आदमी की ऐसी असाधारण कहानी है जो अपने आदमियों पर यह प्रकट करता है कि वह मर गया है और फिर वह एक नये क्षेत्र में नये ढंग और परिवर्तित नाम से काम करना आरम्भ करता है जिसका परिणाम यह होता है कि अन्त में उसे असफलता का सामना करना पड़ता है।

पिराण्डेलो ने १६१२ ई० में नाटक लिखना आरम्भ किया था। उनका विचार है कि नाटक लिखना उपन्यास और कहानियों की अपेक्षा अधिक स्वाभाविक है। नाटक लिखने में उन्हे सफलता भी शीघ्रतापूर्वक मिली। उनके नाटकों में मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों का चित्रण विशेष रूप से है। आरम्भ में कुछ समालोचकों ने इनके नाटकों में जीवन का यथार्थ रूप चित्रित न करने का आक्षेप किया था। १६२५ ई० से रोम में पिराण्डेलो का एक अपना थिएटर हाल है। इंग्लैण्ड में भी ये एक बार अपने नाटकों का अभिनय सफलतापूर्वक करा चुके हैं।

उनकी रचनाओं में से मुख्य-मुख्य का अनुवाद अनेक भाषाओं में हो चुका है। अंग्रेजी में उनके उपन्यासों में 'शूट' (दागो ।) 'और पुराना और नया' (The Old and the New), नाटकों मे 'तीन नाटक' (Three Plays) तथा 'तीन और नाटक' (Three Further Play) अधिक प्रसिद्ध है।

समाप्त